Centre for Distance & Online Education
(CDOE)

Bachelor of Arts

(B.A.Ist year)
Political Science SEMESTER- 1

C24POL101T

Principles of Political Science

DISCIPLINE SPECIFIC COURSE (DSC)

Guru Jambheshwar University of Science & Technology
HISAR-125001

C24POL101T
(Principles of Political Science – I)

Sr. No.	Title Name	Author & Updated
1	Unit-1 अध्याय - 1 राजनीति विज्ञानः अर्थ, प्रकृति, क्षेत्र एवं महत्व Meaning, Nature, Scope and Significance of Political Science	Dr Rajiv Verma
2	अध्याय - 2 राजनीति विज्ञान का अन्य सामाजिक विज्ञानों (दर्शनशास्त्र, इतिहास, अर्थशास्त्र एवं समाजशास्त्र) से संबंध Relationship of Political Science with Philosophy, History, Economics and Sociology	Dr Rajiv Verma
3	Unit-2 अध्याय - 3 राज्यः अर्थ, परिभाषा एवं आवश्यक तत्व State: Meaning, Definition and Elements	Dr Rajiv Verma
4	अध्याय - 4 राज्य की उत्पत्ति एवं विकास के सिद्धांत (दैवीय उत्पत्ति, शक्ति, सामाजिक समझौता और विकासवादी सिद्धांत) Theories of Origin and Development of the State (Divine Origin, Force, Social Contract and Evolutionary Theory)	Dr Rajiv Verma
5	Unit-3 अध्याय - 5 राज्य के कार्य Functions of the State	Dr Rajiv Verma
6	अध्याय - 6 राज्य एवं अन्य संस्थाएं: राज्य और समाज, राज्य और सरकार, तथा राज्य और राष्ट्र State and Other Institutions: State and Society, State and Government, and State and Nation	Dr Rajiv Verma
7	Unit-4 अध्याय - 7 संप्रभुताः अर्थ, प्रकार एवं मुख्य विशेषताएं Sovereignty: Meaning, Types and Main Characteristics	Dr Rajiv Verma
8	अध्याय - 8 संप्रभुता के सिद्धांतः एकलवादी एवं बहुलवादी सिद्धांत Theories of Sovereignty: Monistic and Pluralist Theories	Dr Rajiv Verma

Unit-I

अध्याय–1

राजनीति विज्ञान का अर्थ, प्रकृति, क्षेत्र एवं महत्व

SUBJECT : POLITICAL SCIENCE, SEMESTER-1	
COURSE CODE : C24POL101T	AUTHOR: DR. RAJIV VERMA
LESSON NO : 1	
राजनीति विज्ञान का अर्थ, प्रकृति, क्षेत्र एवं महत्व (Meaning, Nature, Scope and Significance of Political Science)	

1.1 अधिगम उद्देश्य (Learning objectives)

1.2 प्रस्तावना (Introduction)

1.3 अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main prints of text)-

1.3.1 राजनीति विज्ञान का अर्थ (Meaning of political science)

1.3.2 राजनीति विज्ञान शब्द की उत्पत्ति (Origin of the word Political Science)

1.3.3 राजनीति विज्ञान की परिभाषाएं (Definitions of political science)

1.3.4 राजनीति शास्त्र की प्रकृति (Nature of political science)

1.3.5 राजनीति विज्ञान का अध्ययन क्षेत्र (Scope of political science)

1.3.6 राजनीति विज्ञान का महत्व (Significance of political science)

1.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main body of the text)-

1.4.1 राजनीति विज्ञानः एक परिचय (Political science: An Introduction)

1.4.2 परंपरागत बनाम आधुनिक दृष्टिकोण (Traditional vs Modern Approaches)

1.4.3 राजनीति विज्ञान एक विज्ञान है (Political science is a Science)

1.4.4 राजनीति विज्ञान एक विज्ञान नहीं है (Political science is not a science)

1.4.5 राजनीति विज्ञान उक कला भी है (Political science is an Art also)

1.5 अपनी प्रगति जांचे (Check your progress)-

1.6 सारांश (Summary)

1.7 सूचक शब्द (Key words)

1.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

1.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

1.10 संदर्भ ग्रंथ/निर्देशित पुस्तकें (References/Suggested Readings)

1.1 अधिगम उद्देश्य (Learning objectives)-

इस अध्याय में निम्नलिखित विषयों के बारे में बताया गया है–

राजनीति विज्ञान के अर्थ एवं परिभाषा का स्पष्टीकरण करना।

विषय की वैज्ञानिक एवं कलात्मक प्रकृति को समझना।

विषय के अध्ययन क्षेत्र (Scope) का निर्धारण करना।

परम्परागत और आधुनिक दृष्टिकोणों का तुलनात्मक अध्ययन।

राज्य, सरकार ओर राजनीतिक संस्थाओं का बोध

समकालीन विश्व और नागरिक जीवन में विषय के महत्व का मूल्यांकन।

1.2 प्रस्तावना (Introduction)

मानव एक सामाजिक एवं राजनीतिक प्राणी है और उसका जीवन विभिन्न संस्थाओं तथा संबंधों से जुड़ा होता है। इन्हीं संबंधों और संस्थाओं के अध्ययन को व्यवस्थित रूप से समझने के लिए राजनीतिक विज्ञान का विकास हुआ। राजनीति विज्ञान समाज विज्ञान की वह महत्वपूर्ण शाखा है, जो राज्य, सरकार, शक्ति, अधिकार तथा नागरिकों के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन करती है। अरस्तू के अनुसार, ''राजनीति विज्ञान सर्वोच्च विज्ञान है, क्योंकि यह मानव के सर्वोत्तम जीवन की प्राप्ति से संबंधित है।'' प्राचीन काल में राजनीति नगर राज्यों तक सीमित थी, परंतु समय के साथ इसका स्वरूप व्यापक हो गया और आज यह समाज के आर्थिक, सामाजिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों से जुड़ गई है। इसी कारण राजनीतिक विज्ञान का अध्ययन अधिक विस्तृत और जटिल हो गया है।

परंपरागत दृष्टिकोण राजनीति विज्ञान को राज्य एवं सरकार के संस्थागत अध्ययन तक सीमित करता है, जबकि आधुनिक दृष्टिकोण इसे शक्ति–संबंधों, प्रभाव–प्रक्रियाओं तथा निर्णय–निर्माण के विश्लेषण के रूप में देखता है। इसी कारण इसकी प्रकृति विज्ञान एवं कला दोनों मानी जाती है। समय के साथ इसके

अध्ययन–क्षेत्र में विस्तार होकर राजनीतिक दल, दबाव, समूह, जनमत, निर्वाचन व्यवहार तथा अंतर्राष्ट्रीय संबंध भी सम्मिलित हो गए है। वर्तमान युग में यह विषय नागरिकों में राजनीतिक चेतना उत्पन्न कर उत्तरदायी एवं सशक्त समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

1.3 अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main points of text)-

1.3.1 राजनीति विज्ञान का अर्थ (Meaning of political science)

राजनीति विज्ञान के जनक अरस्तू (Aristotle) के अनुसार मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। यह अनादि काल से समाज में रहता आ रहा है क्योंकि समाज में रहकर ही मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। समाज में रहकर ही वह अपना सम्पूर्ण विकास कर सकता है। जिस व्यक्ति को समाज की आवश्यकता नहीं होती है वह, या तो कोई पशु–तुल्य असभ्य प्राणी हो सकता है या फिर देवता–तुल्य सभ्य एवं सुसंस्कृत मनुष्य।

मनुष्य एक सामाजिक जीव होने के साथ–साथ एक विवेकशील जीव भी है। वह अपने चारों ओर व्यापक प्राकृतिक एवं सामाजिक जगत के विषय में जानने का जिज्ञासु होता है। इसी जिज्ञासा के कारण ही विभिन्न विषयों का जन्म हुआ है। यदि प्राकृतिक विज्ञान (Natural Science) उसे प्रकृति के बारे में ज्ञान उपलब्ध कराते हैं तो सामाजिक विज्ञान इस समाज के बारे में ज्ञान प्रदान करता है। राजनीति विज्ञान, सामाजिक विज्ञान का वह भाग है जो मनुष्य को राज्य एवं सरकार के बारे में जानकारी प्रदान करता है। राजनीति विज्ञान का जन्म प्राचीन यूनानी विद्वान प्लेटो एवं उसके शिष्य अरस्तू के समय में ही हो गया था। तब यह विषय 'राजनीति' के नाम से जाना जाता था। अरस्तू ने 'राजनीति' को 'सर्वोच्च विज्ञान' (Master Science) की संज्ञा दी है।

1.3.2 राजनीति विज्ञान शब्द की उत्पत्ति (Origin of the word Political Science)

राजनीति विज्ञान या राजनीति शास्त्र का आधार ''राजनीति'' अर्थात 'पॉलिटिक्स (Politics) शब्द है। अंग्रेजी भाषा के 'पॉलिटिक्स' शब्द की उत्पत्ति यूनानी भाषा के 'पोलिस' (Polis) शब्द से हुई है जिसका उस भाषा में अर्थ होता है 'नगर राज्य' (city state)

प्राचीन यूनान (Greece) में समाज छोटे–छोटे नगर–राज्यों (Polis) में विभक्त था। प्रत्येक नगर–राज्य अपने आप में एक स्वतंत्र राजनीतिक इकाई होता था, जिसके अपने कानून, प्रशासन, सेना और शासन

प्रणाली होती थी। एथेंस और स्पार्टा इसके प्रमुख उदाहरण थे। धीरे–धीरे राज्यों के स्वरूप में परिवर्तन होता गया और उसके आकार व कार्यों में परिवर्तन आ गया। नगर–राज्यों का स्थान बड़े और संगठित राष्ट्रीय राज्यों (Nation-state) ने ले लिया। राष्ट्रीय राज्यों से संबंधित विभिन्न पहलुओं के अध्ययन करने वाले विषय को राजनीति विज्ञान या राजनीति शास्त्र कहते है।

1.3.3 राजनीति विज्ञान की परिभाषाएं (Definitions of political science)

राजनीति विज्ञान की समस्त परिभाषाओं को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं–

(क) परम्परागत परिभाषाएं

(ख) आधुनिक **परिभाषाएं**

(क) परम्परागत परिभाषाएं– राजनीति विज्ञान की परंपरागत परिभाषा से हमारा अभिप्राय उन परिभाषाओं से है जिसमें राज्य, सरकार एवं राजनीतिक संस्थाओं के अध्ययन पर बल दिया जाता है–

1 जेम्स डब्ल्यू गार्नर के अनुसार, ''राजनीति विज्ञान का प्रारम्भ और अंत राज्य के साथ होता है।''

2 लॉर्ड एक्टन के अनुसार, ''राजनीति विज्ञान राज्य एवं इसके विकास के लिए आवश्यक दशाओं से सम्बन्धित है।''

3 जे. के. ब्लंट्शली के अनुसार, ''राजनीति शास्त्र वह विज्ञान है जिसका संबंध राज्य से है और जो राज्य के आधारभूत तत्व तथा उसका आवश्यक स्वरूप क्या है, उसकी किन विविध रूपों में अभिव्यक्ति होती है तथा उसका विकास कैसे हुआ है, समझने का प्रयास करता है।''

(ख) आधुनिक परिभाषाएं– राजनीति विज्ञान के आधुनिक आधार के लेखक इसको 'शक्ति', 'सत्ता', 'प्रभाव', 'नियंत्रण' एवं मूल्यों के अध्ययन के रूप में परिभाषित करते हैं।

1 रॉबर्ट डहल के अनुसार, ':'राजनीति शास्त्र का विश्लेषण शक्ति तथा सत्ता से सम्बन्धित है।''

2 डेविड ईस्टन के अनुसार, ''राजनीति शास्त्र सामाजिक मूल्यों के अधिकारिक निर्धारण का अध्ययन है, जिसमें नीति, सत्ता तथा समाज प्रमुख है।''

3 लासवैल तथा कैपलिन के शब्दों में, ''एक आधुनिक खोज के रूप में राजनीति शास्त्र शक्ति के निर्धारण और सहभागिता का अध्ययन है।''

1.3.4 राजनीति विज्ञान की प्रकृति (Nature of political science)-

राजनीति विज्ञान एक ऐसा विषय है जो मानव के राजनीतिक जीवन, उसके व्यवहार और शासन व्यवस्था को समझने का प्रयास करता है। समय के साथ इसके स्वरूप में परिवर्तन आया है, जिसके कारण इसकी प्रकृति को अलग–अलग रूपों में समझा जा सकता है जो इस प्रकार से है–

1 विज्ञान और कला का समन्वय (Synthesis of Science and art) यह विषय तथ्यों और आंकड़ों का अध्ययन वैज्ञानिक तरीके से करता है लेकिन साथ ही यह आदर्शों, मूल्यों और नैतिकताओं से भी जुड़ा होता है इसलिए इसे विज्ञान और कला माना जाता है।

2 यथार्थ और आदर्श का संतुलन (Balance of Reality and Ideal) राजनीति विज्ञान एक ओर वास्तविक राजनीतिक परिस्थितियों, नीतियों और घटनाओं का विश्लेषण करता है। इसके साथ ही यह एक बेहतर शासन और आदर्श समाज की कल्पना भी प्रस्तुत करता है। इससे न केवल वर्तमान को समझने में मदद मिलती है बल्कि भविष्य के लिए दिशा भी निर्धारित होती है।

3 परिवर्तनशील एवं गतिशील (Changeable and dynamic) राजनीति विज्ञान हमेशा बदलता रहता है, क्योंकि समाज और परिस्थितियां भी बदलती रहती हैं नई नीतियां, विचार और घटनाएं भी इसके स्वरूप को प्रभावित करती रहती है।

4 व्यवहारवादी दृष्टिकोण का प्रभाव (Impact of Behavioural Approach)- आधुनिक काल में राजनीति विज्ञान सिर्फ संस्थाओं के अध्ययन तक सीमित नही है बल्कि इन सीमाओं को पार करते हुए राजनीतिक व्यवहार, जनमत, नेतृत्व, मतदान प्रवृत्तियों तथा समूह गतिशीलता (Gropu Mobilisation) जैसे पहलुओं को भी इसने अपने अध्ययन में शामिल किया है। इससे यह विषय अधिक यथार्थपरक और व्यावहारिक बन गया है।

5 अंतः विषय एवं समग्र दृष्टिकोण (Interdisciplinary and holistic approach) राजनीति विज्ञान का संबंध समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, इतिहास और मनोविज्ञान जैसे विषयों से है। समाजशास्त्र से समाज और उसके समूहों को समझने में मदद मिलती है। अर्थशास्त्र से नीतियों और संसाधनों के बंटवारे की जानकारी मिलती है। इतिहास से वर्तमान व्यवस्था के विकास का पता चलता है, और मनोविज्ञान से लोगों के सोचने ओर व्यवहार करने के तरीके को समझा जा सकता है। इन विषयों की सहायता से

राजनीति के सामाजिक, आर्थिक, ऐतिहासिक और व्यावहारिक पक्षों को बेहतर तरीके से समझा जा सकता है।

6 व्यापक एवं विस्तृत क्षेत्र (Vast and extensive field)- आज के समय में राजनीति विज्ञान का दायरा अत्यंत विस्तृत हो गया है। इसमें न केवल राष्ट्रीय राजनीति, बल्कि अंतर्राष्ट्रीय संबंध, वैश्विक संगठन और विश्व स्तर की समस्याएं भी शामिल हो गई है, जिससे इसका महत्व और बढ़ गया है।

7 नागरिक चेतना और लोकतांत्रिक सुदृढ़ता (Civic consciousness and democratic strength)- राजनीति विज्ञान नागरिकों को उनके अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक बनाता है तथा उन्हें लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में सक्रिय भागीदारी के लिए प्रेरित करता है। इससे एक सशक्त, उत्तरदायी और जागरूक समाज का निर्माण संभव होता है।

8 निर्णय प्रक्रिया पर आधारित दृष्टिकोण (Decision making based approach) - राजनीति विज्ञान यह समझने में मदद करता है कि समाज और सरकार में निर्णय कैसे लिए जाते हैं। यह विषय यह भी स्पष्ट करता है कि विभिन्न संस्थाओं और समूहों की भूमिका से नीतियां कैसे बनती है तथा उनका प्रभाव लोगों के जीवन पर किस प्रकार पड़ता है।

निष्कर्ष– (Conclusion)- इस प्रकार राजनीति विज्ञान की प्रकृति व्यापक और बहुआयामी है जो मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं को समझने में सहायक होती है। यह विषय केवल शासन प्रणाली तक सीमित न रहकर समाज, व्यवहार और शक्ति संबंधों को भी स्पष्ट करता है। यह नागरिकों को जागरूक बनाकर उन्हें लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में भाग लेने के लिए प्रेरित करता है। इस तरह से राजनीति विज्ञान एक सुदृढ़, संतुलित और संतुलित समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

1.3.5 राजनीति विज्ञान का अध्ययन क्षेत्र (Scope of political sciences)

किसी विषय के क्षेत्र से हमारा अभिप्राय इस बात से है कि उस विषय के अंतर्गत किन–किन बातों का अध्ययन किया जाता है। राजनीति विज्ञान के क्षेत्र से तात्पर्य यह है कि इसके अंतर्गत किन विषयों या बातों का अध्ययन किया जाता है। राजनीतिक विज्ञान के क्षेत्र का अध्ययन निम्नलिखित प्रकार से अध्ययन किया जाता है–

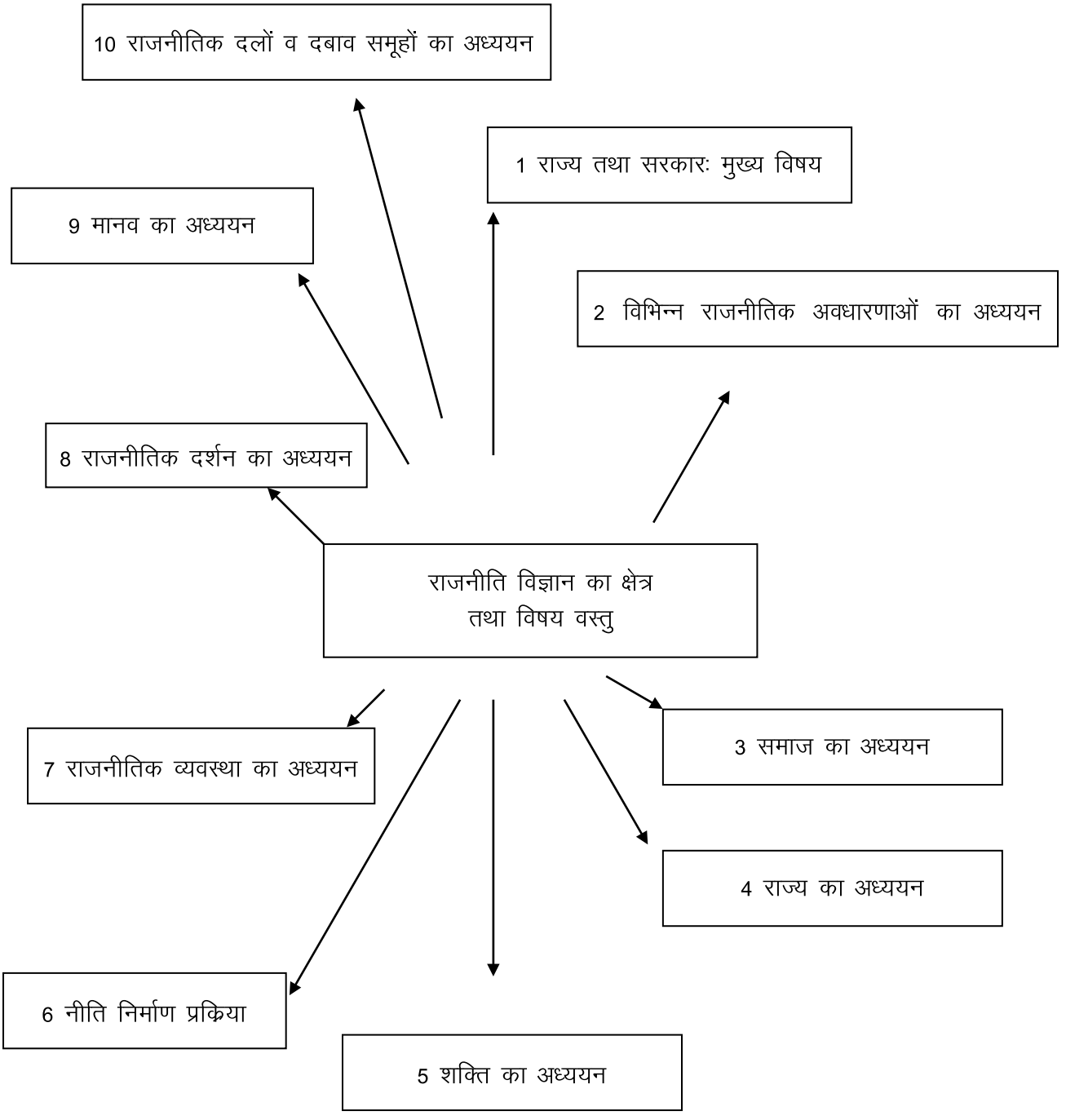

उपरोक्त का वर्णन निम्न प्रकार से हैः–

1 राज्य एवं सरकार मुख्य विषय (State and government core subject)- राज्य तथा सरकार राजनीतिक सिद्धांत के अध्ययन के मुख्य विषय है। राजनीति विज्ञान की समस्त मशीनरी राज्य के इर्द–गिर्द ही घूमती है। राज्य के केवल वर्तमान स्वरूप का ही नहीं बल्कि अतीत तथा भविष्य के स्वरूप का अध्ययन भी राजनीतिशास्त्र में किया जाता है। राज्य क्या था? क्या है? तथा कैसा होना चाहिए? यह एक संस्था है, इसलिए राज्य के नाम पर सारा कार्य सरकार द्वारा किया जाता है। इसलिए राज्य के साथ–साथ सरकार का अध्ययन भी राजनीति विज्ञान में किया जाता है।

2 विभिन्न राजनीतिक अवधारणाओं का अध्ययन (Study of Various Political concepts)- राजनीतिक अवधारणाओं का निर्माण तथा अध्ययन राजनीति सिद्धांत के माध्यम से किया जाता है। ये राजनीतिक अवधारणाएं राजनीतिक घटनाओं, संस्थाओं तथा व्यवहार को समझने में हमारी सहायता करती है। इन राजनीतिक अवधारणाओं में राज्य तथा सरकार के अतिरिक्त अधिकार तथा कर्तव्य, समानता, स्वतंत्रता, न्याय, शक्तियों का पृथक्करण, आधुनिकीकरण, समाजीकरण, सामाजिक न्याय, लोकतंत्र तथा नौकरशाही आदि अवधारणाओं का अध्ययन, राजनीतिक विज्ञान के अंतर्गत किया जाता है।

3 समाज का अध्ययन (Study of society)- यूनान के दार्शनिक अरस्तू का कथन है कि व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है। कोई भी व्यक्ति समाज के बिना नहीं रह सकता। राजनीतिक सिद्धांत समाज के स्वरूप को समझने के उद्देश्य से इसका अध्ययन करता है।

4 राज्य का अध्ययन (Study of State)- राज्य राजनीति विज्ञान का मुख्य विषय हैं। राज्य का पूर्ण अध्ययन राजनीति विज्ञान के क्षेत्र में आता है। यह राज्य के अतीत, वर्तमान तथा भविष्य का अध्ययन करता है। यह इस बात का अध्ययन करता है कि राज्य कैसा है? कैसा रहा है? और कैसा होना चाहिए?

5 शक्ति का अध्ययन (Study of Power)- राजनीति विद्वानों ने शक्ति को राजनीति विज्ञान के अध्ययन का महत्वपूर्ण विषय माना है। शक्ति के अनेक रूप है, यथा– राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, व्यक्तिगत, जनमत की शक्ति, राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय शक्ति। शक्ति के इन विभिन्न रूपों में सबसे ज्यादा महत्व राजनीति शक्ति का है।

6 नीति निर्माण प्रक्रिया (Decision Making Process) - आधुनिक विद्वानों के अनुसार राजनीति विज्ञान में नीति निर्माण प्रक्रिया का अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण है। इसमें यह देखा जाता है कि सरकार की नीतियां कैसे बनती हैं और किन–किन साधनों का इसमें योगदान होता है। इस प्रक्रिया में विधानपालिका

और कार्यपालिका की भूमिका, मतदाताओं का प्रभाव, राजनीतिक दलों के संगठन तथा नीतियों को प्रभावित करने वाले तरीकों का अध्ययन किया जाता है।

7 राजनीतिक व्यवस्था का अध्ययन (Study of Political System)- राजनीतिक विज्ञान केवल राज्य तथा सरकार के अध्ययन तक सीमित नहीं है। वरन् इसमें संपूर्ण राजनीतिक व्यवस्था का अध्ययन किया जाता है। किसी भी देश की राजनीति को समझने के लिए आधुनिक राजनीतिक सिद्धांतों के निर्माताओं ने राज्य तथा सरकार के साथ–साथ व्यक्ति, राजनीतिक दल, दबाव समूह और अन्य गैर राजनीतिक संस्थाओं के अध्ययन के महत्व को स्वीकार किया है।

8 राजनीतिक दर्शन का अध्ययन (Study of political Philosophy)- राजनीति दर्शन को राजनीति विज्ञान का अध्ययन माना जाता है। यह इसका आधार है। गिलक्राइस्ट ने राजनीति दर्शन को राजनीति विज्ञान का पूर्वगामी माना है। राजनीति दर्शन में उन राजनीतिक सिद्धांतों, राज्यों, राज्य के स्वरूप, उसके उद्देश्य, राज्य, व्यक्ति एवं सरकार और व्यक्ति के पारस्परिक संबंधों आदि की विवेचना की जाती है।

9 मानव का अध्ययन (Study of human)- राजनीति विज्ञान के विषय में व्यक्ति की स्थिति केंद्रीय है। यदि राजनीति विज्ञान व्यक्ति का अध्ययन नहीं करता है तो इसका (राजनीतिक विज्ञान का) अध्ययन नीरस हो जाएगा। सभी राजनीतिक संस्थाएं व्यक्ति द्वारा संचालित की जाती है। इनका अस्तित्व व्यक्ति की सुरक्षा, विकास एवं वृद्धि के लिए विद्यमान है।

10 राजनीतिक दलों व दबाव समूहों का अध्ययन (Study of political parties and Pressure groups)- आज राजनीतिक विज्ञान राजनीति के सतही अध्ययन से आगे बढ़कर राजनीतिक जीवन की वास्तविकताओं का अध्ययन करने में संलग्न है और अध्ययन के इस क्रम में राजनीतिक दल व दबाव समूह सबसे अधिक प्रमुख रूप में आते हैं। यही तो वह संसार है जिनके द्वारा समस्त राजनीतिक जीवन को परिचालित किया जाता है।

11 अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का अध्ययन (Study of International Relations)- राजनीति विज्ञान किसी एक राज्य का अध्ययन नहीं करता है। राज्य अकेले या शून्यता में काम नहीं करता। उसे दूसरे राज्यों में संदर्भ में कार्य करना पड़ता है। उसे दूसरे राज्य के साथ अनेक प्रकार के समझौते एवं संधियां करनी पड़ती है। कोई राज्य अंतर्राष्ट्रीय वातावरण की उपेक्षा नहीं कर सकता क्योंकि इसका प्रभाव राज्य के आंतरिक एवं बाह्य नीतियों तथा नागरिकों के जीवन पर पड़ता है।

12 कारण तथा प्रभाव के मध्य संबंधों का अध्ययन (The study of the relationship between cause and effect)- प्रत्येक स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय घटना के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होता है। यह एक शाश्वत सत्य है कि बिना किसी कारण के कोई घटना घटित नहीं होती। प्रत्येक घटना का कोई न कोई प्रभाव अवश्य होता है।

निष्कर्ष (Conclusion)- राजनीतिक विज्ञान के क्षेत्र एवं विषय–वस्तु के ऊपरवर्णित तथ्यों से स्पष्ट है कि राजनीतिक विज्ञान का क्षेत्र अत्यंत व्यापक तथा विस्तृत है। यह राज्य, सत्ता, नीति निर्माण और राजनीतिक प्रक्रियाओं के समग्र प्रयोग को समाहित करता है। यह विषय हमें समझने में मदद करता है कि समाज और शासन कैसे काम करते हैं।

1.3.6 राजनीति विज्ञान का महत्व (Significance of political sciences)-

राजनीति विज्ञान का अध्ययन हरेक मनुष्य के लिए आवश्यक है। वर्तमान में हम प्रजातांत्रिक युग में रह रहे हैं जहां मनुष्य राजनीति में प्रत्यक्ष भागीदर है। राजनीति विज्ञान की उपयोगिता या महत्व को निम्न आधार पर व्यक्त किया जा सकता है–

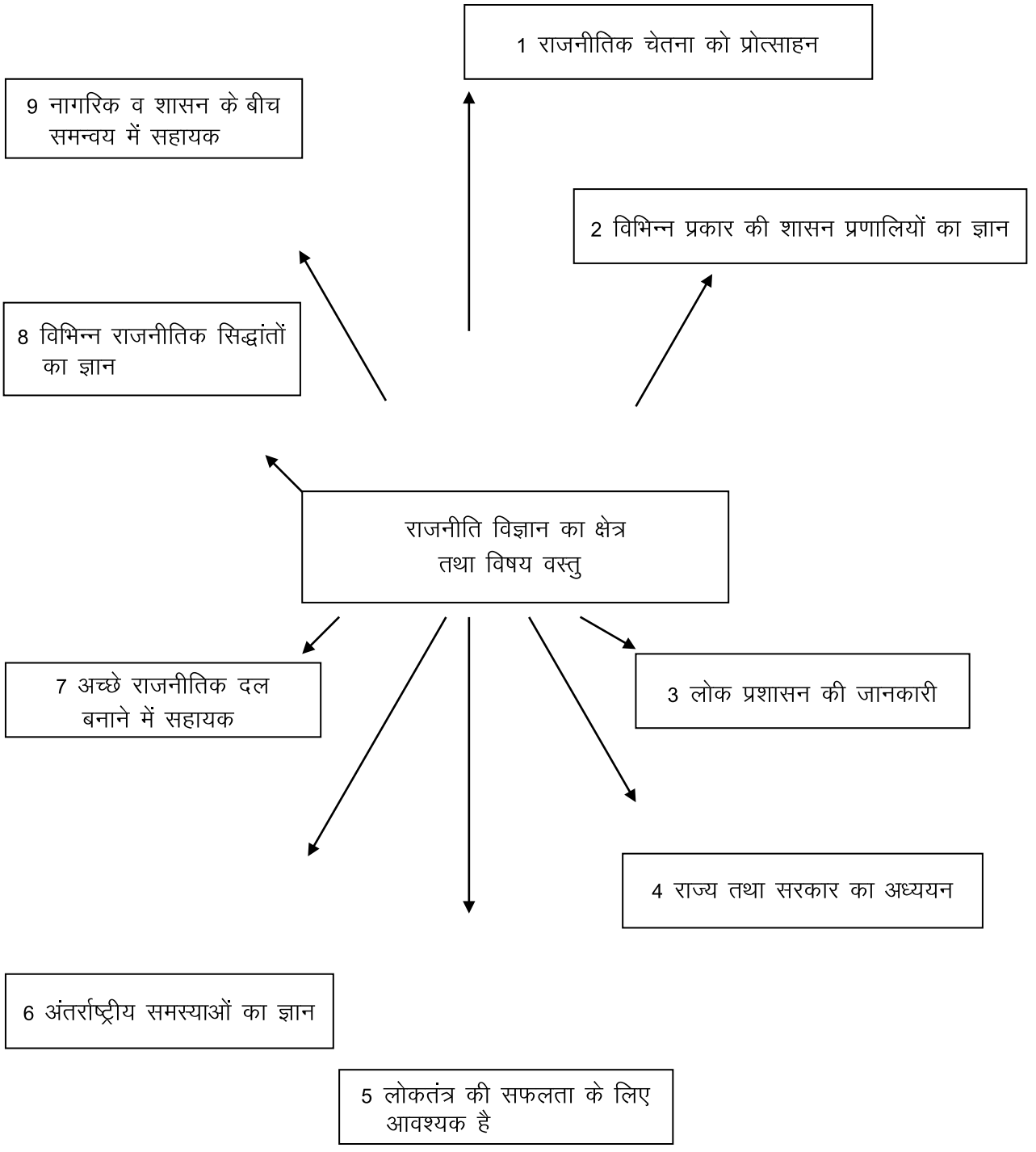
1 राजनीतिक चेतना को प्रोत्साहन
2 विभिन्न प्रकार की शासन प्रणालियों का ज्ञान
3 लोक प्रशासन की जानकारी
4 राज्य तथा सरकार का अध्ययन
5 लोकतंत्र की सफलता के लिए आवश्यक है
6 अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का ज्ञान
7 अच्छे राजनीतिक दल बनाने में सहायक
8 विभिन्न राजनीतिक सिद्धांतों का ज्ञान
9 नागरिक व शासन के बीच समन्वय में सहायक
राजनीति विज्ञान का क्षेत्र तथा विषय वस्तु

1 राजनीतिक चेतना को प्रोत्साहन (Promotion of a political consciousness)- राजनीतिक विज्ञान के अध्ययन से मानव की राजनीतिक चेतना में वृद्धि होती है क्योंकि यह व्यक्ति को उसके अधिकार एवं कर्तव्यों से अवगत कराता है। इसके अतिरिक्त यह व्यक्तियों को विभिन्न प्रकार की शासन प्रणालियों, राजनीतिक विचारधाराओं, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, क्षेत्रीय आंदोलन आदि के बारे में जानकारी प्रदान करते हुए उसकी राजनीतिक चेतना में वृद्धि करता है।

2 विभिन्न प्रकार की शासन प्रणालियों का ज्ञान (Knowledge of various types of governance systems)- विश्व के सभी देशो में अलग–अलग शासन प्रणालियां देखने को मिलती है परंतु गहराई से देखा जाए तो अलग–अलग शासन व्यवस्था होती है। हम राजनीति शास्त्र की विभिन्न शासन प्रणालियों के गुणों तथा अवगुणों की जानकारी ग्रहण करते हैं तथा व्यावहारिक राजनीति का ज्ञान भी प्राप्त करते हैं।

3 लोक प्रशासन की जानकारी (Knowledge of Administration)- राजनीति विज्ञान में प्रशासन का भी अध्ययन होता है। इसमें विभिन्न विभागों, उनके संगठन, अधिकारों की शक्तियों और दायित्वों की जानकारी मिलती है, जिससे प्रशासन को बेहतर बनाने की समझ विकसित होती है।

4 राज्य तथा सरकार के बारे में ज्ञान (Knowledge about the state and the government)- राजनीति विज्ञान हमें राज्य के उद्देश्य, कार्यों, संगठन आदि व्यवस्था का व्यक्ति के लिए क्या उपयोग है, इसका ज्ञान हमें कराता है। राजनीति विज्ञान ही हमें राज्य की उत्पत्ति, राज्य व सरकार के संबंध में जानकारी देता है।

5 लोकतंत्र की सफलता के लिए आवश्यक (Essential for the success of democracy)- प्रजातंत्र की सफलता के लिए आवश्यक है कि राजनीति शास्त्र का अध्ययन किया जाए। लोकतंत्र की सफलता जागरूक नागरिकों पर निर्भर करती है। लोकतंत्र लोगों की राजनीति चेतना, राजनीतिक नैतिकता और राजनीतिक चरित्र के बिना सफल नहीं हो सकता। नागरिकों में ऐसे गुणों को विकसित करने के लिए उन्हें राजनीति विज्ञान का ज्ञान होना आवश्यक है।

6 अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का ज्ञान (Knowledge of International Problems)- अंतर्राष्ट्रीय संबंध, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति और अंतर्राष्ट्रीय विधि राजनीति विज्ञान का भाग है। इसके माध्यम से ही मनुष्य निःशस्त्रीकरण, मानववाद, अंतर्राष्ट्रीय विचारधारा आदि का अध्ययन करता है। विदेश नीति, राष्ट्रीय घरेलू

राजनीति, शीतयुद्ध, अंतर्राष्ट्रीय–साम्राज्यवाद, नव उपनिवेशवाद, उदारीकरण तथा वैश्वीकरण आदि महत्वपूर्ण विषयों की जानकारी प्राप्त होती है।

7 अच्छे राजनीतिक दल बनाने में सहायक (Helping in forming good political parties)- किसी भी राजनीतिक दल की स्थापना निश्चित आदर्शों व सिद्धांतों की प्राप्ति के लिए की जाती है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में राजनीतिक दल जनमत का निर्माण करते हैं। सांप्रदायिक, जातिवादी और धार्मिक आधार पर दल नहीं होने चाहिए। राजनीतिक दल निरंतर सत्ता प्राप्ति के लिए लगे रहते हैं तथा राजनीति विज्ञान के अध्ययन से अच्छे राजनीतिक दल का निर्माण सम्भव हो पाता है।

8 विभिन्न राजनीतिक सिद्धांतों का ज्ञान (Knowledge of Various Political theories)- राजनीति विज्ञान में ही व्यक्तिवाद, समाजवाद, उदारवाद, नाजीवाद, आदर्शवाद और गांधीवाद आदि राजनीतिक विज्ञान का अध्ययन किया जाता है। ये राजनीतिक सिद्धांत हमें विभिन्न राजनीतिक आदर्शों को अपनाने व समझने में सहायता प्रदान करते हैं। राजनीतिक विज्ञान विभिन्न विचारधाराओं का ज्ञान भी देता है।

9 नागरिक व शासन के बीच समन्वय में सहायक (Co-ordination between citizens and the government)- नागरिक व शाासन में सीधा संबंध होता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने मत के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति या जनमत प्रस्तुत करता है। प्रजातांत्रिक देशों में नागरिकों की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। प्रजा को अपने अधिकारों के प्रति सचेत रहकर प्रशासनिक कार्यों में अपनी भागीदारी दर्ज करनी चाहिए।

10 राजनीति विज्ञान नागरिकों को उनके अधिकारों और कर्तव्यों का ज्ञान कराता है (Political science makes citizens aware of their rights and duties)- प्रजातंत्र की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि नागरिक अपने अधिकारों व कर्तव्यों के प्रति कितने सचेत है, व्यक्ति अपने अधिकारों का प्रयोग किस सीमा तक कर सकता है। हर व्यक्ति का अधिकार दूसरे का कर्तव्य है। केवल राजनीतिक विज्ञान विषय ही हमें अपने अधिकारों और कर्तव्यों का ज्ञान कराता है।

निष्कर्ष (Conclusion)- उपरोक्त विवरण से यह भली–भांति स्पष्ट होता है कि राजनीतिक विज्ञान एक अति आवश्यक विषय है। आज जब कि लोकतांत्रिक राज्यों की संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती रहती है व राज्य का स्वरूप कल्याणकारी हो गया है। संपूर्ण विश्व एक इकाई का रूप धारण कर चुका है, ऐसे में राजनीतिक विज्ञान के अध्ययन की उपयोगिता और अधिक बढ़ गई है।

1.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main body of the text)-

1.4.1 राजनीति विज्ञानः एक परिचय (Political science: An Introduction)

राजनीति विज्ञान वह विषय है जिसमें राज्य, सरकार और शासन से जुड़ी बातों का अध्ययन किया जाता है। इसके माध्यम से हमें यह समझ में आता है कि राज्य कैसे बना ; सरकार कैसे काम करती है और समाज में नियम तथा नीतियां कैसे लागू होते है। यह विषय हमें शासन व्यवस्था की मूल संरचना और उसके कार्यों से परिचित कराता है। समय के साथ राजनीति विज्ञान का दायरा बढ़ गया है। अब इसमें केवल राज्य और सरकार ही नहीं, बल्कि लोगों का व्यवहार, चुनाव, राजनीतिक दल, नीतियां और प्रशासन भी शामिल हैं। इससे यह समझने में मदद मिलती है कि समाज में सत्ता का उपयोग कैसे होता है और निर्णय लेने की प्रकिया कैसे चलती है।

आज के समय में राजनीति विज्ञान का महत्व और बढ़ गया है, क्योंकि यह हमें देश और दुनिया की राजनीति को समझने का दृष्टिकोण देता है। इसके अध्ययन से व्यक्ति जागरूक बनता है और अपने अधिकारों व कर्तव्यों को बेहतर तरीके से समझ पाता है। यह हमें समाज व शासन की जटिलताओं को सरल रूप में समझने का अवसर प्रदान करता है।

1.4.2 परंपरागत बनाम आधुनिक दृष्टिकोण (Traditional vs Modern Approaches)

राजनीति विज्ञान को मुख्य रूप से दो दृष्टिकोणों के आधार पर समझने का प्रयास किया जाता है। ये इस प्रकार है–

क) परम्परागत दृष्टिकोण (ख) आधुनिक दृष्टिकोण

(क) परम्परागत दृष्टिकोण – (Traditional Approaoch) राजनीति विज्ञान के परंपरागत दृष्टिकोण में राजनीति विज्ञान का अध्ययन राज्य, सरकार एवं औपचारिक संस्थाओं के संरचनात्मक और विधिक विश्लेषण तक सीमित रहता है। इसमें संविधान, विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका के कार्यों व अधिकारों का मानक अध्ययन प्रमुख होता है।

माइक डीमॉक के शब्दों में– ''राजनीति विज्ञान का संबंध राज्य और उसके साधन सरकार से है।''

परम्परागत दृष्टिकोण के अंतर्गत निम्न का अध्ययन प्रमुखता से किया जाता है–

1 राज्य की उत्पत्ति, स्वरूप और उद्देश्य का अध्ययन (Study of origin, nature and purpose of the state)– परम्परागत दृष्टिकोण में राज्य को राजनीतिशास्त्र का केंद्र माना गया है। इसमें यह जानने का प्रयास किया जाता है कि राज्य की उत्पत्ति कैसे हुई और उसका विकास किन परिस्थितियों में हुआ। साथ ही राज्य के स्वरूप जैसे राजतंत्र, लोकतंत्र, शांति, सुरक्षा और व्यवस्था बनाए रखने पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

2 संविधान और कानूनों का अध्ययन (Study of Constitution and laws)- परम्परागत दृष्टिकोण को राज्य का आधार माना जाता है। इसमें संविधान के नियमों, सिद्धांतों ओर मूल सरंचना का अध्ययन किया जाता है। साथ ही विभिन्न कानूनों और उनके महत्व को भी समझा जाता है। यह दृष्टिकोण वैधानिक (legal) और औपचारिक पक्ष पर केंद्रित रहता है।

3 विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के कार्यों का अध्ययन (Study of functions of the legislature, executive and judiciary) – राज्य के तीन अंगों विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका की भूमिका का विस्तार से अध्ययन किया जाता है। इसमें यह देखा जाता है कि कानून कौन बनाता है, उन्हें लागू कौन करता है और न्याय कैसे दिया जाता है। इन अंगों के बीच संतुलन और नियंत्रण की व्यवस्था को भी समझाया जाता है।

4 राज्य नागरिक संबंधों का अध्ययन (Study of State citizen Relations)- इसमें राज्य और नागरिकों के बीच के संबंधों को समझा जाता है। नागरिकों के अधिकार और कर्तव्यों का विश्लेषण किया जाता है। यह भी देखा जाता है कि राज्य नागरिकों के हितों की रक्षा कैसे करता हैं इससे एक आदर्श नागरिक और आदर्श राज्य की अवधारणा स्पष्ट होती है।

5 अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों तथा संस्थाओं का अध्ययन (Study of International Relations and Institution)- इसके अंतर्गत राष्ट्र–राज्यों के मध्य शक्ति–संतुलन, कूटनीतिक अंतः क्रिया तथा हित संघर्षों का विश्लेषण किया जाता है। साथ ही, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों की संरचना, कार्यप्रणाली एवं वैश्विक शासन (Global governance) में उनकी भूमिका का गहन अध्ययन किया जाता है। इनमें संयुक्त राष्ट्र, विश्व मुद्रा कोष, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन, विश्व बैंक आदि प्रमुख है।

आधुनिक दृष्टिकोण (Modern Approaches)- आधुनिक दृष्टिकोण में राजनीति विज्ञान का अध्ययन केवल राज्य ओर सरकार तक सीमित नहीं रहता बल्कि यह मानव के राजनीतिक व्यवहार, शक्ति–संबंधों

और निर्णय प्रक्रियाओं का भी विश्लेषण करता है। आधुनिक दृष्टिकोण राजनीति को एक व्यापक, गतिशील और व्यावहारिक प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करता है। डेविड ईस्टन के अनुसार, ''राजनीति विज्ञान समाज में मूल्यों के अधिकारपूर्ण वितरण का अध्ययन है।

आधुनिक दृष्टिकोण के अंतर्गत निम्न का अध्ययन किया जाता है–

1 शक्ति का अध्ययन (Study of power)- आधुनिक राजनीति में शक्ति को केंद्रीय स्थान दिया गया है। यह माना जाता है कि राजनीति मूलतः शक्ति प्राप्त करने और उसे बनाए रखने का संघर्ष है। समाज और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर निर्णय शक्ति के आधार पर ही लिए जाते हैं। इसलिए शक्ति के स्रोत, प्रकार और उसकी सीमाओं का गहराई से अध्ययन किया जाता है।

2 नीति–निर्माण प्रक्रिया (Policy making process)- राजनीति का वास्तविक रूप नीतियों के निर्माण और क्रियान्वयन में दिखाई देता है। इसमें यह देखा जाता है कि नीतियां कौन बनाता है, किन परिस्थितियों में बनती है और कैसे लागू होती है। विभिन्न संस्थाओं–विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका की भूमिका भी इसमें शामिल होती है। इस प्रकार राजनीति को एक क्रियाशील प्रक्रिया के रूप में समझा जाता है।

3 मानव व्यवहार का अध्ययन (Study of Human Behaviour)- आधुनिक दृष्टिकोण में व्यक्ति के व्यवहार को अत्याधिक महत्व दिया जाता हैं यह समझने का प्रयास किया जाता है कि व्यक्ति राजनीति में कैसे सोचता और कार्य करता है। उसकी भावनाएं, इच्छाएं और प्रवृत्तियां उसके राजनीतिक निर्णयों को प्रभावित करती है। इसलिए राजनीति को केवल संस्थाओं से नहीं, बल्कि मनुष्य के व्यवहार से जोड़कर देखा जाता हैं।

4 मानवीय समस्याओं के समाधान पर बल (Focus on Human Problems)- आधुनिक दृष्टिकोण केवल अध्ययन तक सीमित नहीं रहता, बल्कि समस्याओं के समाधान पर भी ध्यान देता है। मानव अधिकार, युद्ध और वैश्वीकरण जैसी समस्याओं को समझकर उनके समाधान खोजे जाते हैं। उत्तर–व्यवहारवाद ने इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

5 वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति पर ज्यादा बल (More Emphasis on Scientifice Method)- राजनीति विज्ञान सामाजिक विज्ञान का विषय है। आधुनिक विद्वान राजनीतिशास्त्र को वैज्ञानिक बनाने पर

जोर देते हैं। इसमें निरीक्षण, परीक्षण और विश्लेषण की पद्धतियों का उपयोग किया जाता है। पुराने वर्णात्मक तरीकों की जगह अब प्रमाण आधारित अध्ययन किया जाता है।

निष्कर्ष (Conclusion)- अंतः परंपरागत दृष्टिकोण राजनीति विज्ञान को राज्य, सरकार एवं औपचारिक संस्थाओं के वैधानिक एवं संरनात्मक विश्लेषण तक सीमित रखता है जबकि आधुनिक दृष्टिकोण इसे व्यवहारात्मक, अनुभवजन्य तथा बहुआयामी दृष्टिकोण के रूप में विकसित करता है। अतः आधुनिक दृष्टिकोण ने राजनीति विज्ञान को अधिक वैज्ञानिक, यथार्थपरक और प्रासंगिक बनाते हुए इसे समकालीन सामाजिक–राजनीतिक जटिलताओं के विश्लेषण का सशक्त माध्यम बना दिया जाता है। इसके परिणामस्वरूप राजनीति विज्ञान का स्वरूप अधिक व्यापक, गतिशील और बहुआयामी हो गया है।

1.4.3 राजनीति विज्ञान एक विज्ञान है (Political science is a Science)- यद्यपि हमारे अध्ययन के विषय को राजनीतिक विज्ञान के नाम से पुकारा जाता है। परंतु इस विषय को विज्ञान मानने के संबंध में विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान बक्कल, कॉम्टे, एमास , बियर्ड, मोस्का, कैटलिन एवं मेटलैण्ड (Matiland) इस विषय को विज्ञान मानने से इंकार करते हैं तो कुछ विद्वान इसे विज्ञान मानते हैं। जैसे अरस्तू इसे सर्वोच्च विज्ञान (Master Science) की संज्ञा देता है। जॉर्ज बनार्ड शा इसे मानवीय सभ्यता को सुरक्षित रख सकने वाला विज्ञान कहते है।

राजनीति शास्त्र के विज्ञान होने के पक्ष में तर्क (Arguments in favour of Political science being a science)-

1 निश्चित कार्यक्षेत्र (Definite Scope)- राजनीति विज्ञान का एक निश्चित अध्ययन क्षेत्र होता है, जिसमें राज्य, सरकार, संस्थाएं और राजनीतिक प्रक्रियाएं शामिल होती है। इसमें विषय–वस्तु, स्पष्ट रूप से निर्धारित होती है। यह अपने क्षेत्र में व्यवस्थित ज्ञान प्रदान करता है। इसी कारण इसे एक विज्ञान के रूप में देखा जाता है।

2 भविष्यवाणी करने में सक्षम (Possible to Predict)- राजनीतिक विज्ञान में प्राकृतिक विज्ञानों जैसी सटीक भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। फिर भी पिछले अनुभवों और तथ्यों के आधार पर अनुमान लगाए जा सकते हैं। इससे इसकी वैज्ञानिक प्रकृति स्पष्ट होती है।

3 कार्य–कारण संबंध (Cause and Effect Relationship)- राजनीति विज्ञान में प्राकृतिक विज्ञान की भांति कार्य एवं कारण के मध्य निश्चित संबंध नहीं पाया जाता है परंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि

इसमें कार्य एवं कारण के मध्य प्रत्यक्ष संबंधों का पूर्ण अभाव है। हमें राजनीति विज्ञान में भी कार्य कारण संबंध देखने को मिलता है।

4 सुनिश्चितता (Certainity)- राजनीति विज्ञान में प्राकृतिक एवं भौतिक विज्ञानों की भांति कुछ सामान्य नियम सुनिश्चित है। राज्य विधि, न्याय, शिक्षा, कानून, क्रांति आदि के संबंध में कुछ ऐसे निश्चित नियम है।

5 परीक्षण संभव (Testing Possible)- राजनीति विज्ञान के तथ्य प्रयोग संभव नहीं होते, फिर भी ऐतिहासिक घटनाओं और अनुभवों के आधार पर परीक्षण किया जाता है। इससे निष्कर्षों की पुष्टि और समझ विकसित होती है।

निष्कर्ष (Conclusion)- अंतः राजनीति विज्ञान में वैज्ञानिक तत्व पाए जाते हैं। इसलिए इसे विज्ञान माना जाता है। इसमें राज्य, सरकार और राजनीतिक घटनाओं का अध्ययन व्यवस्थित और तार्किक ढंग से किया जाता है। तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं और सामान्य सिद्धांत बनाए जाते हैं।

1.4.4 राजनीति विज्ञान एक विज्ञान नहीं है (Political science is not a science)- जो राजनीतिक शास्त्री, राजनीतिक विज्ञान को विज्ञान नहीं मानते, उनमें मैटलैण्ड, कॉम्टे, बक्कल, गार्नर, बियर्ड, मोस्का आदि मुख्य है। राजनीति शास्त्र के विशेषज्ञ इसके अध्ययन, विधियों, सिद्धांतों तथा निष्कर्ष निकालने के प्रयास करते हैं। उनका मानना है कि राजनीति का विषय मानव व्यवहार से जुड़ा है, जो हमेशा बदलता रहता है, इसलिए इसे वैज्ञानिक नियमों में बांधना कठिन है।

मैटलैण्ड का कथन है, ''जब मैं परीक्षा के ऐसे प्रश्न–पत्रों को देखता हूं, जिनका शीर्षक राजनीतिक शास्त्र होता है, तो मुझे प्रश्नों पर नहीं शीर्षक पर खेद होता है।

राजनीतिक विज्ञान के विज्ञान होने के विपक्ष में तर्क (Argument Against political science being a science)-

1 निश्चित परिभाषित शब्दावली का अभाव (Lack of Definite defining Terminology)- राजनीतिक विज्ञान में एक निश्चित परिभाषित शब्दावली का अभाव देखने को मिलता है। जैसे– राजनीति को राजनीतिक विज्ञान, राजनीतिक दर्शन आदि अनेक नामों से पुकारा जाता है। राजनीतिक विज्ञान में स्वतंत्रता, समानता, न्याय, लोकतंत्र, संघवाद, संप्रभुता एवं अधिकार आदि शब्दों के भिन्न–भिन्न देशों में विद्वानों द्वारा भिन्न–भिन्न अर्थ लगाए जाते हैं।

2 प्रयोग संभव नहीं है (Lack of Experiments)- किसी भी विषय को विज्ञान तभी कहा जाता है जब उसके लिए प्रयोगात्मक तथा पर्यवेक्षात्मक पद्धतियों से प्रयोग में लाया जा सके, तभी लक्ष्यों को एकत्रित किया जा सकता है। राजनीतिक विज्ञान एक सजीव विषय है, जिस पर परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है, परिस्तिथियां परिवर्तनशील होती हैं इसलिए सीमित वातावरण में बार–बार प्रयोग संभव नहीं है। इस आधार पर राजनीति विज्ञान को पूर्ण विज्ञान नहीं माना जाता।

3 कारण–प्रभाव संबंध का प्रभाव (Absense of a cause and effect Relationship)- राजनीति विज्ञान में कारण तथा प्रभाव का संबंध नहीं है जबकि विज्ञान में कारण–प्रभाव का संबंध होता है। उदारहण–फ्रांस, चीन, रूस में अलग–अलग समय पर क्रांतिया हुई जिन्होंने शासन व्यवस्था को पलटा। सभी देशों में क्रांतियों के कारण अलग–अलग रहे हैं।

4 निश्चितता का अभाव (Lack of Definitness) - राजनीति विज्ञान मानव व्यवहार पर आधारित है, जो परिवर्तनशील होता है। व्यक्ति की सोच, भावनाएं और परिस्थितियां बदलती रहती है। इससे राजनीतिक निर्णय भी स्थिर नहीं होते।

5 सार्वभौमिक नियमों का अभाव (Lack of Universal laws)- प्राकृतिक विज्ञानों में नियम हर इंसान और समय पर समान रूप से लागू होते है। लेकिन राजनीति विज्ञान में ऐसे सार्वभौमिक नियम नहीं मिलते। एक देश की राजनीतिक व्यवस्था दूसरे देश में उसी प्रकार काम नहीं करती। इससे इसकी वैज्ञानिक सार्वभौमिकता पर प्रश्न उठता है।

निष्कर्ष (Conclusion)- उपरोक्त तर्कों के आधार पर कहा जा सकता है कि राजनीति विज्ञान में वैज्ञानिक पद्धतियों का पूर्ण रूप से प्रयोग संभव नहीं है। यदि हम राजनीति विज्ञान के संबंध में दोनों मतों, विज्ञान या विज्ञान न होने का निष्पक्ष रूप से विश्लेषण करे तो इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि दोनों ही प्रकार/मत अतिवादी है क्योंकि दोनों मतों ने इसे बढ़ा–चढ़ाकर प्रस्तुत किया है।

अतः इसे पूर्ण विज्ञान न मानकर एक सामाजिक विज्ञान के रूप में स्वीकार किया जाता है।

1.4.5 राजनीति विज्ञान एक कला भी है (Political science is an Art also)- राजनीति शास्त्र को एक कला मानने से पूर्व हमें कला का अर्थ जानना होगा। कला का अर्थ है ज्ञान को व्यवहार में लाना। राजनीति शास्त्र भी केवल सिद्धांत नहीं बताता, बल्कि यह सिखाता है कि शासन को सही तरीके से कैसे

चलाया जाए। इसलिए इसे एक कला माना जाता है। गैटेल के अनुसार राजनीति एक ऐसी कला है जो उन नियमों और सिद्धांतों को बताती है जिनसे राजनीतिक संस्थाओं का संचालन ठीक ढंग से हो सके।

प्राचीन भारतीय विचारक कौटिल्य, मनु आदि ने भी इसे शासन की कला माना है। प्राचीन यूनानी विद्वान प्लेटो (Plato) ने अपने ग्रंथ 'स्टेट्समैन' में राजनीति को शासन की एक श्रेष्ठ कला माना है। एक न्यायपूर्ण और अपराधमुक्त, सभ्य समाज बनाने हेतु प्लेटो से लेकर आज तक के विद्वानों ने अपनी विचारधाराएं प्रस्तुत की तथा अनेक राजनीतिक सिद्धांतों को लागू करने का प्रयत्न किया है।

इस प्रकार राजनीति शास्त्र एक उच्च–स्तर की कला के रूप में काम करता है। यह हमें सही तरीके से समाज और राज्य को समझने में मदद करता है। इसके माध्यम से हम अच्छे नागरिक बनकर राज्य के विकास में योगदान देते हैं।

1.5 अपनी प्रगति जांचे (Check your progress)-

नीचे कुछ प्रश्न दिए गए हैं उनके उत्तर देने का प्रयास करें–

(i) राजनीति विज्ञान शब्द की उत्पत्ति किस मूल शब्द से हुई है ?

(ii) राजनीति विज्ञान 'अरस्तू' के अनुसार क्या है?

(iii) राजनीति विज्ञान को 'विज्ञान' मानने का कोई एक प्रमुख आधार बताइए।

(iv) 'स्टेट्समैन' पुस्तक के लेखक कौन हैं?

(v) 'पॉलिस' शब्द का अर्थ क्या है?

(vi) परंपरागत व आधुनिक राजनीति शास्त्र में अंतर का एक आधार लिखें।

1.6 सारांश (Summary)- राजनीति विज्ञान समाज विज्ञान की वह महत्वपूर्ण शाखा है जो मानव के राजनीतिक जीवन, संस्थाओं और सार्वजनिक व्यवहार का अध्ययन करती है। यह विषय हमें समझने में मदद करता है कि समाज में शासन कैसे चलता है और लोगों के जीवन पर उसका क्या प्रभाव पड़ता है। यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने राजनीति विज्ञान को 'सर्वोच्च विज्ञान'' कहा क्योंकि यह मानव जीवन को बेहतर बनाने से जुड़ा है। पहले राजनीति केवल नगर–राज्यों तक सीमित थी, लेकिन आज यह वैश्विक स्तर पर फैल चुकी है।

राजनीति विज्ञान को समझने के लिए इसे परंपरागत और आधुनिक दृष्टिकोणों में बांटा जाता है। परंपरागत दृष्टिकोण में राज्य, सरकार और संविधान जैसे विषयों पर ध्यान दिया जाता है। वहीं आधुनिक दृष्टिकोण, जो द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विकसित हुआ, मानव व्यवहार, शक्ति–सत्ता और निर्णय प्रक्रिया पर अधिक जोर देता है। राजनीति विज्ञान की प्रकृति को लेकर यह कहा जाता है कि यह विज्ञान भी है और कला भी। इसे विज्ञान इसलिए माना जाता है क्योंकि इसमें तथ्यों, शोध और तर्क का उपयोग किया जाता है क्योंकि इसका उद्देश्य एक अच्छे समाज और बेहतर जीवन का निर्माण करना है।

इसके अध्ययन क्षेत्र में काफी विस्तार हुआ है। आज इसमें राजनीतिक दल दबाव समूह, जनमत, अन्तर्राष्ट्रीय संबंध और वैश्विक संगठनों का अध्ययन शामिल है। साथ ही मानव अधिकार, पर्यावरण, आतंकवाद और वैश्विक अर्थव्यवस्था जैसे मुद्दे भी इसके अंतर्गत आते हैं। अंत में कहा जा सकता है कि राजनीति विज्ञान का अध्ययन हमें जागरूक नागरिक बनाता है और एक मजबूत लोकतंत्र के निर्माण में मदद करता है।

1.7 सूचक शब्द (Key words)-

पॉलिस, राजनीति विज्ञान, राज्य, शक्ति, नीति–निर्माण

1 पॉलिस– प्राचीन यूनानी भाषा का शब्द, जिसका अर्थ है नगर–राज्य। यह ऐसे छोटे स्वतंत्र राज्यों को दर्शाता है जहां नागरिक सीधे शासन में भाग लेते हैं।

2 राजनीति विज्ञान– यह एक सामाजिक विज्ञान है जो राज्य, सरकार, संस्थाओं और राजनीतिक गतिविधियों का अध्ययन करता है।

3 राज्य– राज्य एक संगठित राजनीतिक इकाई है जिसमें चार मुख्य तत्व होते हैं– निश्चित क्षेत्र, जनसंख्या, सरकार और संप्रभुता।

4 शक्ति– दूसरों के व्यवहार को प्रभावित या नियंत्रित करने की क्षमता। राजनीति का मुख्य आधार यही है।

5 नीति निर्माण– सरकार द्वारा समाज के हित में योजनाएं और नियम बनाने की प्रक्रिया।

6 जनमत– किसी मुद्दे पर जनता की सामूहिक राय को जनमत कहते हैं।

1.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)-

1 राजनीति शास्त्र के अर्थ व परिभाषा को विस्तार पूर्वक विवरण देते हुए राजनीति विज्ञान की प्रकृति की व्याख्या कीजिए।

2 राजनीति विज्ञान के अध्ययन क्षेत्र के अंतर्गत किन–किन विषयों को सम्मिलित किया जाता है?

3 राजनीति विज्ञान के परंपरागत और आधुनिक दृष्टिकोणों के बीच मुख्य अंतर स्पष्ट कीजिए।

4 ''राजनीति विज्ञान का आरंभ और अंत राज्य के साथ होता है।'' गार्नर के इस कथन की समीक्षा कीजिए।

5 राजनीति शास्त्र की उपयोगिता पर एक निबंध लिखिए।

6 ''जब मैं प्रश्नों के किसी समूह को 'राजनीति विज्ञान' शीर्षक के अंतर्गत देखता हूं, तो मुझे प्रश्नों के प्रति नहीं, बल्कि शीर्षक के प्रति दुख होता है।'' मैटलैण्ड के इस कथन का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

7 राजनीति विज्ञान से क्या अभिप्राय है? राजनीति विज्ञान के विषय क्षेत्र एवं विषयसामग्री की व्याख्या कीजिए।

8 क्या राजनीति शास्त्र एक विज्ञान है–समीक्षा कीजिए।

1.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)-

(i) "Polis" शब्द से

(ii) सर्वोच्च विज्ञान (Master Science)

(iii) व्यवस्थित और तर्कपूर्ण अध्ययन पर आधारित

(iv) प्लेटो

(v) नगर–राज्य

(vi) परंपरागत राजनीति शास्त्र–सिद्धांत प्रधान, आधुनिक राजनीति शास्त्र–व्यवहार प्रधान।

1.10 संदर्भ ग्रंथ/निर्देशित पुस्तकें (References/Suggested Readings)-

1 Principles of Political Science-Eddy Asirvatham

2 Principles of political science- J.C. Johri

3 A Grammer of Politics- Harold J. Laski

4 Comparative Politics and political Theory-O.P. Gamba

5 Modern Political theory- S.P. Verma

6 Introduction to political science- J.W. Garner

7 Politics: An Introduction-Andres Heywoord

8 Outlines of Political Science- B.L. Fadia

अध्याय-2

राजनीति विज्ञान का अन्य विषयों (दर्शनशास्त्र, इतिहास, अर्थशास्त्र व समाजशास्त्र) से सम्बन्ध

SUBJECT : POLITICAL SCIENCE, SEMESTER-1	
COURSE CODE : C24POL101T	AUTHOR: DR. RAJIV VERMA
LESSON NO : 2	
राजनीति विज्ञान का अन्य विषयों (दर्शनशास्त्र, इतिहास, अर्थशास्त्र व समाजशास्त्र) से सम्बन्ध (Relationship of Political Science with Philosophy, History, Economics and Sociology)	

2.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

2.2 प्रस्तावना (Introduction)

2.3 अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

2.3.1 समाज विज्ञानों की अन्तर्निर्भरता (Interdependence of Social Sciences)

2.3.2 राजनीति विज्ञान और दर्शनशास्त्र (Political Science and Philosophy)

2.3.3 राजनीति विज्ञान और इतिहास (Political Science and History)

2.3.4 राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र (Political Science and Economics)

2.3.5 राजनीति विज्ञान और समाजशास्त्र (Political Science and Sociology)

2.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

2.4.1 दर्शनशास्त्र की राजनीति शास्त्र को देन (Contribution of Philosophy to Political Science)

2.4.2 इतिहास की राजनीति शास्त्र को देन (Contribution of History to Political Science)

2.4.3 अर्थशास्त्र की राजनीति शास्त्र को देन (Contribution of Economics to Political Science)

2.4.4 समाजशास्त्र की राजनीति शास्त्र को देन (Contribution of Sociology to Political Science)

2.5 अपनी प्रगति जाँचें (Check Your Progress)

2.6 सारांश (Summary)

2.7 सूचक शब्द (Key Words)

2.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

2.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

2.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References/suggested Readings)

2.1 अधिगम उद्देश्य (Learning objectives):–

इस अध्याय में निम्नलिखित विषयों के बारे में बताया गया है–

• समाज विज्ञानों की अन्तर्विषय प्रकृति एवं उनके पारस्परिक सम्बन्धों को समझना।

• राजनीति विज्ञान और दर्शनशास्त्र के बीच के अन्तर्सम्बन्धों का विश्लेषण करना।

• इतिहास और राजनीतिक विज्ञान की परस्पर निर्भरता का बोध प्राप्त करना।

• अर्थशास्त्र और राजनीति के मध्य विकसित हो रहे आर्थिक-राजनीतिक सम्बन्धों को समझना।

• समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के सांझा सरोकारों एवं विषय-वस्तु का मूल्यांकन करना।

• अन्य सामाजिक विज्ञानों की तुलना में राजनीति विज्ञान की विशिष्टताओं की पहचान करना।

• राजनीति को व्यापक सामाजिक, आर्थिक एवं ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझने हेतु समग्र दृष्टिकोण विकसित करवाना।

2.2 प्रस्तावना (Introduction):–

मानव समाज बहुत जटिल है, इसलिए उसे समझने के लिए केवल एक विषय का अध्ययन पर्याप्त नहीं होता। राजनीति विज्ञान भी समाज विज्ञान का एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसका सम्बन्ध इतिहास, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र एवं दर्शनशास्त्र जैसे विषयों से जुड़ा हुआ है।

हर विषय का अपना अलग अध्ययन क्षेत्र होता है, लेकिन फिर भी ये सभी विषय एक-दूसरे से गहराई से सम्बन्धित हैं।

राजनीतिक विज्ञान का सही अध्ययन तभी सम्भव है जब उसे अन्य विषयों के साथ जोड़कर देखा जाए। राजनीतिक निर्णय कई बार आर्थिक परिस्थितियों से प्रभावित होते हैं, जबकि इतिहास हमें यह समझने में मदद करता है कि राजनीतिक व्यवस्थाएँ समय के साथ कैसे विकसित हुई हैं। इसी कारण इतिहास को राजनीति विज्ञान की प्रयोगशाला भी कहा जाता है। आज के समय में **अन्तर्विषय दृष्टिकोण (Interdisciplinary Approach)** का महत्व बढ़ गया है। इस कारण विभिन्न विषयों के बिच की सीमाएँ पहले की तुलना में कम हो गई है। दर्शनशास्त्र राजनीति को नैतिक आधार प्रदान करता है, वहीं समाजशास्त्र उन सामाजिक परिस्थितियों को समझाता है जिनमें राजनीति विकसित होती है।

2.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

2.3.1 समाज विज्ञानों की अंतरनिर्भरता (Interdependence of Social Sciences):- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है तथा उसका जीवन अनेक पक्षों- सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, नैतिक एवं सांस्कृतिक- से मिलकर बना होता है। मानव जीवन के इन विभिन्न पक्षों का अध्ययन अलग-अलग समाज विज्ञानों द्वारा किया जाता है। राजनीति विज्ञान जहाँ मानव जीवन के

राजनीतिक पक्ष का अध्ययन करता है, वहीं इतिहास ऐतिहासिक घटनाओं का, अर्थशास्त्र आर्थिक गतिविधियों का, समाजशास्त्र सामाजिक संबंधों का तथा दर्शनशास्त्र नैतिक एवं वैचारिक मूल्यों का अध्ययन करते हैं। यद्यपि प्रत्येक समाज विज्ञान का अपना विशिष्ट अध्ययन क्षेत्र होता है, फिर भी कोई भी विषय पूर्णतः स्वतंत्र नहीं है। सभी समाज विज्ञान एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं तथा एक-दूसरे पर निर्भर हैं। मानव जीवन एक समग्र इकाई है, इसलिए उसके विभिन्न पक्षों को अलग-अलग करके पूरी तरह नहीं समझा जा सकता।

राजनीति विज्ञान का अध्ययन इतिहास के बिना अधूरा माना जाता है, क्योंकि इतिहास राजनीतिक संस्थाओं एवं व्यवस्थाओं के विकास की जानकारी प्रदान करता है। इसी प्रकार आर्थिक परिस्थितियाँ राजनीतिक नीतियों को प्रभावित करती हैं, इसलिए राजनीतिक विज्ञान का सम्बन्ध अर्थशास्त्र से भी गहरा है। समाजशास्त्र सामाजिक संरचना, वर्ग, जाति एवं सामाजिक व्यवहार का अध्ययन करता है, जिनका राजनीति पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। दर्शनशास्त्र राजनीति को न्याय, स्वतंत्रता, समानता और अधिकार जैसे आदर्शों का आधार प्रदान करता है।

आधुनिक युग में अंत: विषय दृष्टिकोण (Interdisciplinary Approach) के विकास ने समाज विज्ञानों की पारस्परिक निर्भरता सम्बन्धों को अधिक स्पष्ट किया है। वर्तमान समय में किसी भी सामाजिक समस्या का

अध्ययन केवल एक विषय के आधार पर संभव नहीं माना जाता है। बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, सामाजिक असमानता एवं राजनीतिक अस्थिरता जैसी समस्याओं को समझने के लिए विभिन्न समाज विज्ञानों का संयुक्त अध्ययन आवश्यक है।

► **2.3.2. राजनीति विज्ञान और दर्शनशास्त्र (Political Science and Philosophy):-** राजनीति विज्ञान और दर्शनशास्त्र का सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ है। दर्शनशास्त्र का अर्थ है "ज्ञान के प्रति प्रेम"। दर्शनशास्त्र राजनीति विज्ञान को नैतिक एवं वैचारिक आधार प्रदान करता है। राजनीति विज्ञान राज्य, सरकार और राजनीतिक संस्थाओं का अध्ययन करता है, जबकि दर्शनशास्त्र आदर्श राज्य एवं न्यायपूर्ण समाज की कल्पना प्रस्तुत करता है। न्याय, स्वतंत्रता, समानता, अधिकार एवं आदर्श राज्य जैसे अवधारणाएँ मुख्यतः दर्शनशास्त्र की देन हैं। प्लेटो, अरस्तु, कौटिल्य, मनु, मैकियावेली, हॉब्स, लॉक, रूसो, हीगल, मिल, मार्क्स, ग्रीन और महात्मा गांधी जैसे महान विचारकों ने राजनीतिक दर्शन को समृद्ध बनाया। यूनानी दार्शनिक प्लेटो ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक **The Republic** में आदर्श राज्य की कल्पना प्रस्तुत की, जबकि अरस्तु ने मनुष्य को "राजनीतिक प्राणी" कहा।

► **2.3.3. राजनीति विज्ञान और इतिहास (Political Science and History):-** राजनीति विज्ञान और इतिहास का सम्बन्ध अत्यन्त निकट एवं परस्पर निर्भर है। इतिहास भूतकाल की राजनीतिक घटनाओं, शासन प्रणालियों, युद्धों एवं क्रान्तियों का अध्ययन करता है, जबकि राजनीति विज्ञान राज्य,

सरकार तथा राजनीतिक संस्थाओं का विश्लेषण करता है। इतिहास को राजनीति विज्ञान की प्रयोगशाला कहा जाता है, क्योंकि राजनीतिक सिद्धान्त ऐतिहासिक अनुभवों के आधार पर विकसित होते हैं। **सीले (Seeley)** ने कहा था– **"इतिहास के बिना राजनीति विज्ञान अधूरा है तथा राजनीति विज्ञान के बिना इतिहास निरर्थक है।" फ्रीमैन (Freeman)** के अनुसार, **"इतिहास भूतकाल की राजनीति है और राजनीति वर्तमान का इतिहास।"**

फ्रांसीसी क्रान्ति, अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम तथा भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन जैसी घटनाओं ने आधुनिक लोकतन्त्र एवं राष्ट्रवाद के विकास को प्रभावित किया। इतिहास राजनीतिक संस्थाओं के विकास एवं परिवर्तन को समझने में सहायता प्रदान करता है।

► **2.3.4. राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र (Political Science and Economics):-** राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र का सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ है। अर्थशास्त्र समाज की आर्थिक गतिविधियों, उत्पादन, वितरण एवं उपभोग का अध्ययन करता है, जबकि राजनीति विज्ञान राज्य एवं शासन की नीतियों का अध्ययन करता है। अरस्तु, मनु, कौटिल्य तथा मार्क्स जैसे विचारकों ने राजनीति और अर्थशास्त्र के सम्बन्ध को स्पष्ट किया है | आधुनिक युग में कर व्यवस्था, बजट, गरीबी, बेरोजगारी एवं आर्थिक विकास जैसे विषय राजनीति और अर्थशास्त्र दोनों से जुड़े हुए हैं। **गार्नर (Garner)** के अनुसार, **"राजनीतिक**

समस्याएँ मूलतः आर्थिक समस्याएँ होती हैं।" इस प्रकार अर्थशास्त्र राजनीति विज्ञान का महत्वपूर्ण सहायक विषय माना जाता है।

► 2.3.5. राजनीति विज्ञान और समाजशास्त्र (Political Science and Sociology):- राजनीति विज्ञान और समाजशास्त्र का सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ है। समाजशास्त्र समाज, सामाजिक सम्बन्धों, समूहों एवं सामाजिक व्यवहार का अध्ययन करता है जबकि राजनीति विज्ञान राजनीतिक व्यवस्था व संरचना का अध्ययन करता है। **गार्नर (Garner)** का कहना है, **"समाजशास्त्र को राजनीति विज्ञान के द्वारा राज्य के संगठन और कार्यों के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त होता है जबकि राजनीति विज्ञान को समाजशास्त्र से पर्याप्त मात्रा में राज्यसत्ता के प्रादुर्भाव और सामाजिक नियंत्रण के नियमों का ज्ञान प्राप्त होता है।"**

समाज की सामाजिक संरचना, जाति, वर्ग एवं संस्कृति का राजनीति पर गहरा प्रभाव पड़ता है। राजनीतिक संस्थाएँ भी सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार विकसित होती हैं।

इस प्रकार, दोनों विषय एक-दूसरे के पूरक हैं।

► 2.4. पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text):-

► 2.4.1. दर्शनशास्त्र की राजनीति शास्त्र को देन:- (Contribution of Philosophy to Political Science):-

दर्शनशास्त्र और राजनीति विज्ञान का सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ है। दर्शनशास्त्र राजनीति विज्ञान को नैतिक, वैचारिक एवं आदर्शवादी आधार प्रदान करता है।

दर्शनशास्त्र के कारण राजनीति विज्ञान केवल शक्ति का अध्ययन न होकर जनकल्याण एवं न्याय पर आधारित विषय बन जाता है।

1. आदर्शों की देन :-

दर्शनशास्त्र ने राजनीति विज्ञान को न्याय, स्वतंत्रता, समानता जैसे आदर्श प्रदान किए। इन आदर्शों के आधार पर लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं का विकास हुआ। राजनीति विज्ञान ने इन्हें व्यावहारिक रूप दिया।

2. आदर्श राज्य की अवधारणा :-

दर्शनशास्त्र ने आदर्श राज्य एवं आदर्श शासन की कल्पना प्रस्तुत की। प्लेटो ने The Republic में आदर्श राज्य का वर्णन किया। राजनीति विज्ञान ने इन विचारों को शासन व्यवस्था से जोड़ा।

3. नैतिक आधार प्रदान करना :-

दर्शनशास्त्र राजनीति को नैतिक दिशा प्रदान करता है। यह सही एवं गलत के बीच अन्तर समझाता है। इससे राजनीतिक जनकल्याण की ओर अग्रसर होती हैं।

4. राजनीतिक सिद्धान्तों का विकास :–

लॉक, रूसो, मार्क्स एवं हीगल जैसे दार्शनिकों ने राजनीतिक सिद्धान्तों का विकास किया। इन सिद्धान्तों ने आधुनिक राजनीति को प्रभावित किया। लोकतंत्र एवं समाजवाद जैसी विचारधाराएँ इन्हीं से विकसित हुई हैं।

5. राजनीतिक विचारधाराओं का विकास :–

दर्शनशास्त्र ने उदारवाद, राष्ट्रवाद एवं समाजवाद जैसी विचारधाराओं को जन्म दिया। राजनीति विज्ञान ने इन्हें शासन प्रणाली में अपनाया। इससे राजनीतिक चेतना का विकास हुआ।

6. मानव कल्याण पर बल :–

दर्शनशास्त्र मानव कल्याण एवं आदर्श समाज की स्थापना पर बल देता है। राजनीति विज्ञान भी राज्य को जनहित का साधन बनाना है। दोनों विषय मिलकर समाज के विकास को महत्व देते हैं।

निष्कर्ष :– इस प्रकार स्पष्ट होता है कि दर्शनशास्त्र राजनीति विज्ञान का नैतिक एवं वैचारिक आधार है। दर्शनशास्त्र ने राजनीति विज्ञान को आदर्श, सिद्धान्त एवं विचारधाराएँ प्रदान की है। दोनों विषय मिलकर आदर्श राज्य, उत्तम शासन एवं मानव कल्याण की स्थापना का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

► 2.4.2. इतिहास की राजनीति शास्त्र को देन (Contribution of History to Political Science):-

इतिहास और राजनीति विज्ञान का सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ है। इतिहास भूतकाल की राजनीतिक घटनाओं, संस्थाओं एवं शासन व्यवस्थाओं की जानकारी प्रदान करता है। राजनीति विज्ञान इन ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था को समझता है।

1. राजनीतिक संस्थाओं के विकास की जानकारी :-

इतिहास राज्य, सरकार एवं राजनीतिक संस्थाओं के विकास की जानकारी प्रदान करता है। इससे राजनीति विज्ञान को विभिन्न शासन व्यवस्थाओं को समझने में सहायता मिलती है। राजनीतिक संस्थाओं का वर्तमान स्वरूप इतिहास का परिणाम है।

2. राजनीतिक घटनाओं का ज्ञान :-

इतिहास हमें महत्वपूर्ण राजनीतिक घटनाओं एवं क्रांतियों की जानकारी देता है। फ्रांसीसी क्रांति, अमेरिकी क्रांति एवं भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन ने आधुनिक राजनीति को प्रभावित किया। इन घटनाओं से राजनीतिक सिद्धान्तों का विकास हुआ।

3. राजनीति विज्ञान की प्रयोगशाला :-

इतिहास को राजनीति विज्ञान की "प्रयोगशाला" कहा जाता है | राजनीतिक सिद्धान्तों की सत्यता का परीक्षण ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर किया जाता है। इससे राजनीति विज्ञान अधिक व्यावहारिक बनता है।

4. राजनीतिक विचारधाराओं का विकास :–

इतिहास के अध्ययन से लोकतन्त्र, राष्ट्रवाद एवं समाजवाद जैसी विचारधाराओं का विकास हुआ। विभिन्न ऐतिहासिक घटनाओं ने राजनीतिक चिंतन को नई दिशा प्रदान की। राजनीति विज्ञान ने इन विचारों को अपनाया।

5. राजनीतिक समस्याओं के समाधान में सहायक :–

इतिहास भूतकाल की गलतियों एवं सफलताओं से सीख प्रदान करता है। इससे वर्तमान राजनीतिक समस्याओं का समाधान खोजने में सहायता मिलती है। इतिहास राजनीतिक निर्णयों को अधिक प्रभावी बनाता है।

6. राजनीतिक चेतना का विकास :–

इतिहास राष्ट्रीय भावना एवं राजनीतिक जागरूकता को विकसित करता है। स्वतंत्रता आंदोलनों एवं महान नेताओं के संघर्ष लोगों को प्रेरणा देते हैं। इससे नागरिकों में राजनीतिक चेतना का विकास होता है।

निष्कर्ष (Conclusion) :– अतः स्पष्ट है कि इतिहास और राजनीति विज्ञान एक-दूसरे के पूरक विषय हैं। इतिहास राजनीतिक घटनाओं एवं संस्थाओं के विकास की जानकारी देता है,जबकि राजनीति विज्ञान उनका विश्लेषण करता है|

► 2.4.3. अर्थशास्त्र की राजनीति शास्त्र को देन (Contribution of Economics to Political Science):-

अर्थशास्त्र और राजनीति विज्ञान का सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ है। अर्थशास्त्र मानव की आर्थिक गतिविधियों का अध्ययन करता है, जबकि राजनीति विज्ञान राज्य, सरकार एवं नीतियों का अध्ययन करता है। आधुनिक युग में राजनीतिक निर्णयों पर आर्थिक परिस्थितियों का गहरा प्रभाव पड़ता है।

1. आर्थिक परिस्थितियों का प्रभाव :-

अर्थशास्त्र राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित करता है। किसी देश की आर्थिक स्थिति उसकी नीतियों एवं शासन प्रणाली को निर्धारित करती है। आर्थिक संकट कई बार राजनीतिक अस्थिरता का कारण बनते हैं।

2. लोक-कल्याणकारी राज्य की अवधारणा :-

अर्थशास्त्र ने राजनीति विज्ञान को लोक-कल्याणकारी राज्य की अवधारणा प्रस्तुत की। आधुनिक राज्य शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रोजगार जैसी सुविधाएँ उपलब्ध कराता है। इससे जनकल्याणकारी शासन का विकास हुआ।

3. आर्थिक नीतियों के निर्माण में सहायता :–

सरकार बजट, कर व्यवस्था एवं पंचवर्षीय योजनाएँ अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों के आधार पर बनाती हैं। राजनीति विज्ञान इन नीतियों को लागू करने का कार्य करता है। इससे देश के आर्थिक विकास को गति मिलती है।

4. राजनीतिक विचारधाराओं का विकास :

समाजवाद एवं पूँजीवाद जैसी विचारधाराओं के विकास में अर्थशास्त्र का महत्वपूर्ण योगदान है। कार्ल मार्क्स के आर्थिक विचारों ने राजनीति विज्ञान को नई दिशा दी। इन विचारधाराओं ने विश्व राजनीति को प्रभावित किया।

5. संसाधनों के वितरण का ज्ञान :

अर्थशास्त्र संसाधनों के उचित वितरण एवं उपयोग का ज्ञान प्रदान करता है। राजनीति विज्ञान राज्य के माध्यम से इन संसाधनों का प्रबन्धन करता है। इससे सामाजिक एवं आर्थिक समानता स्थापित करने में सहायता मिलती है।

6. राजनीतिक स्थिरता में योगदान :

आर्थिक विकास राजनीतिक स्थिरता को बढ़ाता है। गरीबी, बेरोजगारी, एवं महंगाई जैसी समस्याएँ राजनीतिक असन्तोष उत्पन्न करती हैं। इसलिए आर्थिक विकास राजनीति की सफलता के लिए आवश्यक माना जाता है।

निष्कर्ष (Conclusion) :- अतः स्पष्ट है कि अर्थशास्त्र और राजनीति विज्ञान एक-दूसरे के पूरक विषय हैं। आर्थिक नीतियाँ संसाधनों का वितरण एवं जनकल्याणकारी नीतियाँ व योजनाएँ राजनीति विज्ञान को अधिक प्रभावी एवं व्यावहारिक बनाती हैं।

► 2.4.4. समाजशास्त्र की राजनीति विज्ञान को देन :- (Contribution or role of Sociology to Political Science):-

समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान का सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ है। समाजशास्त्र समाज, सामाजिक संस्थाओं एवं मानव व्यवहार का अध्ययन करता है, जबकि राजनीति विज्ञान राज्य एवं शासन का अध्ययन करता है।

1. राज्य की उत्पत्ति का ज्ञान :-

समाजशास्त्र यह स्पष्ट करता है कि राज्य समाज से उत्पन्न हुआ है। राजनीतिक संस्थाओं एवं समूहों के विकास से राज्य की स्थापना हुई। इससे राजनीति विज्ञान को राज्य की प्रकृति समझने में सहायता मिलती है।

2. सामाजिक नियमों एवं परम्पराओं की जानकारी :-

समाजशास्त्र समाज की परम्पराओं, रीति-रिवाजों एवं सामाजिक नियमों का अध्ययन करता है। राजनीति विज्ञान इनका प्रभाव राजनीतिक व्यवस्था पर करता है। इससे राजनीतिक शासन की नीतियों को समझना आसान होता है।

3. राजनीतिक संस्थाओं का सामाजिक आधार :-

समाजशास्त्र राजनीतिक संस्थाओं का सामाजिक आधार स्पष्ट करता है। परिवार, धर्म, जाति एवं वर्ग जैसी संस्थाएँ राजनीति को प्रभावित करती हैं।

4. सामाजिक परिस्थितियों का ज्ञान :

समाजशास्त्र समाज की आर्थिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों का अध्ययन करता है। इन परिस्थितियों का प्रभाव राजनीतिक व्यवस्था पर पड़ता है। इससे राजनीति विज्ञान को नीतियाँ बनाने में सहायता मिलती है।

5. राजनीतिक व्यवहार को समझने में सहायता :-

समाजशास्त्र मानव व्यवहार एवं सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है। इससे मतदान व्यवहार, जनमत एवं राजनीतिक चेतना को समझने में सहायता मिलती है। आधुनिक राजनीति में इसका विशेष महत्व है।

निष्कर्ष (Conclusion) : अतः स्पष्ट है कि समाजशास्त्र राजनीति विज्ञान का महत्वपूर्ण सहायक विषय है। दोनों विषयों के संयुक्त अध्ययन से समाज, राज्य एवं राजनीतिक जीवन को बेहतर ढंग से समझा जा सकता है।

► 2.5. अपनी प्रगति जाँचें (Check your progress):-

नीचे कुछ प्रश्न दिए गए हैं। उनके उत्तर देने का प्रयास करें :-

(i) राजनीति विज्ञान को "समाज विज्ञानों का समन्वयकारी विषय" क्यों कहा जाता है?

(ii) दर्शनशास्त्र राजनीति विज्ञान को किस प्रकार नैतिक आधार प्रदान करता है?

(iii) इतिहास को राजनीति विज्ञान की "प्रयोगशाला" क्यों कहा जाता है?

(iv) "राजनीतिक अर्थशास्त्र" (Political Economy) से आप क्या समझते हैं?

(v) राजनीतिक व्यवहार को समझने में समाजशास्त्र की क्या भूमिका है?

(vi) समाजशास्त्र राजनीति विज्ञान को किस प्रकार आधार प्रदान करता है?

(vii) सीले (Seeley) के अनुसार इतिहास और राजनीति विज्ञान के सम्बन्ध को स्पष्ट करने वाली प्रसिद्ध पंक्ति क्या है ?

► 2.6. सारांश (Summary):-

राजनीति विज्ञान एक पृथक विषय होते हुए भी अन्य समाज विज्ञानों के साथ अटूट रूप से जुड़ा हुआ है। इस पाठ के माध्यम से हमने यह समझा कि ज्ञान का कोई भी क्षेत्र स्वतंत्र नहीं है। दर्शनशास्त्र राजनीति का वह वैचारिक आधार है जो 'क्या होना चाहिए' जैसे प्रश्नों का उत्तर देता है और राज्य को नैतिक उद्देश्य प्रदान करता है। प्लेटो और अरस्तु जैसे विचारकों के समय से ही राजनीति और दर्शन एक-दूसरे के पूरक रहे हैं।

इतिहास और राजनीति के सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए फ्रीमैन ने कहा था कि "इतिहास बीती हुई राजनीति है और राजनीति वर्तमान इतिहास है।" अर्थशास्त्र के बिना आधुनिक राजनीति की कल्पना करना असंभव है। किसी भी देश की विदेश नीति या घरेलू नीति उसके आर्थिक हितों (जैसे बजट, व्यापार, मुद्रास्फीति) के इर्द-गिर्द घुमती है | आज के युग में "राजनीतिक अर्थशास्त्र" एक अनिवार्य अध्ययन क्षेत्र बन गया है।

समाजशास्त्र के साथ राजनीति का सम्बन्ध और भी गहरा है क्योंकि राज्य स्वयं एक सामाजिक संस्था है। समाजशास्त्र हमें जाति, धर्म, वर्ग और परिवार जैसी संरचनाओं का ज्ञान देता है, जो चुनाव और शासन व्यवस्था को सीधा प्रभावित करता है। निष्कर्षत: राजनीति विज्ञान अन्य समाज विज्ञानों से सामग्री ग्रहण करता है और बदले में उन्हें एक व्यवस्थित राजनीतिक ढाँचा प्रदान करता है। इन विषयों के बीच का सम्बन्ध केवल निर्भरता का नहीं,

बल्कि सहजीविता का है, जो समाज की समग्र समझ विकसित करने के लिए आवश्यक है।

► 2.7. सूचक शब्द (Key words):–

अन्तः विषय दृष्टिकोण, राजनीतिक दर्शन, राजनीतिक अर्थशास्त्र, दर्शनशास्त्र, लोक-कल्याणकारी राज्य, नैतिक मूल्य, लोकतन्त्र, राजनीतिक विचारधारा।

1. अन्तः विषय दृष्टिकोण :– विभिन्न विषयों के ज्ञान का समन्वय।

2. राजनीतिक दर्शन :– राजनीति के नैतिक और वैचारिक सिद्धान्तों का अध्ययन।

3. राजनीतिक अर्थशास्त्र :– राजनीति और अर्थव्यवस्था के आपसी प्रभाव का अध्ययन।

4. दर्शनशास्त्र :– ज्ञान, सत्य एवं नैतिक मूल्यों का अध्ययन।

5. लोक-कल्याणकारी राज्य :– ऐसा राज्य जो जनता के कल्याण के लिए कार्य करे।

6. नैतिक मूल्य :– सही एवं गलत का ज्ञान देने वाले सिद्धान्त।

7. लोकतन्त्र :– जनता द्वारा चुनी गई सरकार की व्यवस्था।

8. राजनीतिक विचारधारा :– राजनीति से सम्बन्धित सिद्धान्तों एवं विचारों का समूह।

► 2.8. स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions):–

1. राजनीति विज्ञान और इतिहास के घनिष्ठ सम्बन्धों की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

2. "दर्शनशास्त्र के बिना राजनीति विज्ञान जड़हीन है।" इस कथन की विवेचना कीजिए।

3. समाजशास्त्र किस प्रकार राजनीति विज्ञान को सामाजिक पृष्ठभूमि प्रदान करता है? बताइए।

4. आधुनिक युग में राजनीति और अर्थशास्त्र एक ही सिक्के के दो पहलू कैसे हैं? स्पष्ट कीजिए।

5. "इतिहास के बिना राजनीति शास्त्र निरर्थक और आधारहीन है।" व्याख्या कीजिए।

6. विभिन्न समाज विज्ञानों की अन्तनिर्भरता पर एक टिप्पणी लिखिए।

7. अन्य समाज विज्ञानों के अध्ययन से राजनीति विज्ञान के बोध में क्या सुधार आता है?

8. समाज विज्ञानों की परस्पर अन्तनिर्भरता वर्तमान समय में क्यों बढ़ती जा रही है?

9. "राजनीति विज्ञान उन सभी विज्ञानों से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है जो संगठित समाज में मानव से सम्बन्धित हैं।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।

10. "इतिहास भूतकालीन राजनीति है और राजनीति वर्तमान इतिहास है।" फ्रीमैन के इस कथन की व्याख्या कीजिए।

► 2.9. अपनी प्रगति की जाँच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress):-

(i) क्योंकि इसका सम्बन्ध सभी विज्ञानों से होता है।

(ii) दर्शनशास्त्र राजनीति विज्ञान को न्याय, समानता एवं नैतिक मूल्यों का आधार प्रदान करता है।

(iii) क्योंकि राजनीतिक सिद्धान्तों का परीक्षण ऐतिहासिक घटनाओं से होता है।

(iv) "राजनीतिक अर्थशास्त्र" राजनीति और अर्थव्यवस्था के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन है।

(v) समाजशास्त्र मतदान व्यवहार, जनमत एवं राजनीतिक चेतना को समझने में सहायता करता है।

(vi) सामाजिक संस्थाओं एवं सामाजिक परिस्थितियों की जानकारी देकर।

(vii) सीले के अनुसार, "इतिहास के बिना राजनीति विज्ञान जड़हीन और राजनीति के बिना इतिहास निरर्थक है।"

► 2.10. संदर्भ ग्रन्थ / निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings) :-

1. राजनीति शास्त्र के सिद्धान्त (Principles of Political Science) – जे. सी. जोहरी (J. C. Johari)

2. An Introduction to Social Sciences – O. P. Gauba

3. Politics and History – E. H. Carr

4. Political Sociology – A. R. Desai

5. Political Theory – Andrew Heywood

6. Modern Political Analysis – Robert Dahl

7. Political Science and Other Social Sciences – B. L. Fadia

8. The Grammar of Politics – Harold J. Laski

9. Principles of Political Science – Gilchrist

10. A History of Political Theory – George H. Sabine

Unit-II

अध्याय : 3

राज्य - अर्थ, परिभाषा और तत्त्व

SUBJECT : POLITICAL SCIENCE, SEMESTER-1	
COURSE CODE : C24POL101T	AUTHOR: DR. RAJIV VERMA
LESSON NO : 3	
राज्य - अर्थ, परिभाषा और तत्त्व (State : Meaning, Definition and Elements)	

3.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

3.2 प्रस्तावना (Introduction)

3.3 अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main Points of Text)

3.3.1 राज्य का अर्थ और व्युत्पत्ति (Meaning and Etymology of the State)

3.3.2 राज्य की प्रमुख परिभाषाएँ (Definitions of the State)

3.3.3 राज्य के भौतिक तत्त्व: जनसंख्या एवं भू-भाग
(Physical Elements: Population and Territory)

3.3.4 राज्य के राजनीतिक तत्त्व: सरकार एवं संप्रभुता
(Political Elements: Government and Sovereignty)

3.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

3.4.1 'स्टेट' शब्द का इतिहास और मैकियावेली का योगदान
(History of the Word 'State' and Machiavelli's Contribution)

3.4.2 राज्य के अनिवार्य तत्त्व और उनकी सीमाएँ
(Essential Elements of the State and Their Boundaries)

3.4.3 संप्रभुता: राज्य की आत्मा

(Sovereignty: The Soul of the State)

3.4.4 समकालीन युग में लोक कल्याणकारी राज्य की भूमिका

(Role of Welfare State in Contemporary Times)

3.4.5 राज्य, समाज और राष्ट्र में मौलिक अंतर

(Fundamental Differences Between State, Society and Nation)

3.5 अपनी प्रगति जाँचें (Check Your Progress)

3.6 सारांश (Summary)

3.7 सूचक शब्द (Key Words)

3.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

3.9 अपनी प्रगति की जाँच करने के लिए उत्तर (Answers Check Your Progress)

3.10 संदर्भ ग्रंथ / निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

► 3.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives) :-

इस अध्याय में पाठक निम्नलिखित विषयों के बारे में जानकारी हासिल करेंगे–

- 'राज्य' शब्द के राजनीतिक और व्यवहारिक अर्थ को समझना।
- राज्य की उत्पत्ति और उसके ऐतिहासिक विकास का अध्ययन करना।
- विभिन्न राजनीतिक विचारकों द्वारा दी गई राज्य की प्रमुख परिभाषाओं का विश्लेषण करना।

- राज्य के चार आवश्यक तत्त्वों–जनसंख्या, क्षेत्र, सरकार और संप्रभुता का विस्तृत रूप में अध्ययन करना।
- संप्रभुता की अवधारणा को समझते हुए उसे राज्य की सर्वोच्च और स्वतंत्र शक्ति के रूप में पहचानना।
- राज्य, समाज, सरकार और राष्ट्र जैसी संस्थाओं के बीच अंतर स्पष्ट करना।
- आधुनिक राष्ट्र-राज्य (Modern Nation-State) की अवधारणा तथा उसके महत्व का मूल्यांकन करना।

► 3.2 प्रस्तावना (Introduction) :-

राजनीतिक विज्ञान का प्रमुख और केंद्रीय विषय 'राज्य' है। प्रसिद्ध राजनीतिक विचारक गार्नर के अनुसार, राजनीतिक विज्ञान का अध्ययन राज्य से आरम्भ होता है और राज्य पर ही समाप्त होता है। सामान्य जीवन में हम 'राज्य' शब्द का प्रयोग प्रान्तों (जैसे हरियाणा, पंजाब, तेलंगाना) के लिए करते हैं, लेकिन राजनीतिक विज्ञान में इसका अर्थ इससे कहीं अधिक व्यापक है। यहाँ राज्य से आशय एक ऐसे सम्प्रभु राजनीतिक संगठन से है, जो एक निश्चित भू-भाग में रहने वाले लोगों पर शासन करता है और उनके जीवन में व्यवस्था, सुरक्षा और अनुशासन बनाए रखता है।

राज्य का स्वरूप समय के साथ बदलता रहा है। प्राचीन नगर-राज्यों से लेकर आधुनिक राष्ट्र-राज्यों तक इसका लंबा विकास हुआ है। किसी भी

समुदाय को राज्य कहलाने के लिए जनसंख्या, निश्चित भू-भाग या क्षेत्र, सरकार और संप्रभुता–इन चार आवश्यक तत्त्वों का होना अनिवार्य है। इनके बिना राज्य का अस्तित्व संभव नहीं है। राज्य मानव जीवन को संगठित और सुव्यवस्थित बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

► 3.3 अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main Points of Text) :-

► 3.3.1 राज्य का अर्थ एवं उत्पत्ति (Meaning and Etymology of the State) :-

'राज्य' राजनीति विज्ञान की एक प्रमुख अवधारणा है। सामान्यतः राज्य से आशय ऐसे संगठित राजनीतिक समुदाय से है, जो निश्चित भू-भाग में निवास करने वाली जनसंख्या पर शासन करता है तथा कानून, व्यवस्था और सुरक्षा बनाए रखता है। राजनीति विज्ञान में राज्य को समाज की सर्वोच्च राजनीतिक संस्था माना जाता है।

उत्पत्ति (Etymology)- अंग्रेजी शब्द State की उत्पत्ति लैटिन भाषा के Status शब्द से हुई है, जिसका अर्थ स्थिति, अवस्था,पद या दर्जा होती है। प्रारम्भ में यह शब्द किसी व्यक्ति या समाज की स्थिति को व्यक्त करने के लिए प्रयुक्त होता था। समय के साथ इसका अर्थ विस्तृत होता गया और इसका प्रयोग राजनीतिक संगठन के लिए होने लगा। रोमन विचारक सिसरो (Cicero) ने इसका प्रयोग किया था | बाद में मैकियावेली (Machiavelli) ने इस शब्द को आधुनिक राजनीतिक अर्थ प्रदान किया। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "The Prince" में मैकियावेली ने इसका उपयोग आधुनिक राजनीतिक अर्थ में किया।

आधुनिक युग में 'State' से आशय एक संप्रभु राजनीतिक संगठन से है, जिसके पास निश्चित जनसंख्या, क्षेत्र, सरकार और संप्रभुता होती है।

► 3.3.2 राज्य की प्रमुख परिभाषाएँ (Definitions of the State)

विभिन्न राजनीतिक विचारकों ने अपने-अपने दृष्टिकोण के अनुसार राज्य की परिभाषा प्रस्तुत की है जो इस प्रकार है :-

1. **गार्नर** के अनुसार, **"राज्य व्यक्तियों का ऐसा समुदाय है जो एक निश्चित भू-भाग पर स्थायी रूप से निवास करता है, बाहरी नियंत्रण से स्वतंत्र होता है तथा जिसकी एक संगठित सरकार होती है।"**
2. **अरस्तू** के अनुसार **"राज्य परिवारों और ग्रामों का एक ऐसा समुदाय है, जिसका उद्देश्य सम्पन्न जीवन की प्राप्ति है।"**
3. **गिलक्राइस्ट** का कथन है, **"राजनीति-शास्त्र में राज्य उसे कहते हैं, जहाँ कुछ लोग एक निश्चित प्रदेश में एक सरकार के अधीन संगठित होते हैं। यह सरकार आन्तरिक मामलों में अन्य सरकारों से स्वतंत्र होती है।"**
4. **ब्लंटशली** लिखते हैं, **"एक निश्चित प्रदेश के राजनीतिक दृष्टि से संगठित लोग राज्य हैं।"**
5. **हॉब्स** के अनुसार, **"राज्य ऐसा व्यक्ति है जो पारस्परिक समझौते के आधार पर एक जनसमूह के लिए उस जनसमूह के समस्त साधनों को आवश्यकतानुसार जनता की शान्ति और उसकी सुरक्षा के लिए प्रयोग कर सके।"**

6. अमेरिका के राष्ट्रपति **वुडरो विल्सन** के अनुसार, **"एक निश्चित भू-भाग पर कानून के लिए संगठित जनता का नाम राज्य है।"**

► 3.3.3. राज्य के भौतिक तत्त्व : जनसंख्या एवं भू-भाग (Physical Elements : Population and Territory) :-

राज्य के अस्तित्व के लिए कुछ मूलभूत तत्त्वों का होना आवश्यक है। इनमें जनसंख्या और भू-भाग राज्य के भौतिक तत्त्व कहलाते हैं। इनके अभाव में राज्य की कल्पना संभव नहीं है।

(क)जनसंख्या (Population) – जनसंख्या (Population) राज्य का आधार है। जिस प्रकार लोगों के बिना समाज की कल्पना नहीं की जा सकती, उसी प्रकार जनसंख्या के बिना राज्य भी अस्तित्व में नहीं रह सकता | **गार्नर** के अनुसार, जनता के बिना राज्य की कल्पना करना असंभव है।

राज्य की जनसंख्या कितनी होनी चाहिए, इस विषय पर विद्वानो में वैचारिक मतभेद हैं। प्लेटो ने आदर्श राज्य की जनसंख्या 5040 निर्धारित की थी, जबकि रूसो ने लगभग 10,000 जनसंख्या को उपयुक्त माना। आधुनिक युग में जनसंख्या की कोई निश्चित सीमा स्वीकार नहीं की जाती, क्योंकि प्रत्येक राज्य की परिस्थितियाँ अलग-अलग होती हैं। आज विश्व मे जनसंख्या की दृष्टि से राज्यों में काफी भिन्नता देखने को मिलती है | भारत और चीन जैसे देशों की जनसंख्या बहुत अधिक है, जबकि मोनाको और सैन मैंरीनो जैसे राज्यों की जनसंख्या अपेक्षाकृत बहुत कम है। इसलिए जनसंख्या की संख्या से अधिक

उसके गुणों और क्षमता को महत्त्व दिया जाता है। महत्त्वपूर्ण यह है कि जनसंख्या राज्य के संसाधनों और आवश्यकताओं के अनुरूप हो।

(ख) भू-भाग (Territory)-

भू-भाग राज्य का दूसरा अनिवार्य तत्त्व है। प्रत्येक राज्य का एक निश्चित क्षेत्र होता है, जिसके भीतर उसकी सत्ता और कानून लागू होते हैं। बिना निश्चित भू-भाग के आप किसी समुदाय को राज्य नहीं कह सकते।

गार्नर का मत था कि कोई समुदाय तब तक पूर्ण राज्य का रूप धारण नहीं कर सकता, जब तक वह किसी निश्चित भू-भाग पर स्थायी रूप से निवास न करने लगे। इसका प्रमुख उदाहरण यहूदी समुदाय है, जो लंबे समय तक विभिन्न देशों में बिखरा रहा। 1948 में इज़राइल की स्थापना के बाद उन्हें अपना निश्चित भू-भाग प्राप्त हुआ और उनका राज्य संगठित रूप में स्थापित हुआ। राज्य के भू-भाग में केवल भूमि ही नहीं, बल्कि उसके अंतर्गत आने वाली नदियाँ, झीलें, पर्वत, वन, समुद्री क्षेत्र तथा वायु-सीमा भी शामिल होती हैं। राज्य का क्षेत्रफल छोटा या बड़ा हो सकता है, लेकिन उसका निश्चित होना आवश्यक है।

► 3.3.4 राज्य के राजनीतिक तत्त्व: सरकार एवं संप्रभुता (Political Elements: Government and Sovereignty) -

राज्य के चार आवश्यक तत्त्वों में सरकार और संप्रभुता को राजनीतिक तत्त्व माना जाता है। जनसंख्या और भू-भाग राज्य को भौतिक आधार प्रदान

करते हैं, जबकि सरकार और संप्रभुता राज्य को राजनीतिक स्वरूप देती हैं। इनके बिना राज्य अपनी शक्ति और पहचान बनाए नहीं रख सकता।

(क)**सरकार (Government) :-** सरकार राज्य का तीसरा आवश्यक तत्त्व है। किसी निश्चित भू-भाग में रहने वाले लोगों का समूह तब तक राज्य नहीं कहलाता, जब तक उसके पास शासन चलाने वाली कोई संगठित व्यवस्था न हो। सरकार राज्य की इच्छाओं को व्यक्त करती है ,कानून बनाती है तथा कानूनों को लागू करवाती है।

सरकार राज्य और जनता के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी का कार्य करती है। राज्य एक अमूर्त संस्था है, जबकि सरकार उसका कार्यकारी रूप है। गार्नर के अनुसार, सरकार वह माध्यम है जिसके द्वारा राज्य अपने उद्देश्यों और नीतियों को व्यवहार में लाता है। सरकार ही समाज में शांति और व्यवस्था स्थापित करती है।

आज सरकारों को तीन अंगों – विधायिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका – में विभाजित किया गया है। ये क्रमशः कानून बनाने, कानूनों को क्रियान्वित करने और कानून सम्बन्धी विवादों को सुलझाने का कार्य करते हैं। सरकार के स्वरूप विभिन्न देशों में अलग-अलग हो सकते हैं। भारत व ब्रिटेन में संसदीय शासन प्रणाली, संयुक्त राज्य अमेरिका में अध्यक्षीय शासन प्रणाली |

(ख) संप्रभुता (Sovereignty):- संप्रभुता का अर्थ है कि राज्य अपने क्षेत्र में सर्वोच्च सत्ता रखता है और किसी बाहरी शक्ति के अधीन नहीं होता।

संप्रभुता के दो प्रमुख रूप होते हैं–

1. **आंतरिक संप्रभुता (Internal Sovereignty):-** इसका अर्थ है कि राज्य अपने क्षेत्र में रहने वाले सभी व्यक्तियों, समूहों और संस्थाओं पर सर्वोच्च अधिकार रखता है। राज्य के कानूनों का पालन सभी के लिए अनिवार्य होता है।

2. **बाह्य संप्रभुता (External Sovereignty) :-** इसका अर्थ है कि राज्य बाहरी नियंत्रण से स्वतंत्र होता है तथा अपनी विदेश नीति और अंतरराष्ट्रीय संबंधों का निर्धारण स्वयं करता है।

भारत को 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्रता प्राप्त हुई और बाद में वह एक पूर्ण संप्रभु गणराज्य के रूप में स्थापित हुआ |

► 3.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग(Further Main Body of the Text) :-

► 3.4.1 'स्टेट' शब्द का इतिहास और मैकियावेली का योगदान (History of the Word 'State' and Machiavelli's Contribution) :-

राजनीतिक विज्ञान में 'स्टेट' (State या राज्य) शब्द को आधुनिक अर्थ, स्वरूप प्रदान करने का मुख्य श्रेय इटली के महान दार्शनिक निकोलो मैकियावेली को जाता है। उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "The Prince" में Lo Stato शब्द का प्रयोग किया था। इस शब्द का प्रयोग राजनीतिक सत्ता और शासन व्यवस्था के लिए किया गया। यही शब्द आगे चलकर अंग्रेज़ी भाषा के State तथा हिन्दी के राज्य के रूप में प्रचलित हुआ।

मैकियावेली ने राज्य को एक स्वतंत्र और संगठित राजनीतिक इकाई के रूप में प्रस्तुत किया। उनके अनुसार राज्य का प्रमुख उद्देश्य व्यवस्था बनाए रखना, अपनी शक्ति को सुरक्षित रखना तथा जनता पर प्रभावी नियंत्रण स्थापित करना है। मैकियावेली ने राजनीति को धार्मिक और नैतिक बंधनों से अलग करके व्यावहारिक दृष्टिकोण से समझाया। इसी कारण उन्हें आधुनिक राज्य अवधारणा का प्रवर्तक तथा राजनीतिक यथार्थवाद का जनक माना जाता है। उनके द्वारा प्रयुक्त "लो स्टेटो" शब्द ने आधुनिक राज्य की अवधारणा को स्पष्ट रूप प्रदान किया और बाद में यह राजनीतिक विज्ञान की एक केंद्रीय संकल्पना बन गया।

► **3.4.2 राज्य के अनिवार्य तत्त्व और उनकी सीमाएँ (Essential Elements of State and Their Boundaries) :-** हम राज्य के चार आवश्यक तत्त्वों की चर्चा कर चुके हैं | ये आवश्यक है, किन्तु प्रत्येक तत्व की कुछ व्यावहारिक सीमाएँ भी होती हैं। इन सीमाओं को निम्नलिखित प्रकार से समझा जा सकता है–

1. जनसंख्या की सीमाएँ: -

- **संख्या की कोई निश्चित सीमा नहीं –** किसी राज्य की जनसंख्या कितनी होनी चाहिए, इसका कोई सार्वभौमिक मापदण्ड नहीं है। विभिन्न राज्यों की परिस्थितियों के अनुसार जनसंख्या का आकार भिन्न हो सकता है।
- **संसाधनों पर दबाव –** यदि जनसंख्या अत्यधिक बढ़ जाए तो भोजन, आवास, शिक्षा तथा रोजगार जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। वहीं बहुत कम जनसंख्या भी विकास में बाधा बन सकती है |

2. भू-भाग की सीमाएँ: -

- **निश्चित सीमाओं का बंधन –** प्रत्येक राज्य का भू-भाग निश्चित सीमाओं से घिरा होता है, जिनके बाहर उसकी सत्ता लागू नहीं होती।
- **सीमा-विवाद की समस्या –** कई बार पड़ोसी राज्यों के साथ सीमा संबंधी विवाद उत्पन्न हो जाते हैं, जिससे शांति और सुरक्षा प्रभावित हो सकती है।

3. सरकार की सीमाएँ: -

- **संवैधानिक नियंत्रण –** सरकार अपनी इच्छानुसार कार्य नहीं कर सकती। उसे संविधान और कानूनों के अनुसार ही शासन करना पड़ता है।
- **परिवर्तनशील स्वरूप –** सरकारें स्थायी नहीं होतीं। चुनाव या अन्य संवैधानिक प्रक्रियाओं के माध्यम से उनमें परिवर्तन होता रहता है।

4. संप्रभुता की सीमाएँ: -

- **अंतरराष्ट्रीय दायित्व –** आज राज्यों को अंतरराष्ट्रीय कानूनों, संधियों तथा वैश्विक संगठनों के नियमों का पालन करना पड़ता है।
- **वैश्वीकरण का प्रभाव –** वैश्वीकरण और अंतरराष्ट्रीय सहयोग के कारण राज्य की स्वतंत्र कार्यक्षमता कुछ हद तक सीमित हो जाती है।

► 3.4.3 संप्रभुता : राज्य की आत्मा (Sovereignty : The Soul of the State) :-

राज्य के सभी तत्त्वों में संप्रभुता का स्थान सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। यह वह शक्ति है जो राज्य को स्वतंत्र अस्तित्व देती है। संप्रभुता का तात्पर्य

राज्य की सर्वोच्च सत्ता से है। राज्य अपने क्षेत्र में कानून बनाने, उन्हें लागू करने तथा व्यवस्था बनाये रखने का अंतिम अधिकार रखता है। साथ ही, वह किसी विदेशी शक्ति के आदेशों का पालन करने के लिए बाध्य नहीं होता।

बोडिन के अनुसार, संप्रभुता राज्य की सर्वोच्च और स्थायी शक्ति है। इसी के आधार पर राज्य अपने क्षेत्र में अंतिम अधिकार रखता है और स्वतंत्र रूप से शासन करता है। इसलिए संप्रभुता को राज्य की पहचान और अस्तित्व का आधार तथा "राज्य की आत्मा" कहा जाता है। **ऑस्टिन** के अनुसार, **"संप्रभुता राज्य की वह सर्वोच्च शक्ति है, जिसके आदेशों का पालन समाज के सभी लोग करते हैं।"** उनके अनुसार राज्य में संप्रभु सत्ता किसी अन्य शक्ति के नियंत्रण में नहीं होती।

► 3.4.4. समकालीन युग में लोक कल्याणकारी राज्य की भूमिका (Role of Welfare State in Contemporary Times) :–

आधुनिक युग में राज्य का कार्य केवल कानून व्यवस्था बनाये रखना और बाह्य आक्रमणों से रक्षा करना ही नहीं है। आज राज्य को लोक कल्याणकारी राज्य के रूप में देखा जाता है। लोक कल्याणकारी राज्य के कार्य निम्न हैं :-

1. **शिक्षा का प्रसार –** आज राज्य सभी नागरिकों तक शिक्षा पहुँचाने का प्रयास करता है। विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा छात्रवृत्ति योजनाओं के माध्यम से शिक्षा के स्तर को बढ़ाया गया है।

2. **स्वास्थ्य की देखभाल –** जनता को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध कराना राज्य का महत्वपूर्ण कार्य है। अस्पतालों की स्थापना, टीकाकरण और स्वास्थ्य योजनाओं के द्वारा लोगों के स्वास्थ्य की रक्षा की जाती है।

3. **सामाजिक सुरक्षा –** राज्य समाज के वृद्ध, कमजोर, बेरोजगार एवं जरूरतमंद लोगों की सहायता करने हेतु विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं के माध्यम से सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाती है।

4. **नागरिक अधिकारों की रक्षा –** राज्य नागरिकों के अधिकारों और स्वतंत्रताओं की रक्षा करता है। कानून के माध्यम से सभी को न्याय और समान अवसर उपलब्ध कराने का प्रयास किया जाता है |

5. **कानून और व्यवस्था बनाये रखना –** राज्य का प्रमुख कार्य समाज में शांति और व्यवस्था बनाये रखना है। पुलिस, न्यायालय एवं प्रशासनिक संस्थाओं के माध्यम से कानून का पालन सुनिश्चित किया जाता है।

► 3.4.5. राज्य, समाज और राष्ट्र में मौलिक अंतर (Fundamental differences between State, Society and Nation) :-

राजनीति विज्ञान तथा समाजशास्त्र के अध्ययन में राज्य, समाज और राष्ट्र तीन अत्यंत महत्वपूर्ण अवधारणाएँ हैं। सामान्यतः इन शब्दों का प्रयोग एक-दूसरे के स्थान पर कर दिया जाता है, किन्तु वास्तव में इनका अर्थ, स्वरूप, उद्देश्य तथा आधार अलग-अलग होते हैं। समाज सामाजिक संबंधों का व्यापक संगठन है, राज्य एक संगठित राजनीतिक संस्था है, जबकि राष्ट्र सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं भावनात्मक एकता पर

आधारित समुदाय है। यद्यपि ये तीनों अवधारणाएँ परस्पर जुड़ी हुई हैं, फिर भी इनके कार्य, शक्ति, संगठन तथा सदस्यता के आधार में महत्वपूर्ण भिन्नताएँ पाई जाती हैं। किसी भी राजनीतिक व्यवस्था और सामाजिक संरचना को सही ढंग से समझने के लिए राज्य, समाज और राष्ट्र के बीच के अंतर को जानना आवश्यक है। इन्हीं अंतरों को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से स्पष्ट किया गया है।

1. अर्थ-

समाज व्यक्तियों के बीच स्थापित सामाजिक संबंधों का समूह है। यह मानव जीवन के साथ विकसित हुआ है और लोगों को एक-दूसरे से जोड़ने का कार्य करता है। राज्य एक राजनीतिक संगठन है, जिसके चार आवश्यक तत्व—जनसंख्या, निश्चित भू-भाग, सरकार और संप्रभुता—होते हैं। यह कानून और शासन व्यवस्था पर आधारित होता है। राष्ट्र उन लोगों का समुदाय है जिनमें समान इतिहास, संस्कृति, परंपराओं और राष्ट्रीय भावना के कारण एकता की भावना पाई जाती है।

2. उत्पत्ति-

समाज की उत्पत्ति मानव के सामाजिक स्वभाव के कारण हुई। मनुष्य अकेले नहीं रह सकता, इसलिए समाज का विकास स्वाभाविक रूप से हुआ। राज्य का निर्माण समाज में शांति, सुरक्षा और व्यवस्था बनाए रखने की आवश्यकता के कारण हुआ। यह एक संगठित राजनीतिक संस्था के रूप में विकसित हुआ। राष्ट्र का उदय राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक समानता और साझा पहचान की भावना के विकास के साथ हुआ।

3. उद्देश्य-

समाज का उद्देश्य व्यक्तियों के बीच सहयोग, सद्भाव और सामाजिक व्यवस्था स्थापित करना है, जिससे सभी का विकास हो सके। राज्य का मुख्य उद्देश्य कानून-व्यवस्था बनाए रखना, नागरिकों की रक्षा करना और जनकल्याण संबंधी कार्य करना है। राष्ट्र का उद्देश्य लोगों में राष्ट्रीय एकता, देशभक्ति और सामूहिक पहचान की भावना को मजबूत करना है।

4. क्षेत्र-

समाज का क्षेत्र बहुत व्यापक होता है। यह सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और नैतिक जीवन के लगभग सभी पहलुओं को प्रभावित करता है। राज्य का कार्यक्षेत्र मुख्य रूप से राजनीतिक और प्रशासनिक मामलों तक सीमित रहता है। राष्ट्र का क्षेत्र भावनात्मक और सांस्कृतिक एकता से जुड़ा होता है तथा इसके सदस्य विभिन्न क्षेत्रों में भी रह सकते हैं।

5. संगठन-

समाज का संगठन प्रायः अनौपचारिक होता है। यह परंपराओं, रीति-रिवाजों और सामाजिक मान्यताओं के आधार पर चलता है। राज्य का संगठन औपचारिक होता है। यह संविधान, कानून, न्यायपालिका और प्रशासनिक संस्थाओं के माध्यम से संचालित होता है। राष्ट्र का संगठन कानूनी आधार से अधिक सांस्कृतिक और भावनात्मक आधार पर विकसित होता है।

6. शक्ति-

समाज के पास कानूनी शक्ति नहीं होती। यह सामाजिक स्वीकृति, नैतिकता और जनमत के माध्यम से प्रभाव डालता है। राज्य के पास वैधानिक शक्ति होती है। यह कानून बना सकता है तथा उनके उल्लंघन पर दंड भी दे सकता है। राष्ट्र की शक्ति लोगों की राष्ट्रीय निष्ठा, एकता और देशभक्ति की भावना में निहित होती है।

7. आधार-

समाज का आधार सामाजिक संबंध, सहयोग, पारस्परिक विश्वास और सामूहिक जीवन है। राज्य का आधार संप्रभुता, कानून, शासन और राजनीतिक संगठन है। राष्ट्र का आधार साझा इतिहास, संस्कृति, भाषा, परंपराएँ और राष्ट्रीय चेतना है।

8. सदस्यता-

समाज की सदस्यता व्यापक होती है। एक व्यक्ति एक साथ कई सामाजिक समूहों और समाजों का सदस्य हो सकता है। राज्य की सदस्यता नागरिकता के आधार पर निर्धारित होती है और व्यक्ति राज्य के कानूनों का पालन करने के लिए बाध्य होता है। राष्ट्र की सदस्यता राष्ट्रीय पहचान और भावनात्मक जुड़ाव पर आधारित होती है। एक राष्ट्र के लोग विभिन्न राज्यों में भी निवास कर सकते हैं।

निष्कर्ष-

समाज, राज्य और राष्ट्र तीनों अलग-अलग अवधारणाएँ हैं, लेकिन एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। समाज सामाजिक संबंधों का समूह है, राज्य राजनीतिक

संगठन है और राष्ट्र भावनात्मक तथा सांस्कृतिक एकता का प्रतीक है। मानव जीवन और सामाजिक व्यवस्था को समझने के लिए इन तीनों के बीच का अंतर जानना आवश्यक है।

► 3.5 अपनी प्रगति जाँचें (Check Your Progress) :-

नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास करें :-

(i) आधुनिक राजनीतिक अर्थ में "स्टेट (State)" शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग किस विचारक ने किया था?

(ii) राज्य और सरकार में से कौन अमूर्त (Invisible) है और कौन मूर्त (Visible)?

(iii) "लो स्टेटो" (Lo Stato) शब्द का प्रयोग किन पुस्तक में किया गया था?

(iv) राष्ट्र और राज्य में एक प्रमुख अन्तर लिखिए।

(v) गार्नर के अनुसार राज्य के प्रमुख तत्व कौन-कौन से हैं?

(vi) क्या संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO) राजनीति विज्ञान की दृष्टि से एक 'राज्य' है?

► 3.6 सारांश (Summary) :-

राजनीति विज्ञान में राज्य को सबसे महत्वपूर्ण अवधारणा माना जाता है। इस अध्याय में राज्य के अर्थ, उसकी प्रमुख विशेषताओं तथा आवश्यक तत्वों का अध्ययन किया गया। "स्टेट" शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के Status शब्द से हुई है। आधुनिक राजनीतिक अर्थ में इस शब्द को लोकप्रिय बनाने का श्रेय निकोलो मैकियावेली को दिया जाता है, जिन्होंने अपनी प्रसिद्ध कृति द प्रिंस (The Prince) में इसका प्रयोग किया।

विभिन्न विद्वानों ने राज्य की अलग-अलग परिभाषाएँ दी हैं, जिनमे गार्नर की परिभाषा विशेष रूप से प्रसिद्ध मानी जाती है। उनके अनुसार राज्य के निर्माण के लिए जनसंख्या, निश्चित भू-भाग, सरकार तथा संप्रभुता ये चारों तत्व आवश्यक हैं। इसमें संप्रभुता को सबसे महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है, क्योंकि यही राज्य को स्वतंत्र और सर्वोच्च सत्ता प्रदान करती है | इस अध्ययन में यह भी स्पष्ट किया गया कि राज्य, सरकार, समाज और राष्ट्र एक-दूसरे से भिन्न अवधारणाएँ हैं।

राज्य एक राजनीतिक संस्था है, सरकार उसका कार्यकारी स्वरूप है, समाज सामाजिक संबंधों का व्यापक संगठन है तथा राष्ट्र सांस्कृतिक और भावनात्मक एकता पर आधारित समुदाय है। आज राज्य के कार्य केवल कानून-व्यवस्था बनाए रखने और देश की सुरक्षा तक सीमित नहीं रह गए हैं। नागरिकों की शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा तथा जीवन स्तर में सुधार लाने की जिम्मेदारी भी राज्य निभाता है। इसी व्यापक भूमिका के कारण आधुनिक राज्य को लोक कल्याणकारी राज्य कहा जाता है।

► **3.7. सूचक शब्द (Key Words):** लो स्टेटो, बोडिन , राष्ट्र, समाज, संयुक्त राष्ट्र संघ, वैश्वीकरण, सम्प्रभुता

1. लो स्टेटो – मैकियावेली द्वारा प्रयुक्त राज्य के लिए इतावली शब्द।
2. बोडिन (Bodin) — सम्प्रभुता सिद्धांत के प्रथम व्यवस्थित प्रतिपादक।
3. राष्ट्र (Nation) — समान संस्कृति, इतिहास और भावनाओं से जुड़ा हुआ समुदाय।

4. समाज (Society) — सामाजिक संबंधों का व्यापक संगठन।

5. संयुक्त राष्ट्रसंघ (U.N.O.) — विश्व शांति और सहयोग हेतु अंतरराष्ट्रीय संगठन।

6. वैश्वीकरण – विश्व के देशों के बीच बढ़ती परस्पर निर्भरता।

7. सम्प्रभुता – राज्य की सर्वोच्च व स्वतंत्र शक्ति।

► 3.8. स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions):-

1. राज्य को परिभाषित कीजिए। राज्य एवं समाज में अंतर स्पष्ट कीजिए।

2. राज्य के भौतिक एवं राजनीतिक तत्वों को सूचीबद्ध कीजिए।

3. उन तत्वों का वर्णन कीजिए, जो राज्य का निर्माण करते हैं।

4. 15 अगस्त, 1947 से पहले भारत को तकनीकी दृष्टि से 'राज्य' नहीं माना जाता था ? तर्क सहित उत्तर दीजिए |

5. राज्य का अर्थ तथा इसके आवश्यक तत्त्वों का वर्णन करें । राज्य के तत्त्वों में से कौन-सा तत्त्व अधिक महत्वपूर्ण है और क्यों?

6. राज्य के कल्याणकारी कार्यों का विस्तृत वर्णन कीजिए।

7. राज्य की विशेषताएँ बताते हुए इसके ऐतिहासिक विकास क्रम को स्पष्ट कीजिए।

► 3.9. अपनी प्रगति की जाँच करने के लिए (Answers to Check Your Progress) :-

(i) निकोलो मैकियावेली ने।

(ii) राज्य अमूर्त (Invisible) होता है तथा सरकार मूर्त (Visible) होती है।

(iii) मैकियावेली ने अपनी पुस्तक 'The Prince' में।

(iv) राष्ट्र भावनात्मक एवं सांस्कृतिक एकता पर आधारित होता है, जबकि राज्य एक राजनीतिक संगठन होता है।

(v) चार प्रमुख तत्त्व – जनसंख्या, निश्चित भू-भाग, सरकार एवं सम्प्रभुता।

(vi) नहीं, संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO) राजनीति विज्ञान की दृष्टि से राज्य नहीं है; क्योंकि इसके पास स्वयं की स्थायी जनसंख्या, निश्चित भू-भाग और सम्प्रभुता नहीं है | यह एक अंतर्राष्ट्रीय संगठन है।

► 3.10. संदर्भ ग्रन्थ / निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings) :-

1. आधुनिक विचार के मूल सिद्धान्त – डॉ. बी. एल. फड़िया

2. राजनीति शास्त्र – ए. सी. कपूर

3. आधुनिक राजनीतिक सिद्धान्त – ओ. पी. गाबा

4. Strategies of State Building — J. C. Johari

5. The State in Political Theory — S. P. Verma

6. Introduction to the Constitution of India — D. D. Basu

7. A Grammar of Politics — Harold J. Laski

8. Political Theory: An Introduction — Andrew Heywood

9. Political Institutions — R. G. Gettel

10. The Prince — Niccolò Machiavelli.

अध्याय : 4

राज्य की उत्पत्ति और विकास

SUBJECT : POLITICAL SCIENCE, SEMESTER-1	
COURSE CODE : C24POL101T	AUTHOR: DR. RAJIV VERMA
LESSON NO : 4	
राज्य की उत्पत्ति और विकास (Theory of Origin and Development)	

4.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

4.2. प्रस्तावना (Introduction)

4.3. अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main Points of Text)

4.3.1. राज्य की उत्पत्ति के पारंपरिक सिद्धांत : दैवीय एवं शक्ति सिद्धांत (Traditional Theories: Divine and Force Theory)

4.3.2. सामाजिक समझौते का सिद्धांत : हॉब्स, लॉक और रूसो (Social Contract Theory: Hobbes, Locke and Rousseau)

4.3.3. 'प्राकृतिक अवस्था' और 'अनुबंध' की अवधारणा (Concepts of State of Nature and Contract)

4.3.4. ऐतिहासिक या विकासवादी सिद्धांत (Historical or Evolutionary Theory)

4.3.5. राज्य के विकास के विभिन्न चरण (Various Stages of the Development of State)

4.4. पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

4.4.1. राजा की दैवीय शक्ति और आधुनिक युग में इसकी प्रासंगिकता का अंत (Divine Right of Kings and the End of its Relevance)

4.4.2. शक्ति सिद्धांत की सीमाएँ : 'बल' बनाम 'सहमति' (Limitations of Force Theory: Force vs Consent)

4.4.3. लेवियाथन से सामान्य इच्छा तक : समझौते के बदलते स्वरूप (From Leviathan to General Will: Changing Forms of Contract)

4.4.4. राज्य के विकास में सहायक तत्व : रक्त संबंध, धर्म और राजनीतिक चेतना (Factors in State Development: Kinship, Religion and Political Consciousness)

4.4.5. कबीला राज्य से आधुनिक राष्ट्र-राज्य का सफर (Journey from Tribal State to Modern Nation-State)

4.5. अपनी प्रगति जाँचें (Check Your Progress)

4.6. सारांश (Summary)

4.7. सूचक शब्द (Key Words)

4.8. स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

4.9. अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answer check your progress)

4.10. संदर्भ ग्रंथ / निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

► 4.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives) :-

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी राज्य की उत्पत्ति से संबंधित विभिन्न सिद्धांतों तथा उनके ऐतिहासिक और वैचारिक आधारों को समझने में सक्षम होंगे। वे राज्य की उत्पत्ति के संबंध में प्रस्तुत प्रमुख सिद्धांतों का तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक अध्ययन कर सकेंगे। साथ ही, राज्य की स्थापना और विकास की प्रक्रिया को विभिन्न दृष्टिकोणों से समझने का प्रयास करेंगे। इस अध्याय के अध्ययन के बाद विद्यार्थी-

1. राज्य की उत्पत्ति से संबंधित विभिन्न ऐतिहासिक, धार्मिक तथा काल्पनिक सिद्धांतों की मूल अवधारणाओं को समझ सकेंगे।

2. दैवीय उत्पत्ति सिद्धांत (Divine Origin Theory) का अध्ययन करते हुए यह जान सकेंगे कि किस प्रकार राज्य को ईश्वर की देन माना गया तथा इस सिद्धांत का राजनीति और शासन व्यवस्था पर क्या प्रभाव पड़ा।

3. शक्ति सिद्धांत (Force Theory) की व्याख्या करते हुए राज्य के निर्माण में बल, विजय और प्रभुत्व की भूमिका को समझ सकेंगे।

4. सामाजिक समझौता सिद्धांत (Social Contract Theory) के अंतर्गत थॉमस हॉब्स, जॉन लॉक तथा जीन जैक्स रूसो के विचारों का तुलनात्मक विश्लेषण कर सकेंगे।

5. विकासवादी अथवा ऐतिहासिक सिद्धांत (Evolutionary Theory) को राज्य की उत्पत्ति का सर्वाधिक वैज्ञानिक और यथार्थवादी सिद्धांत मानने के कारणों को समझ सकेंगे।

6. राज्य के क्रमिक विकास की प्रक्रिया का अध्ययन करते हुए परिवार, कबीले, जनजाति, समुदाय तथा आधुनिक राष्ट्र-राज्य तक की विकास यात्रा को स्पष्ट रूप से समझ सकेंगे।

7. ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में राज्य की बदलती प्रकृति, स्वरूप और कार्यों का आलोचनात्मक मूल्यांकन करने में सक्षम होंगे।

► 4.2 प्रस्तावना (Introduction) :-

राजनीति विज्ञान में राज्य को सबसे महत्वपूर्ण और केंद्रीय संस्था माना जाता है। मानव जीवन का कोई भी संगठित स्वरूप राज्य के बिना पूर्ण नहीं माना जा सकता। किंतु यह प्रश्न सदैव विचारकों के लिए आकर्षण का विषय रहा है कि राज्य की उत्पत्ति कैसे हुई और यह संस्था किन परिस्थितियों में अस्तित्व में आई। इसी प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए विभिन्न युगों में अनेक राजनीतिक विचारकों ने राज्य की उत्पत्ति संबंधी सिद्धांतों का प्रतिपादन किया।

राज्य की उत्पत्ति का इतिहास अत्यंत प्राचीन और जटिल है। मानव सभ्यता के प्रारंभिक काल में लिखित अभिलेखों और ऐतिहासिक प्रमाणों का अभाव था, जिसके कारण राज्य की उत्पत्ति को स्पष्ट रूप से समझना कठिन था। परिणामस्वरूप प्रारंभिक विचारकों ने धार्मिक मान्यताओं, मिथकों तथा कल्पनाओं के

आधार पर विभिन्न सिद्धांत प्रस्तुत किए। समय के साथ मानव बुद्धि और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास ने राज्य की उत्पत्ति को अधिक तर्कसंगत और यथार्थवादी ढंग से समझने का मार्ग प्रशस्त किया।

इस अध्याय में राज्य की उत्पत्ति से संबंधित प्रमुख सिद्धांतों का अध्ययन किया जाएगा। दैवीय उत्पत्ति सिद्धांत के अनुसार राज्य ईश्वर की देन है और शासक ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता है। इसके विपरीत शक्ति सिद्धांत यह प्रतिपादित करता है कि राज्य का जन्म बल और विजय के आधार पर हुआ। सामाजिक समझौता सिद्धांत के समर्थकों का मत है कि राज्य मनुष्यों के बीच हुए आपसी समझौते का परिणाम है, जिसके माध्यम से उन्होंने सुरक्षा और व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास किया।

अंततः विकासवादी अथवा ऐतिहासिक सिद्धांत राज्य की उत्पत्ति को एक दीर्घकालिक सामाजिक प्रक्रिया का परिणाम मानता है। इस सिद्धांत के अनुसार राज्य किसी एक व्यक्ति, घटना या समझौते की देन नहीं है, बल्कि यह मानव समाज के निरंतर विकास, अनुभवों और बदलती आवश्यकताओं के फलस्वरूप धीरे-धीरे विकसित हुआ है। वर्तमान समय में इसी सिद्धांत को राज्य की उत्पत्ति की सबसे अधिक वैज्ञानिक, यथार्थवादी और स्वीकार्य व्याख्या माना जाता है।

► 4.3. अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main Points of Text):-

► 4.3.1. राज्य की उत्पत्ति के पारंपरिक सिद्धांत : दैवीय एवं शक्ति सिद्धांत (Traditional Theories: Divine and Force Theory)

दैवीय उत्पत्ति सिद्धांत (Divine Origin Theory) :-

दैवीय उत्पत्ति सिद्धांत राज्य की उत्पत्ति का सबसे प्राचीन सिद्धांत माना जाता है। इस सिद्धांत के अनुसार राज्य की स्थापना ईश्वर द्वारा की गई है और शासक ईश्वर का प्रतिनिधि होता है। प्राचीन तथा मध्यकालीन काल में इस सिद्धांत को व्यापक मान्यता प्राप्त थी। उस समय लोगों का विश्वास था कि राजा को शासन करने का अधिकार सीधे ईश्वर से प्राप्त होता है। इसलिए राजा की आज्ञा का पालन करना प्रजा का धार्मिक और नैतिक कर्तव्य माना जाता था।

दैवीय उत्पत्ति सिद्धांत की विशेषताएँ :-

1. राज्य ईश्वर की देन है :-

इस सिद्धांत के अनुसार राज्य की उत्पत्ति मनुष्य द्वारा नहीं बल्कि ईश्वर की इच्छा से हुई है। राज्य को एक पवित्र संस्था माना जाता है। लोगों का विश्वास था कि ईश्वर ने समाज में व्यवस्था बनाए रखने के लिए राज्य की स्थापना की है। इसलिए राज्य के अस्तित्व को दैवी शक्ति से जोड़ा जाता है। यही इस सिद्धांत का मूल आधार है।

2. राजा ईश्वर का प्रतिनिधि है :-

दैवीय सिद्धांत के अनुसार राजा पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि होता है। उसे शासन करने का अधिकार जनता से नहीं बल्कि ईश्वर से प्राप्त होता है। इसलिए राजा की स्थिति सामान्य व्यक्तियों से उच्च मानी जाती है। उसके आदेशों का पालन करना

आवश्यक समझा जाता है। इस प्रकार राजा को विशेष सम्मान और अधिकार प्राप्त होते हैं।

3. राजा की सत्ता सर्वोच्च होती है :-

इस सिद्धांत में राजा को सर्वोच्च शासक माना जाता है। उसकी शक्ति पर किसी प्रकार का नियंत्रण स्वीकार नहीं किया जाता। राज्य के सभी महत्वपूर्ण निर्णय राजा द्वारा लिए जाते हैं। उसकी इच्छा ही कानून का रूप धारण कर लेती है। इसलिए राजा की सत्ता को सर्वोपरि माना गया है।

4. प्रजा का कर्तव्य आज्ञापालन है :-

प्रजा को राजा की आज्ञा का पालन करना चाहिए। राजा के आदेशों का विरोध करना अनुचित माना जाता है। कई बार इसे ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध कार्य भी समझा जाता था। इसलिए लोगों को शासन के प्रति निष्ठावान रहने की शिक्षा दी जाती थी। इससे राजसत्ता को स्थिरता प्राप्त होती थी।

5. राज्य एक पवित्र संस्था है :-

इस सिद्धांत में राज्य को केवल राजनीतिक संस्था नहीं माना गया है। इसे धार्मिक और नैतिक महत्व भी प्रदान किया गया है। राज्य के प्रति सम्मान और निष्ठा रखना आवश्यक समझा जाता है। राज्य के नियमों का पालन धार्मिक कर्तव्य के समान माना जाता है। इसी कारण राज्य को विशेष पवित्रता प्रदान की जाती है।

शक्ति सिद्धांत (Force Theory) :-

शक्ति सिद्धांत राज्य की उत्पत्ति का एक महत्वपूर्ण पारंपरिक सिद्धांत है। इस सिद्धांत के अनुसार राज्य का जन्म बल, विजय और प्रभुत्व के परिणामस्वरूप हुआ। शक्तिशाली व्यक्तियों या समूहों ने कमजोर लोगों को अपने अधीन कर लिया और उन पर शासन स्थापित किया। धीरे-धीरे यही शासन संगठित होकर राज्य के रूप में विकसित हुआ। यह सिद्धांत राज्य निर्माण में शक्ति की भूमिका को विशेष महत्व देता है। प्रमुख सिद्धान्त के प्रमुख समर्थक विचारक है :- लुडविग गम्पलोविच (Ludwig Gumplowicz), फ्रांज ओपेनहाइमर (Franz Oppenheimer), फ्रेडरिक नीत्शे (Friedrich Nietzsche) और वाल्टर बैजहॉट (Walter Bagehot) |

शक्ति सिद्धांत की विशेषताएँ :-

1. शक्ति राज्य का आधार है :-

शक्ति सिद्धांत के अनुसार राज्य की उत्पत्ति का मुख्य कारण बल और शक्ति है। शक्तिशाली व्यक्ति या समूह अपनी शक्ति के बल पर दूसरों को नियंत्रित करते हैं। इसी प्रक्रिया से शासन व्यवस्था का जन्म होता है। इसलिए शक्ति को राज्य का मूल आधार माना गया है। यह सिद्धांत बल की भूमिका पर विशेष बल देता है।

2. विजेता और पराजित का संबंध :-

इस सिद्धांत के अनुसार राज्य का निर्माण तब हुआ जब शक्तिशाली लोगों ने कमजोर लोगों को पराजित कर अपने अधीन कर लिया। विजेता शासक बन गए

और पराजित लोग शासित वर्ग में शामिल हो गए। इस प्रकार शासन और अधीनता का संबंध स्थापित हुआ। यही संबंध आगे चलकर राज्य का आधार बना। इसलिए विजय को राज्य निर्माण का प्रमुख कारण माना गया है।

3. युद्धों का महत्वपूर्ण स्थान :-

शक्ति सिद्धांत युद्धों और संघर्षों को राज्य की उत्पत्ति का महत्वपूर्ण साधन मानता है। इतिहास में अनेक राज्यों और साम्राज्यों का विस्तार युद्धों के माध्यम से हुआ। विजेता शासकों ने अपने क्षेत्रों का विस्तार किया और नई राजनीतिक इकाइयों का निर्माण किया। इसलिए युद्ध को राज्य निर्माण की प्रक्रिया से जोड़ा जाता है। यह सिद्धांत राजनीतिक इतिहास के इस पक्ष को विशेष महत्व देता है।

4. राजनीतिक शक्ति की प्रधानता :-

इस सिद्धांत में राजनीतिक शक्ति को सर्वोच्च महत्व दिया गया है। शासन की सफलता और राज्य की स्थिरता को शक्ति पर आधारित माना जाता है। शक्तिशाली शासन व्यवस्था को अधिक प्रभावी समझा जाता है। इसलिए राजनीतिक नियंत्रण को आवश्यक माना गया है। यह सिद्धांत शक्ति को शासन का प्रमुख साधन मानता है।

5. सैन्य शक्ति का महत्व :-

शक्ति सिद्धांत में सेना और सैन्य संगठन को विशेष महत्व दिया गया है। राज्य की स्थापना, सुरक्षा और विस्तार में सैन्य शक्ति की महत्वपूर्ण भूमिका मानी जाती है। एक शक्तिशाली सेना राज्य को बाहरी और आंतरिक चुनौतियों से सुरक्षित रखती

है। इतिहास में अनेक राज्यों ने अपनी सैन्य क्षमता के आधार पर विस्तार किया। इसलिए सैन्य शक्ति को राज्य की मजबूती का प्रमुख आधार माना जाता है।

► 4.3.2. सामाजिक समझौते का सिद्धांत : हॉब्स, लॉक एवं रूसो (Social Contract Theory : Hobbes, Locke and Rousseau) :-

सामाजिक समझौते का सिद्धांत राज्य की उत्पत्ति संबंधी सिद्धांतों में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह सिद्धांत इस मान्यता पर आधारित है कि राज्य न तो ईश्वर की देन है और न ही केवल शक्ति का परिणाम, बल्कि यह मानव की विवेकशीलता, सुरक्षा की आवश्यकता तथा सामाजिक जीवन को व्यवस्थित बनाने की इच्छा का परिणाम है। इस सिद्धांत के अनुसार प्रारम्भिक अवस्था में मनुष्य प्राकृतिक अवस्था में जीवन व्यतीत करता था, जहाँ किसी संगठित राजनीतिक सत्ता का अस्तित्व नहीं था। कालांतर में व्यक्तियों ने शांति, सुरक्षा तथा व्यवस्था की स्थापना के लिए परस्पर समझौता किया, जिसके फलस्वरूप राज्य का उद्भव हुआ। थॉमस हॉब्स, जॉन लॉक तथा जीन जैक्स रूसो इस सिद्धांत के प्रमुख प्रतिपादक माने जाते हैं।

1. थॉमस हॉब्स (Thomas Hobbes) :-

थॉमस हॉब्स सामाजिक समझौते के सिद्धांत का प्रमुख प्रतिपादक था। उसने अपनी प्रसिद्ध कृति Leviathan में राज्य की उत्पत्ति का विस्तृत वर्णन किया है। हॉब्स के अनुसार प्राकृतिक अवस्था अत्यंत भयावह, असुरक्षित तथा संघर्षपूर्ण थी। मनुष्य स्वार्थ, भय और आत्मरक्षा की प्रवृत्तियों से प्रेरित होकर निरंतर संघर्ष करता था।

इस अराजकता से मुक्ति पाने के लिए लोगों ने सामाजिक समझौता किया और अपनी सभी शक्तियाँ एक संप्रभु शासक को सौंप दीं। हॉब्स ने शक्तिशाली तथा निरंकुश राज्य का समर्थन किया।

हॉब्स के विचारों की प्रमुख विशेषताएँ :-

(i) प्राकृतिक अवस्था संघर्ष की अवस्था थी :-

हॉब्स के अनुसार प्राकृतिक अवस्था में "सबका सबके विरुद्ध युद्ध" की स्थिति विद्यमान थी। वहाँ किसी प्रकार की शांति, सुरक्षा अथवा न्याय व्यवस्था नहीं थी। प्रत्येक व्यक्ति अपने हितों की रक्षा के लिए संघर्षरत रहता था। इसलिए जीवन अत्यंत असुरक्षित था। हॉब्स ने इसे भय और अराजकता की अवस्था माना।

(ii) मनुष्य स्वार्थी प्रकृति का है :-

हॉब्स के अनुसार मनुष्य मूलतः स्वार्थपरक, महत्वाकांक्षी और आत्मकेन्द्रित प्राणी है। वह अपने हितों को सर्वोपरि मानता है। इसी कारण व्यक्तियों के बीच निरंतर संघर्ष उत्पन्न होता है। मनुष्य की यह प्रकृति सामाजिक अशांति का कारण बनती है। इसलिए नियंत्रणकारी सत्ता की आवश्यकता होती है।

(iii) सामाजिक समझौते की आवश्यकता :-

प्राकृतिक अवस्था की अव्यवस्था और असुरक्षा से मुक्ति प्राप्त करने के लिए लोगों ने आपस में समझौता किया। इस समझौते का उद्देश्य शांति और सुरक्षा स्थापित

करना था। व्यक्तियों ने अपनी स्वतंत्रताओं का त्याग किया। इसके बदले उन्हें सुरक्षा प्राप्त हुई। इसी से राज्य की स्थापना हुई।

(iv) संप्रभु सत्ता सर्वोच्च है :-

हॉब्स के अनुसार संप्रभु सत्ता की शक्ति असीमित और अविभाज्य होती है। शासक के आदेश ही कानून होते हैं। उसकी सत्ता पर किसी प्रकार का नियंत्रण स्वीकार नहीं किया जा सकता। संप्रभु के विरुद्ध विद्रोह का अधिकार भी जनता को नहीं है। यही व्यवस्था स्थिरता सुनिश्चित करती है।

(v) निरंकुश राज्य का समर्थन :-

हॉब्स का विश्वास था कि केवल एक शक्तिशाली और निरंकुश राज्य ही शांति स्थापित कर सकता है। यदि शासक की शक्ति सीमित कर दी जाए तो समाज पुनः अराजकता की ओर लौट सकता है। इसलिए उसने निरंकुश राजतंत्र को सर्वोत्तम शासन व्यवस्था माना। उसके अनुसार व्यवस्था की रक्षा स्वतंत्रता से अधिक महत्वपूर्ण है।

2. जॉन लॉक (John Locke) :-

जॉन लॉक ने सामाजिक समझौते के सिद्धांत को उदारवादी स्वरूप प्रदान किया। उसने प्राकृतिक अवस्था को पूर्णतः अराजक नहीं माना। उसके अनुसार मनुष्य प्राकृतिक अवस्था में स्वतंत्र और समान था, परंतु उसके अधिकार पूर्णतः सुरक्षित नहीं थे। इसलिए लोगों ने अपने प्राकृतिक अधिकारों की रक्षा के लिए राज्य की

स्थापना की। लॉक ने सीमित सरकार, जनसहमति तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता का समर्थन किया। उसके विचार आधुनिक लोकतंत्र के आधार माने जाते हैं।

लॉक के विचारों की प्रमुख विशेषताएँ :-

(i) प्राकृतिक अवस्था स्वतंत्रता और समानता की अवस्था थी :-

लॉक के अनुसार प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य स्वतंत्र और समान था। वहाँ प्राकृतिक नियमों का शासन था। लोग एक-दूसरे के अधिकारों का सम्मान करते थे। इसलिए यह अवस्था पूर्ण अराजकता की नहीं थी। फिर भी कुछ व्यावहारिक कठिनाइयाँ विद्यमान थीं।

(ii) प्राकृतिक अधिकारों की मान्यता :-

लॉक ने जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति को मनुष्य के प्राकृतिक अधिकार माना। ये अधिकार जन्मजात और अविच्छेद्य (Inalienable) हैं। कोई भी शासक इनका हनन नहीं कर सकता। राज्य की स्थापना का मुख्य उद्देश्य इन्हीं अधिकारों की रक्षा करना है। इसलिए नागरिक अधिकारों को विशेष महत्व दिया गया।

(iii) राज्य की स्थापना अधिकारों की रक्षा हेतु :-

लोगों ने अपने प्राकृतिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए राज्य का निर्माण किया। राज्य का अस्तित्व जनता के हितों की रक्षा के लिए है। यदि राज्य अपने दायित्वों का निर्वहन न करे तो उसकी वैधता समाप्त हो जाती है। इसलिए राज्य जनता के प्रति उत्तरदायी होता है।

(iv) सीमित सरकार का समर्थन :-

लॉक ने शासन की शक्तियों को सीमित रखने पर बल दिया। उसके अनुसार सरकार कानून के अधीन होनी चाहिए। शासन जनता की सहमति से संचालित होना चाहिए। इससे सत्ता के दुरुपयोग को रोका जा सकता है। यही उदारवादी शासन का आधार है।

(v) विद्रोह का अधिकार :-

यदि सरकार जनता के अधिकारों का उल्लंघन करे तो जनता को उसका विरोध करने का अधिकार है। लॉक ने इसे वैध और न्यायोचित माना। जनता सरकार को बदल सकती है। यह सिद्धांत लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था का महत्वपूर्ण आधार बना। आधुनिक लोकतंत्रों में इसकी स्पष्ट झलक दिखाई देती है।

3. जीन जैक्स रूसो (Jean Jacques Rousseau) :-

रूसो ने सामाजिक समझौते के सिद्धांत को लोकतांत्रिक स्वरूप प्रदान किया। उसके अनुसार प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य स्वतंत्र, समान और सुखी था। सामाजिक असमानता और संघर्ष का मुख्य कारण निजी संपत्ति का विकास था। इन समस्याओं को समाप्त करने के लिए लोगों ने सामाजिक समझौता किया। रूसो ने **सामान्य इच्छा (General Will)** को राज्य का आधार माना। उसके विचार आधुनिक लोकतंत्र और जनसत्ता की अवधारणा के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

रूसो के विचारों की प्रमुख विशेषताएँ :-

(i) प्राकृतिक अवस्था आदर्श अवस्था थी :-

रूसो के अनुसार प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य सरल, निष्कपट और सुखी था। वहाँ प्रतिस्पर्धा और शोषण का अभाव था। मनुष्य स्वतंत्र जीवन व्यतीत करता था। सामाजिक बुराइयाँ बाद में विकसित हुईं। इसलिए उसने प्राकृतिक अवस्था को आदर्श माना।

(ii) निजी संपत्ति असमानता का कारण है :-

रूसो के अनुसार निजी संपत्ति के विकास से सामाजिक असमानता उत्पन्न हुई। इससे धनी और निर्धन वर्गों का निर्माण हुआ। शोषण और संघर्ष बढ़ने लगे। सामाजिक समस्याओं की जड़ निजी संपत्ति को माना गया। इसी कारण सामाजिक समझौते की आवश्यकता पड़ी।

(iii) सामान्य इच्छा का सिद्धांत :-

रूसो का सबसे महत्वपूर्ण योगदान सामान्य इच्छा का सिद्धांत है। सामान्य इच्छा सम्पूर्ण समाज के सामूहिक हित का प्रतिनिधित्व करती है। यह किसी व्यक्ति या समूह के निजी हित से ऊपर होती है। राज्य को इसी के अनुसार कार्य करना चाहिए। यही वास्तविक जनसत्ता का आधार है।

(iv) जनता ही वास्तविक संप्रभु है :-

रूसो के अनुसार संप्रभुता जनता में निहित होती है। कोई राजा या शासक संप्रभु नहीं हो सकता। जनता की सामूहिक इच्छा ही सर्वोच्च होती है। शासन जनता के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए। यही लोकतंत्र का मूल आधार है।

(v) लोकतांत्रिक शासन का समर्थन :-

रूसो ने लोकतांत्रिक मूल्यों का समर्थन किया। उसने जनता की सहभागिता और समानता पर बल दिया। उसके विचारों ने फ्रांसीसी क्रांति को वैचारिक आधार प्रदान किया। आधुनिक लोकतंत्र के विकास में उसका महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है। इसलिए उसे लोकतंत्र का महान प्रवक्ता कहा जाता है।

निष्कर्ष :- हॉब्स, लॉक और रूसो ने सामाजिक समझौते के सिद्धांत को भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से प्रस्तुत किया। हॉब्स ने निरंकुश संप्रभुता, लॉक ने सीमित सरकार तथा रूसो ने जनसत्ता और सामान्य इच्छा पर बल दिया। यद्यपि इनके विचारों में मतभेद हैं, फिर भी तीनों ने राज्य की उत्पत्ति को मानव की सहमति और समझौते से जोड़कर राजनीतिक चिंतन को नई दिशा प्रदान की। आधुनिक लोकतंत्र, नागरिक अधिकारों तथा संवैधानिक शासन की अवधारणाओं पर इन विचारकों का गहरा प्रभाव दिखाई देता है।

► 4.3.3. 'प्राकृतिक अवस्था' और 'अनुबंध' की अवधारणा (Concepts of State of Nature and Contract) :-

सामाजिक समझौते के सिद्धांत को समझने के लिए 'प्राकृतिक अवस्था' और 'अनुबंध' की अवधारणाओं का अध्ययन आवश्यक है। सामाजिक समझौते के समर्थकों ने राज्य की उत्पत्ति की व्याख्या इन्हीं दो आधारों पर की है। यद्यपि हॉब्स, लॉक और रूसो ने प्राकृतिक अवस्था का अलग-अलग चित्र प्रस्तुत किया, फिर भी सभी ने यह स्वीकार किया कि राज्य की स्थापना से पूर्व मनुष्य किसी न किसी रूप में प्राकृतिक अवस्था में जीवन व्यतीत करता था। इसी अवस्था की कठिनाइयों को दूर करने के लिए सामाजिक अनुबंध किया गया और राज्य की स्थापना हुई।

1. प्राकृतिक अवस्था का अर्थ :-

प्राकृतिक अवस्था से अभिप्राय उस स्थिति से है जब राज्य, सरकार तथा विधि का अस्तित्व नहीं था। यह एक काल्पनिक अवस्था थी जिसका प्रयोग सामाजिक समझौते के विचारकों ने अपने सिद्धांतों को स्पष्ट करने के लिए किया। इस अवस्था में मनुष्य प्राकृतिक स्वतंत्रता का उपभोग करता था। प्रत्येक विचारक ने इसकी प्रकृति को अलग-अलग ढंग से समझाया है। इसलिए सामाजिक समझौते के सिद्धांत में इसका विशेष महत्व है।

2. हॉब्स की प्राकृतिक अवस्था :-

हॉब्स के अनुसार प्राकृतिक अवस्था भय, असुरक्षा और संघर्ष की अवस्था थी। प्रत्येक व्यक्ति अपने हितों की पूर्ति के लिए दूसरे व्यक्ति से संघर्ष करता था। वहाँ किसी प्रकार की संगठित सत्ता या कानून नहीं था। इसलिए जीवन अस्थिर और असुरक्षित था। इसी कारण लोगों ने राज्य की स्थापना को आवश्यक समझा।

3. लॉक की प्राकृतिक अवस्था :-

लॉक ने प्राकृतिक अवस्था को स्वतंत्रता और समानता की अवस्था माना। उसके अनुसार मनुष्य प्राकृतिक नियमों के अनुसार जीवन व्यतीत करता था। लोग एक-दूसरे के अधिकारों का सम्मान करते थे। फिर भी न्याय और सुरक्षा की पूर्ण व्यवस्था का अभाव था। इसलिए राज्य की स्थापना की आवश्यकता अनुभव की गई।

4. रूसो की प्राकृतिक अवस्था :-

रूसो के अनुसार प्राकृतिक अवस्था मनुष्य के जीवन की सर्वश्रेष्ठ अवस्था थी। इस अवस्था में मनुष्य सरल, निष्कपट और स्वतंत्र था। उसमें प्रतिस्पर्धा, शोषण और असमानता का अभाव था। निजी संपत्ति के विकास ने इस स्थिति को समाप्त कर दिया। फलस्वरूप सामाजिक समस्याओं का जन्म हुआ।

5. अनुबंध की अवधारणा :-

अनुबंध या समझौता वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्तियों ने राज्य की स्थापना की। सामाजिक समझौते के अनुसार लोगों ने स्वेच्छा से कुछ अधिकार त्यागकर संगठित राजनीतिक व्यवस्था को स्वीकार किया। इसका उद्देश्य शांति, सुरक्षा और सामाजिक व्यवस्था स्थापित करना था। अनुबंध राज्य की वैधता का आधार माना गया। इसी कारण इसे सामाजिक समझौते का केंद्रीय तत्व कहा जाता है।

6. अनुबंध का महत्व :-

अनुबंध की अवधारणा ने राज्य को दैवीय संस्था मानने की धारणा को चुनौती दी। इससे यह विचार विकसित हुआ कि राज्य जनता की सहमति पर आधारित संस्था है। आधुनिक लोकतंत्र, जनसत्ता तथा नागरिक अधिकारों की अवधारणाओं पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा। राजनीतिक उत्तरदायित्व की भावना को भी इससे बल मिला। इसलिए राजनीतिक चिंतन में इसका विशेष महत्व है।

► 4.3.4. ऐतिहासिक या विकासवादी सिद्धांत (Historical or Evolutionary Theory) :-

ऐतिहासिक अथवा विकासवादी सिद्धांत राज्य की उत्पत्ति का सर्वाधिक मान्य और वैज्ञानिक सिद्धांत माना जाता है। इस सिद्धांत के अनुसार राज्य किसी एक घटना, व्यक्ति या समझौते का परिणाम नहीं है, बल्कि यह दीर्घकालीन सामाजिक विकास की उपज है। राज्य का विकास अनेक सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा राजनीतिक

कारकों के संयुक्त प्रभाव से हुआ है। यह सिद्धांत राज्य को एक क्रमिक ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम मानता है। आधुनिक राजनीतिक विचारक इसी सिद्धांत को सर्वाधिक यथार्थवादी मानते हैं। इस सिद्धांत के प्रमुख समर्थ विचारक है - आर.एम. मैकाइवर (R.M. MacIver), जे. डब्ल्यू. गार्नर (J.W. Garner) और सर हेनरी मेन (Sir Henry Maine) |

1. विकासवादी सिद्धांत का अर्थ :-

इस सिद्धांत के अनुसार राज्य का निर्माण अचानक नहीं हुआ। यह मानव समाज के क्रमिक विकास का परिणाम है। अनेक संस्थाओं और परिस्थितियों ने मिलकर राज्य को जन्म दिया। इसलिए राज्य को एक ऐतिहासिक संस्था माना जाता है। यही इसकी मूल अवधारणा है।

2. परिवार की भूमिका :-

परिवार सामाजिक संगठन की सबसे प्राचीन इकाई था। प्रारम्भ में मनुष्य परिवारों में संगठित होकर रहता था। परिवार ने अनुशासन, नेतृत्व तथा संगठन की भावना को विकसित किया। आगे चलकर यही परिवार बड़े सामाजिक समूहों में परिवर्तित हुए। इसलिए राज्य के विकास में परिवार का महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है।

3. रक्त संबंध का महत्व :-

प्राचीन समाजों में रक्त संबंध लोगों को एकता के सूत्र में बाँधते थे। समान पूर्वज की भावना ने सामूहिक जीवन को प्रोत्साहित किया। इससे कुल, कबीले और

जनजातियों का विकास हुआ। इन संगठनों ने राजनीतिक व्यवस्था की नींव रखी। इसलिए रक्त संबंध राज्य निर्माण का महत्वपूर्ण आधार बने।

4. धर्म की भूमिका :-

धर्म ने सामाजिक एकता और अनुशासन को मजबूत बनाया। लोगों के व्यवहार को नियंत्रित करने में धार्मिक मान्यताओं ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। शासकों को धार्मिक समर्थन भी प्राप्त हुआ। इससे सामाजिक संगठन को स्थिरता मिली। राज्य के विकास में धर्म का प्रभाव महत्वपूर्ण रहा।

5. आर्थिक कारकों का योगदान :-

कृषि, व्यापार और संपत्ति के विकास ने सामाजिक जीवन को अधिक जटिल बनाया। आर्थिक गतिविधियों के विस्तार से प्रशासन की आवश्यकता बढ़ी। संसाधनों के प्रबंधन के लिए संगठित व्यवस्था की जरूरत महसूस हुई। इससे राजनीतिक संस्थाओं का विकास हुआ। आर्थिक कारकों ने राज्य निर्माण को गति प्रदान की।

6. राजनीतिक चेतना का विकास :-

समाज के विकास के साथ राजनीतिक संगठन और नेतृत्व की भावना विकसित हुई। लोगों ने सुरक्षा तथा व्यवस्था के लिए संगठित सत्ता की आवश्यकता महसूस की। इससे शासन संस्थाओं का निर्माण हुआ। राजनीतिक चेतना के विकास ने राज्य को स्थायित्व प्रदान किया। यह विकासवादी सिद्धांत का महत्वपूर्ण पक्ष है।

► **4.3.5. राज्य के विकास के विभिन्न चरण (Various Stages of the Development of State) :-** राज्य का वर्तमान स्वरूप एक दीर्घ ऐतिहासिक विकास का परिणाम है। मानव समाज ने अनेक चरणों से गुजरते हुए आधुनिक राष्ट्र-राज्य का स्वरूप प्राप्त किया है। प्रत्येक चरण में राजनीतिक संगठन अधिक व्यापक और विकसित होता गया। सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों ने इस प्रक्रिया को प्रभावित किया। राज्य के विकास की यह यात्रा मानव सभ्यता के विकास से घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है।

1. परिवार :-

राज्य के विकास का प्रारम्भ परिवार से हुआ। परिवार सामाजिक जीवन की मूल इकाई था। परिवार के मुखिया के नेतृत्व में जीवन संचालित होता था। यहीं से अनुशासन और संगठन की भावना विकसित हुई। आगे चलकर परिवार बड़े समूहों में परिवर्तित हुए।

2. कुल और कबीला :-

अनेक परिवारों के मिलकर कुल और कबीले बने। इनमें रक्त संबंधों और परंपराओं का विशेष महत्व था। कबीले का एक प्रमुख होता था जो नेतृत्व प्रदान करता था। सामूहिक जीवन की भावना इसी स्तर पर विकसित हुई। यह राजनीतिक संगठन का प्रारंभिक रूप था।

3. जनजाति :-

कई कबीले मिलकर जनजातियों का निर्माण करते थे। जनजातियों के अपने नियम, परंपराएँ और नेतृत्व व्यवस्था होती थी। उनमें सामूहिक पहचान की भावना पाई जाती थी। सुरक्षा और प्रशासन की प्रारंभिक व्यवस्था भी विकसित हुई। यह राज्य निर्माण की दिशा में महत्वपूर्ण चरण था।

4. ग्राम समुदाय :-

कृषि के विकास के साथ स्थायी बस्तियों का निर्माण हुआ। ग्राम समुदाय सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों के केंद्र बने। ग्राम प्रमुख स्थानीय प्रशासन का कार्य करता था। लोगों में सहयोग और उत्तरदायित्व की भावना विकसित हुई। इससे संगठित शासन व्यवस्था को बल मिला।

5. नगर-राज्य :-

प्राचीन यूनान में नगर-राज्यों का विकास हुआ। प्रत्येक नगर-राज्य स्वतंत्र राजनीतिक इकाई था। नागरिक शासन प्रक्रिया में भाग लेते थे। लोकतंत्र की प्रारंभिक अवधारणाएँ इसी चरण में विकसित हुईं। एथेंस और स्पार्टा इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

6. साम्राज्य :-

नगर-राज्यों के बाद विशाल साम्राज्यों का उदय हुआ। अनेक क्षेत्रों को एक शासक के अधीन संगठित किया गया। रोमन साम्राज्य इसका प्रमुख उदाहरण है। प्रशासनिक व्यवस्था अधिक विकसित हुई। राजनीतिक एकता को बल मिला।

7. सामंती राज्य :-

मध्यकाल में सामंती व्यवस्था का विकास हुआ। भूमि राजनीतिक शक्ति का मुख्य आधार थी। राजा और सामंतों के बीच सत्ता का विभाजन पाया जाता था। जनता सामंतों के अधीन रहती थी। इस व्यवस्था ने आधुनिक राज्य के विकास की पृष्ठभूमि तैयार की।

8. आधुनिक राष्ट्र-राज्य :-

राष्ट्रवाद के विकास के साथ आधुनिक राष्ट्र-राज्यों का उदय हुआ। निश्चित भू-भाग, जनसंख्या, सरकार और संप्रभुता इसकी प्रमुख विशेषताएँ हैं। लोकतंत्र और संवैधानिक शासन को महत्व दिया गया। नागरिक अधिकारों का विस्तार हुआ। वर्तमान विश्व में यही राज्य का सर्वाधिक विकसित स्वरूप माना जाता है।

► 4.4. पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text) :-

► 4.4.1. राजा की दैवीय शक्ति और आधुनिक युग में इसकी प्रासंगिकता का अंत (Divine Right of Kings and the End of its Relevance) :- राजा की दैवीय शक्ति का सिद्धांत मध्यकालीन राजनीतिक चिंतन का एक महत्वपूर्ण

सिद्धांत था। इसके अनुसार राजा की सत्ता ईश्वर द्वारा प्रदान की जाती है और वह पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि होता है। इस सिद्धांत ने राजाओं की निरंकुश सत्ता को वैधता प्रदान की तथा प्रजा को राजा की आज्ञा का पालन करने के लिए बाध्य किया। लंबे समय तक यह सिद्धांत यूरोप तथा अन्य क्षेत्रों में शासन का आधार बना रहा। किंतु आधुनिक युग में लोकतंत्र, वैज्ञानिक चिंतन और जनसत्ता के विकास के साथ इसकी प्रासंगिकता समाप्त हो गई।

1. दैवीय अधिकार सिद्धांत का अर्थ :-

दैवीय अधिकार सिद्धांत के अनुसार राजा को शासन करने का अधिकार सीधे ईश्वर से प्राप्त होता है। उसकी सत्ता का स्रोत जनता नहीं बल्कि ईश्वर माना जाता है। इसलिए राजा के आदेशों को सर्वोच्च माना जाता था। इस सिद्धांत में शासक की स्थिति अत्यंत उच्च और सम्मानजनक होती थी। मध्यकाल में इस विचार को व्यापक समर्थन प्राप्त था।

2. राजा ईश्वर का प्रतिनिधि :-

इस सिद्धांत के अनुसार राजा पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि होता है। वह ईश्वर की इच्छा के अनुसार शासन करता है। इसलिए उसके निर्णयों पर प्रश्न उठाना उचित नहीं माना जाता था। प्रजा से पूर्ण निष्ठा और आज्ञाकारिता की अपेक्षा की जाती थी। इससे राजसत्ता को विशेष महत्व प्राप्त हुआ।

3. राजसत्ता की निरंकुशता :-

दैवीय शक्ति के सिद्धांत ने राजाओं की निरंकुश सत्ता को बढ़ावा दिया। राजा स्वयं को कानून से ऊपर समझते थे। शासन के सभी महत्वपूर्ण निर्णय उनके हाथों में केंद्रित रहते थे। जनता को शासन में भाग लेने का अवसर नहीं मिलता था। परिणामस्वरूप निरंकुश राजतंत्र का विकास हुआ।

4. सिद्धांत का ऐतिहासिक महत्व :-

मध्यकालीन समाज में इस सिद्धांत ने राजनीतिक स्थिरता बनाए रखने में सहायता की। लोगों में शासन के प्रति सम्मान और अनुशासन की भावना विकसित हुई। धार्मिक विश्वासों के कारण राजसत्ता को वैधता प्राप्त हुई। कई राज्यों में यह सिद्धांत राजनीतिक एकता का आधार बना। इसलिए अपने समय में इसका विशेष महत्व था।

5. पुनर्जागरण का प्रभाव :-

पुनर्जागरण आंदोलन ने मानव बुद्धि, तर्क और स्वतंत्र चिंतन को प्रोत्साहित किया। लोगों ने परंपरागत मान्यताओं पर प्रश्न उठाने शुरू किए। इससे दैवीय अधिकार सिद्धांत की वैधता पर भी संदेह उत्पन्न हुआ। मानवतावाद के विकास ने राजाओं की दैवीय सत्ता को चुनौती दी। यह सिद्धांत के पतन की शुरुआत थी।

6. धर्म सुधार आंदोलन का प्रभाव :-

धर्म सुधार आंदोलन ने चर्च और धार्मिक संस्थाओं के प्रभुत्व को चुनौती दी। लोगों में स्वतंत्र धार्मिक विचारधारा का विकास हुआ। इससे दैवीय अधिकार की अवधारणा कमजोर पड़ने लगी। धार्मिक सत्ता और राजनीतिक सत्ता के संबंधों पर पुनर्विचार किया गया। परिणामस्वरूप इस सिद्धांत की लोकप्रियता घटने लगी।

7. लोकतांत्रिक विचारों का विकास :-

लॉक, रूसो और अन्य उदारवादी विचारकों ने जनसत्ता और नागरिक अधिकारों का समर्थन किया। उन्होंने कहा कि शासन की वैधता जनता की सहमति से प्राप्त होती है। इससे राजा की दैवीय शक्ति की अवधारणा को गंभीर चुनौती मिली। लोकतांत्रिक संस्थाओं के विकास ने इस सिद्धांत को अप्रासंगिक बना दिया। जनता को शासन का वास्तविक स्रोत माना जाने लगा।

8. दैवीय अधिकार सिद्धांत की आलोचना :-

(i) वैज्ञानिक आधार का अभाव :-

इस सिद्धांत के समर्थन में कोई वैज्ञानिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है। यह मुख्यतः धार्मिक विश्वासों पर आधारित है।

(ii) ऐतिहासिक प्रमाणों का अभाव :- इतिहास में ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता कि राज्य या राजसत्ता की स्थापना सीधे ईश्वर द्वारा की गई हो।

(iii) निरंकुशता को बढ़ावा :- यह सिद्धांत राजाओं की निरंकुश सत्ता को उचित ठहराता है और जनता के अधिकारों की उपेक्षा करता है।

(iv) लोकतंत्र के विरुद्ध :- यह सिद्धांत जनसत्ता, समानता और लोकतांत्रिक मूल्यों के अनुकूल नहीं है।

(v) जनता की भूमिका की उपेक्षा :- इसमें राज्य निर्माण और शासन व्यवस्था में जनता की भूमिका को महत्व नहीं दिया गया है।

9. आधुनिक युग में प्रासंगिकता का अंत :-

आधुनिक लोकतांत्रिक युग में सत्ता का स्रोत जनता को माना जाता है। संविधान, कानून और जनमत शासन के आधार बन गए हैं। राजा की दैवीय शक्ति की अवधारणा अब राजनीतिक दृष्टि से स्वीकार्य नहीं है। अधिकांश देशों में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था स्थापित हो चुकी है। इसलिए यह सिद्धांत केवल ऐतिहासिक महत्व तक सीमित रह गया है।

निष्कर्ष :-

राजा की दैवीय शक्ति का सिद्धांत मध्यकालीन राजनीतिक व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण आधार था। इसने राजाओं को व्यापक अधिकार और वैधता प्रदान की। किंतु वैज्ञानिक चेतना, लोकतंत्र, जनसत्ता और नागरिक अधिकारों के विकास ने इसकी आधारशिला को कमजोर कर दिया। वर्तमान समय में यह सिद्धांत व्यावहारिक राजनीति में अप्रासंगिक हो चुका है तथा केवल राजनीतिक विचारों के इतिहास के अध्ययन तक सीमित है।

► 4.4.2. शक्ति सिद्धांत की सीमाएँ : 'बल' बनाम 'सहमति' (Limitations of Force Theory : Force versus Consent) :-

शक्ति सिद्धांत राज्य की उत्पत्ति के प्रमुख पारंपरिक सिद्धांतों में से एक है। इस सिद्धांत के अनुसार राज्य का जन्म बल, विजय और प्रभुत्व के परिणामस्वरूप हुआ। शक्तिशाली व्यक्तियों अथवा समूहों ने कमजोर लोगों को अपने अधीन करके शासन स्थापित किया और यही शासन आगे चलकर राज्य में परिवर्तित हो गया। यद्यपि इतिहास में अनेक राज्यों का निर्माण युद्धों और विजयों के माध्यम से हुआ, फिर भी आधुनिक राजनीतिक विचारक इस सिद्धांत को राज्य की उत्पत्ति की पूर्ण व्याख्या नहीं मानते। उनका मत है कि राज्य का वास्तविक आधार केवल बल नहीं बल्कि जनता की सहमति, सहयोग और वैधता भी है।

1. शक्ति सिद्धांत का आधार :-

शक्ति सिद्धांत का मुख्य आधार यह विचार है कि राजनीतिक सत्ता का जन्म शक्ति से होता है। जो व्यक्ति या समूह अधिक शक्तिशाली होता है, वह दूसरों पर नियंत्रण स्थापित कर लेता है। इसी नियंत्रण से शासन व्यवस्था विकसित होती है। इस सिद्धांत में राज्य को प्रभुत्व और अधीनता के संबंध का परिणाम माना गया है। इसलिए बल को राज्य निर्माण का प्रमुख साधन माना गया।

2. राज्य निर्माण में बल की भूमिका :-

इतिहास में अनेक राज्यों और साम्राज्यों का विस्तार युद्धों तथा विजयों के माध्यम से हुआ। विजेता शासकों ने अपने क्षेत्रों का विस्तार किया और नई राजनीतिक

इकाइयों का निर्माण किया। इस दृष्टि से राज्य निर्माण में शक्ति की भूमिका को पूरी तरह नकारा नहीं जा सकता। अनेक ऐतिहासिक उदाहरण इस तथ्य की पुष्टि करते हैं। इसलिए शक्ति सिद्धांत में आंशिक सत्यता विद्यमान है।

3. सहमति का महत्व :-

आधुनिक राजनीतिक चिंतन में यह स्वीकार किया जाता है कि राज्य केवल बल के आधार पर स्थिर नहीं रह सकता। जनता की सहमति और समर्थन शासन की वैधता का आधार होते हैं। यदि जनता शासन को स्वीकार न करे तो राज्य में अस्थिरता उत्पन्न हो जाती है। इसलिए सहमति को राजनीतिक व्यवस्था का आवश्यक तत्व माना जाता है। लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था इसी सिद्धांत पर आधारित है।

4. बल और सहमति का संबंध :-

बल और सहमति दोनों राज्य के महत्वपूर्ण तत्व हैं, किंतु दोनों का महत्व समान नहीं है। बल शासन की स्थापना में सहायक हो सकता है, जबकि सहमति उसे स्थायित्व प्रदान करती है। केवल बल पर आधारित शासन लंबे समय तक नहीं टिक सकता। जनता का विश्वास और सहयोग किसी भी राज्य की सफलता के लिए आवश्यक है। इसलिए आधुनिक राज्य सहमति को अधिक महत्व देते हैं।

5. आधुनिक लोकतंत्र में सहमति की भूमिका :-

लोकतांत्रिक राज्यों में सत्ता का स्रोत जनता मानी जाती है। सरकारें चुनावों के माध्यम से चुनी जाती हैं और जनता के प्रति उत्तरदायी होती हैं। शासन की वैधता बल से नहीं बल्कि जनमत से प्राप्त होती है। नागरिकों की भागीदारी और सहमति

लोकतंत्र की आधारशिला है। इसलिए आधुनिक युग में सहमति की अवधारणा को विशेष महत्व दिया गया है।

शक्ति सिद्धांत की आलोचना :-

(i) एकांगी दृष्टिकोण :-

यह सिद्धांत राज्य की उत्पत्ति का कारण केवल शक्ति को मानता है। जबकि राज्य के विकास में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक तत्वों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसलिए इसकी व्याख्या अधूरी मानी जाती है।

(ii) ऐतिहासिक प्रमाणों का अभाव :-

सभी राज्यों की उत्पत्ति युद्धों और विजयों के माध्यम से नहीं हुई। अनेक राज्यों का विकास क्रमिक सामाजिक प्रक्रिया के परिणामस्वरूप हुआ है। इसलिए यह सिद्धांत सार्वभौमिक रूप से लागू नहीं किया जा सकता।

(iii) सहमति की उपेक्षा :- यह सिद्धांत जनता की इच्छा और सहमति को महत्व नहीं देता। आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था में जनसहमति को शासन की वैधता का आधार माना जाता है। इस दृष्टि से शक्ति सिद्धांत अपूर्ण है।

(iv) लोकतांत्रिक मूल्यों के विपरीत :-

यह सिद्धांत बल और प्रभुत्व को महत्व देता है। जबकि आधुनिक लोकतंत्र समानता, स्वतंत्रता और जनसहभागिता पर आधारित है। इसलिए यह लोकतांत्रिक आदर्शों से मेल नहीं खाता।

(v) राज्य की स्थिरता की व्याख्या में असफल :-

यदि राज्य केवल बल पर आधारित होता, तो वह लंबे समय तक स्थिर नहीं रह सकता था। राज्य की स्थिरता के लिए जनता का सहयोग और विश्वास आवश्यक होता है। यह सिद्धांत इस तथ्य को पर्याप्त महत्व नहीं देता।

निष्कर्ष :- शक्ति सिद्धांत राज्य की उत्पत्ति में बल और विजय की भूमिका को स्पष्ट करता है तथा राजनीतिक शक्ति के महत्व को रेखांकित करता है। किंतु यह राज्य निर्माण की संपूर्ण प्रक्रिया को नहीं समझा पाता। आधुनिक राजनीतिक विचारकों के अनुसार राज्य का वास्तविक आधार केवल शक्ति नहीं, बल्कि सहमति, वैधता और जनसमर्थन भी है। इसलिए शक्ति सिद्धांत को राज्य की उत्पत्ति का आंशिक एवं सीमित व्याख्यात्मक सिद्धांत माना जाता है।

► 4.4.3. लेवियाथन से सामान्य इच्छा तक : समझौते के बदलते स्वरूप (From Leviathan to General Will: Changing Forms of Contract) :-

सामाजिक समझौते के सिद्धांत का विकास विभिन्न विचारकों के माध्यम से हुआ। हॉब्स, लॉक और रूसो ने इस सिद्धांत की अलग-अलग व्याख्या की तथा अपने-अपने समय की परिस्थितियों के अनुसार राज्य की प्रकृति को स्पष्ट किया। इन विचारकों के कारण सामाजिक समझौते की अवधारणा में निरंतर परिवर्तन दिखाई देता है। हॉब्स के निरंकुश राज्य से लेकर रूसो की जनसत्ता तक की यात्रा राजनीतिक चिंतन के विकास को दर्शाती है।

1. हॉब्स का लेवियाथन :-

हॉब्स ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक लेवियाथन में राज्य को एक सर्वशक्तिमान संस्था के रूप में प्रस्तुत किया। उसके अनुसार प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य का जीवन असुरक्षित था। इसलिए लोगों ने अपनी स्वतंत्रताओं का त्याग करके एक शक्तिशाली शासक की स्थापना की। यह शासक शांति और व्यवस्था बनाए रखने के लिए आवश्यक था। हॉब्स के अनुसार संप्रभु सत्ता की शक्ति पर कोई प्रतिबंध नहीं होना चाहिए।

2. लॉक का उदारवादी दृष्टिकोण :-

लॉक ने हॉब्स के विचारों में संशोधन किया। उसके अनुसार प्राकृतिक अवस्था पूर्णतः अराजक नहीं थी। मनुष्य के पास जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति जैसे प्राकृतिक अधिकार थे। इन अधिकारों की रक्षा के लिए राज्य की स्थापना की गई। इसलिए सरकार की शक्तियाँ सीमित होनी चाहिए। लॉक ने जनसहमति और उत्तरदायी शासन पर बल दिया।

3. रूसो की सामान्य इच्छा :-

रूसो ने सामाजिक समझौते को लोकतांत्रिक आधार प्रदान किया। उसके अनुसार राज्य का वास्तविक आधार जनता की सामान्य इच्छा है। सामान्य इच्छा सम्पूर्ण समाज के कल्याण का प्रतिनिधित्व करती है। राज्य को इसी के अनुरूप कार्य करना चाहिए। रूसो ने जनता को संप्रभु माना और जनसत्ता को सर्वोच्च महत्व दिया।

4. समझौते की अवधारणा में परिवर्तन :-

हॉब्स के यहाँ समझौते का उद्देश्य सुरक्षा था, लॉक के यहाँ अधिकारों की रक्षा और रूसो के यहाँ सामूहिक कल्याण। इस प्रकार सामाजिक समझौते की अवधारणा समय के साथ विकसित होती गई। निरंकुश संप्रभुता से लोकतांत्रिक जनसत्ता तक का यह परिवर्तन राजनीतिक विचारों के विकास को स्पष्ट करता है। आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं पर इन विचारों का गहरा प्रभाव पड़ा है।

निष्कर्ष :- लेवियाथन से सामान्य इच्छा तक की यात्रा सामाजिक समझौते के सिद्धांत के विकास की कहानी है। यह यात्रा निरंकुश शासन से लोकतांत्रिक शासन की ओर बढ़ते राजनीतिक चिंतन को प्रदर्शित करती है। हॉब्स, लॉक और रूसो के विचार आधुनिक राज्य की समझ को समृद्ध बनाते हैं।

► 4.4.4. राज्य के विकास में सहायक तत्व : रक्त संबंध, धर्म और राजनीतिक चेतना (Factors in State Development: Kinship, Religion and Political Consciousness) :-

राज्य का विकास किसी एक कारण का परिणाम नहीं था। मानव समाज के क्रमिक विकास में अनेक सामाजिक, धार्मिक तथा राजनीतिक तत्वों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। विकासवादी सिद्धांत के अनुसार राज्य का निर्माण एक दीर्घकालीन प्रक्रिया का परिणाम है। रक्त संबंध, धर्म, राजनीतिक चेतना, नेतृत्व, आर्थिक संगठन तथा सामाजिक एकता जैसे तत्वों ने राज्य के विकास को गति प्रदान की।

1. रक्त संबंध का महत्व :-

प्रारम्भिक समाज में रक्त संबंध सामाजिक संगठन का प्रमुख आधार था। लोग स्वयं को एक ही पूर्वज की संतान मानते थे। इससे उनमें एकता और सहयोग की भावना विकसित हुई। परिवार, कुल और कबीले का निर्माण इसी आधार पर हुआ। राज्य के प्रारम्भिक स्वरूप के विकास में रक्त संबंधों की महत्वपूर्ण भूमिका थी।

2. परिवार की भूमिका :- परिवार सामाजिक जीवन की सबसे छोटी इकाई था। प्रारम्भिक मानव परिवारों में संगठित होकर रहता था। परिवार ने अनुशासन, नेतृत्व और उत्तरदायित्व की भावना को विकसित किया। यही संगठन आगे चलकर बड़े सामाजिक समूहों में परिवर्तित हुए। इसलिए परिवार को राज्य की प्रारम्भिक आधारशिला माना जाता है।

3. कुल और कबीले का विकास :-

अनेक परिवार मिलकर कुल तथा कबीले का निर्माण करते थे। इन संगठनों में समान परंपराएँ और रीति-रिवाज पाए जाते थे। कबीले का एक प्रमुख होता था जो नेतृत्व प्रदान करता था। इससे राजनीतिक संगठन की भावना विकसित हुई। यह राज्य निर्माण की दिशा में महत्वपूर्ण कदम था।

4. धर्म का प्रभाव :-

धर्म ने समाज में नैतिकता और अनुशासन को बनाए रखने में सहायता की। धार्मिक मान्यताओं ने लोगों को एकता के सूत्र में बाँधा। धर्म के माध्यम से सामाजिक

नियमों का पालन सुनिश्चित किया गया। शासकों को भी धार्मिक समर्थन प्राप्त होता था। इस प्रकार धर्म राज्य के विकास का एक महत्वपूर्ण तत्व बना।

5. धार्मिक संस्थाओं का योगदान :- मंदिर, चर्च तथा अन्य धार्मिक संस्थाओं ने सामाजिक संगठन को मजबूत किया। इन संस्थाओं ने लोगों को सामूहिक जीवन का अनुभव कराया। धार्मिक नेताओं का समाज पर व्यापक प्रभाव था। कई बार वे राजनीतिक निर्णयों को भी प्रभावित करते थे। इससे शासन व्यवस्था को स्थिरता प्राप्त हुई।

6. राजनीतिक चेतना का विकास :-

समय के साथ लोगों में राजनीतिक जागरूकता बढ़ी। उन्होंने सुरक्षा, न्याय और प्रशासन की आवश्यकता को समझा। इससे संगठित शासन व्यवस्था की मांग बढ़ी। राजनीतिक चेतना ने राज्य के विकास को नई दिशा प्रदान की। यह आधुनिक राज्य निर्माण का महत्वपूर्ण आधार बनी।

7. नेतृत्व की आवश्यकता :-

किसी भी समाज को संगठित रखने के लिए नेतृत्व आवश्यक होता है। प्रारम्भिक समाजों में मुखिया या प्रमुख लोगों का मार्गदर्शन करते थे। वे विवादों का समाधान करते और सुरक्षा सुनिश्चित करते थे। नेतृत्व की यह परंपरा आगे चलकर शासकीय संस्थाओं में परिवर्तित हुई। इससे राज्य का विकास संभव हुआ।

8. सामाजिक एकता की भावना :-

राज्य के विकास के लिए सामाजिक एकता आवश्यक थी। लोगों में सहयोग, विश्वास और सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित हुई। इससे सामाजिक संगठन मजबूत हुआ। एकता के बिना स्थायी राजनीतिक व्यवस्था का निर्माण संभव नहीं था। इसलिए सामाजिक एकता राज्य निर्माण का महत्वपूर्ण आधार बनी।

9. आर्थिक संगठन का प्रभाव :-

कृषि, व्यापार और संपत्ति के विकास ने समाज को अधिक संगठित बनाया। आर्थिक गतिविधियों के विस्तार से प्रशासनिक व्यवस्था की आवश्यकता बढ़ी। संसाधनों के प्रबंधन के लिए संगठित सत्ता का विकास हुआ। इससे राज्य की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो गई। आर्थिक विकास ने राज्य निर्माण की प्रक्रिया को गति दी।

10. सुरक्षा की आवश्यकता :-

बाहरी आक्रमणों और आंतरिक संघर्षों से रक्षा के लिए संगठित शक्ति की आवश्यकता महसूस की गई। लोगों ने सामूहिक सुरक्षा के लिए राजनीतिक संगठनों का निर्माण किया। इससे शासन व्यवस्था का विकास हुआ। सुरक्षा राज्य के विकास का एक प्रमुख कारण थी। इसी आवश्यकता ने राजनीतिक संगठन को मजबूत बनाया।

निष्कर्ष :- रक्त संबंध, परिवार, धर्म, राजनीतिक चेतना, नेतृत्व, आर्थिक संगठन और सुरक्षा की आवश्यकता जैसे अनेक तत्वों ने राज्य के विकास में योगदान दिया। राज्य किसी एक कारण का परिणाम नहीं बल्कि विभिन्न कारकों की संयुक्त प्रक्रिया

का फल है। यही कारण है कि विकासवादी सिद्धांत को राज्य की उत्पत्ति का सबसे वैज्ञानिक और व्यापक सिद्धांत माना जाता है।

► 4.4.5. कबीला राज्य से आधुनिक राष्ट्र-राज्य का सफर (Journey from Tribal State to Modern Nation-State) :-

राज्य का वर्तमान स्वरूप एक लंबी ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है। मानव सभ्यता के प्रारम्भिक चरणों में राजनीतिक संगठन बहुत सरल था, किन्तु समय के साथ इसमें निरंतर परिवर्तन होते गए। सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा राजनीतिक विकास के कारण राज्य का स्वरूप भी बदलता गया। कबीलाई संगठन से लेकर आधुनिक राष्ट्र-राज्य तक की यात्रा मानव समाज की प्रगति को दर्शाती है। यह विकास अचानक नहीं हुआ, बल्कि सदियों तक चलने वाली क्रमिक प्रक्रिया का परिणाम था।

1. कबीलाई संगठन का उदय :- मानव इतिहास के प्रारम्भिक चरण में लोग छोटे-छोटे कबीलों में रहते थे। प्रत्येक कबीले के सदस्यों में रक्त संबंध और सामूहिक पहचान की भावना होती थी। कबीले का एक मुखिया होता था जो नेतृत्व प्रदान करता था। सामाजिक नियम परंपराओं और रीति-रिवाजों पर आधारित होते थे। यही राजनीतिक संगठन का प्रारम्भिक रूप था।

2. जनजातीय व्यवस्था का विकास :-

समय के साथ अनेक कबीले मिलकर बड़ी जनजातियों में परिवर्तित हुए। जनजातियों की अपनी सामाजिक और

राजनीतिक व्यवस्था होती थी। इनके सदस्यों में सहयोग तथा सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित हुई। जनजातीय प्रमुख सुरक्षा और प्रशासन की जिम्मेदारी निभाता था। इससे संगठित राजनीतिक जीवन की शुरुआत हुई।

3. स्थायी निवास और ग्राम समुदाय :-

कृषि के विकास के बाद मानव ने स्थायी जीवन अपनाना प्रारम्भ किया। गाँवों और बस्तियों का निर्माण हुआ। ग्राम समुदाय सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों के केंद्र बन गए। स्थानीय स्तर पर प्रशासन और न्याय की व्यवस्था विकसित हुई। इससे राजनीतिक संगठन अधिक सुदृढ़ हुआ।

4. नगरों का विकास :-

व्यापार और उद्योग के विस्तार के साथ नगरों का विकास हुआ। नगर आर्थिक और सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रमुख केंद्र बन गए। जनसंख्या बढ़ने के कारण प्रशासनिक व्यवस्थाओं में भी विस्तार हुआ। इससे राजनीतिक संगठन अधिक जटिल और विकसित हुआ। नगरों ने राज्य निर्माण की प्रक्रिया को नई दिशा प्रदान की।

5. नगर-राज्यों का उदय :- प्राचीन यूनान में नगर-राज्यों का विकास हुआ। प्रत्येक नगर-राज्य एक स्वतंत्र राजनीतिक इकाई था। उसकी अपनी सरकार, कानून और प्रशासनिक व्यवस्था होती थी। नागरिक राजनीतिक जीवन में सक्रिय भाग लेते थे। यह राजनीतिक संगठन के विकास का महत्वपूर्ण चरण था।

6. साम्राज्यों का निर्माण :-

नगर-राज्यों के बाद विशाल साम्राज्यों का उदय हुआ। विजयों और विस्तारवादी नीतियों के कारण बड़े-बड़े क्षेत्रों को एक शासन के अधीन संगठित किया गया। रोमन साम्राज्य, मौर्य साम्राज्य और गुप्त साम्राज्य इसके उदाहरण हैं। साम्राज्यों ने प्रशासनिक संगठन को अधिक विकसित बनाया। इससे राजनीतिक एकता को बल मिला।

7. सामंती व्यवस्था का विकास :-

मध्यकाल में सामंती व्यवस्था का विकास हुआ। भूमि राजनीतिक शक्ति का मुख्य आधार बन गई। राजा और सामंतों के बीच सत्ता का बँटवारा था। जनता सामंतों के नियंत्रण में रहती थी। इस व्यवस्था ने आधुनिक राज्य के विकास की पृष्ठभूमि तैयार की।

8. राष्ट्रीय चेतना का उदय :-

आधुनिक युग में राष्ट्रवाद का विकास हुआ। लोगों में भाषा, संस्कृति, इतिहास और परंपराओं के आधार पर राष्ट्रीय एकता की भावना उत्पन्न हुई। राष्ट्रीय चेतना ने राजनीतिक संगठनों को नई दिशा दी। इससे राष्ट्र-राज्यों के निर्माण का मार्ग प्रशस्त हुआ। यह आधुनिक राज्य व्यवस्था के विकास का महत्वपूर्ण चरण था।

9. आधुनिक राष्ट्र-राज्य का निर्माण :-

आधुनिक राष्ट्र-राज्य निश्चित भू-भाग, जनसंख्या, सरकार और संप्रभुता पर आधारित होता है। इसमें नागरिकता और राष्ट्रीय पहचान को विशेष महत्व दिया जाता है। लोकतंत्र, कानून का शासन और नागरिक अधिकार इसकी प्रमुख विशेषताएँ हैं। आधुनिक राज्य जनकल्याण और विकास को भी अपना दायित्व मानता है। वर्तमान विश्व में यही राज्य का सर्वाधिक विकसित स्वरूप है।

10. राष्ट्र-राज्य की प्रमुख विशेषताएँ :-

आधुनिक राष्ट्र-राज्य में राष्ट्रीय एकता, संप्रभुता, संवैधानिक शासन तथा नागरिक अधिकारों को महत्व दिया जाता है। राज्य की सीमाएँ निश्चित होती हैं और सरकार संगठित रूप से कार्य करती है। नागरिकों को राजनीतिक भागीदारी का अवसर प्राप्त होता है। लोकतंत्र और जनसहमति को शासन का आधार माना जाता है। यही इसकी सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है।

निष्कर्ष :-

कबीलाई संगठन से आधुनिक राष्ट्र-राज्य तक की यात्रा मानव समाज के राजनीतिक विकास का इतिहास है। इस प्रक्रिया में परिवार, कबीला, जनजाति, ग्राम समुदाय, नगर-राज्य, साम्राज्य और राष्ट्रीय राज्य जैसे अनेक चरण आए। आधुनिक राष्ट्र-राज्य इन्हीं ऐतिहासिक परिवर्तनों का परिपक्व परिणाम है। इसलिए राज्य को एक क्रमिक विकास की उपज माना जाता है, न कि किसी एक घटना का परिणाम।

► 4.5. अपनी प्रगति जांचें (Check your progress) :-

1. दैवीय उत्पत्ति सिद्धांत के अनुसार राज्य की स्थापना किसने की?
2. दैवीय सिद्धांत में राजा को क्या माना जाता है?
3. शक्ति सिद्धांत का मूल आधार क्या है?
4. शक्ति सिद्धांत राज्य की उत्पत्ति को किससे जोड़ता है?
5. सामाजिक समझौते के सिद्धांत के प्रमुख प्रतिपादक कौन थे?
6. थॉमस हॉब्स की प्रसिद्ध पुस्तक का नाम क्या है?
7. जॉन लॉक द्वारा प्रतिपादित तीन प्राकृतिक अधिकार कौन-कौन से हैं?
8. 'सामान्य इच्छा' (General Will) की अवधारणा किसने प्रस्तुत की?
9. रूसो के अनुसार वास्तविक संप्रभु कौन है?
10. प्राकृतिक अवस्था (State of Nature) से क्या अभिप्राय है?
11. सामाजिक अनुबंध (Social Contract) क्या है?
12. हॉब्स ने प्राकृतिक अवस्था को किस प्रकार की अवस्था माना?
13. लॉक किस प्रकार की सरकार का समर्थक था?
14. रूसो की प्रसिद्ध पुस्तक का नाम क्या है?
15. राज्य की उत्पत्ति का सर्वाधिक वैज्ञानिक सिद्धांत कौन-सा माना जाता है?
16. विकासवादी सिद्धांत को किस अन्य नाम से जाना जाता है?

17. राज्य के विकास की सबसे छोटी सामाजिक इकाई कौन-सी है?

18. परिवार के बाद कौन-सा सामाजिक संगठन विकसित हुआ?

19. राज्य के विकास में रक्त संबंधों का क्या महत्व था?

20. धर्म ने राज्य के विकास में क्या योगदान दिया?

21. राजनीतिक चेतना से क्या अभिप्राय है?

22. ग्राम समुदायों का विकास किस कारण हुआ?

23. नगर-राज्य का एक प्रमुख उदाहरण दीजिए।

24. साम्राज्य (Empire) क्या है?

25. सामंती राज्य का मुख्य आधार क्या था?

26. राष्ट्रवाद ने आधुनिक राष्ट्र-राज्य के विकास में क्या भूमिका निभाई?

27. आधुनिक राष्ट्र-राज्य की एक प्रमुख विशेषता लिखिए।

28. पुनर्जागरण ने किस सिद्धांत को चुनौती दी?

29. धर्म सुधार आंदोलन का राजनीतिक प्रभाव क्या था?

30. "राज्य क्रमिक विकास का परिणाम है" – यह किस सिद्धांत का मूल विचार है?

► 4.6. सारांश (Summary) :-

यह अध्याय राज्य की उत्पत्ति और उसके क्रमिक विकास से संबंधित विभिन्न सिद्धांतों का अध्ययन प्रस्तुत करता है। राज्य की उत्पत्ति को समझाने के लिए सबसे पहले दैवीय उत्पत्ति सिद्धांत का प्रतिपादन किया गया, जिसके अनुसार राज्य ईश्वर की रचना है और राजा पृथ्वी पर उसका प्रतिनिधि माना जाता है। इस सिद्धांत ने लंबे समय तक राजसत्ता को वैधता प्रदान की तथा लोगों में शासन के प्रति निष्ठा बनाए रखने का कार्य किया। इसके बाद शक्ति सिद्धांत सामने आया, जिसने राज्य की उत्पत्ति को बल और विजय का परिणाम माना। इस सिद्धांत के अनुसार शक्तिशाली व्यक्तियों अथवा समूहों ने कमजोर लोगों पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया और इसी प्रक्रिया से राज्य का निर्माण हुआ। यद्यपि इन दोनों सिद्धांतों का ऐतिहासिक महत्व है, फिर भी वे राज्य की उत्पत्ति की पूर्ण और संतोषजनक व्याख्या प्रस्तुत नहीं कर पाते।

सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में सामाजिक समझौते का सिद्धांत राजनीतिक चिंतन का प्रमुख विषय बनकर उभरा। हॉब्स, लॉक और रूसो ने अपने-अपने ढंग से यह प्रतिपादित किया कि राज्य कोई दैवीय या प्राकृतिक संस्था नहीं, बल्कि मनुष्यों द्वारा निर्मित संगठन है। हॉब्स ने प्राकृतिक अवस्था को भय, असुरक्षा और संघर्ष की स्थिति मानते हुए शक्तिशाली संप्रभु सत्ता का समर्थन किया। लॉक ने जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति जैसे प्राकृतिक अधिकारों की रक्षा को राज्य का मुख्य उद्देश्य बताया तथा सीमित शासन की वकालत की। रूसो ने

सामान्य इच्छा और लोकप्रिय संप्रभुता की अवधारणाओं को विकसित करके लोकतांत्रिक विचारधारा को नई दिशा प्रदान की। इन विचारकों के मतों ने आधुनिक लोकतंत्र, संवैधानिक शासन तथा नागरिक अधिकारों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

राज्य की उत्पत्ति की सबसे व्यापक और वैज्ञानिक व्याख्या विकासवादी अथवा ऐतिहासिक सिद्धांत द्वारा प्रस्तुत की जाती है। इस सिद्धांत के अनुसार राज्य किसी एक घटना, समझौते या व्यक्ति की देन नहीं है, बल्कि यह लंबे ऐतिहासिक विकास की उपज है। समाज के विकास के साथ-साथ राजनीतिक संस्थाएँ भी विकसित होती गईं। परिवार, कुल, कबीला, जनजाति, धर्म, आर्थिक आवश्यकताएँ, सुरक्षा की भावना तथा राजनीतिक चेतना जैसे अनेक तत्वों ने राज्य के विकास में योगदान दिया। इसलिए राज्य को एक जीवंत संस्था माना जाता है जो समय, परिस्थितियों और सामाजिक आवश्यकताओं के अनुसार निरंतर विकसित होती रही है।

मानव समाज का राजनीतिक विकास अनेक चरणों से होकर गुजरा है। प्रारम्भ में परिवार और कुल जैसे छोटे सामाजिक संगठन अस्तित्व में आए, जिनसे आगे चलकर कबीले और जनजातियों का निर्माण हुआ। कृषि के विकास से ग्राम समुदायों का उदय हुआ तथा व्यापार और शहरीकरण के कारण नगर-राज्यों का विकास हुआ। बाद में विशाल साम्राज्यों और सामंती व्यवस्थाओं का उदय हुआ। अंततः राष्ट्रीय चेतना और राष्ट्रवाद के विकास के फलस्वरूप आधुनिक राष्ट्र-राज्य

का निर्माण हुआ। इस प्रकार आधुनिक राज्य किसी एक दिन की रचना नहीं, बल्कि दीर्घकालीन ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है। यही कारण है कि विकासवादी सिद्धांत को राज्य की उत्पत्ति की सबसे अधिक स्वीकार्य और प्रामाणिक व्याख्या माना जाता है।

► 4.7. सूचक शब्द (Key Words) :-

दैवीय अधिकार, दैवीय उत्पत्ति सिद्धांत, शक्ति सिद्धांत, प्राकृतिक अवस्था, सामाजिक समझौता, लेवियाथन, प्राकृतिक अधिकार, सामान्य इच्छा, लोकप्रिय संप्रभुता, रक्त संबंध, राजनीतिक चेतना, विकासवादी सिद्धांत, जनजाति, राष्ट्र-राज्य

1. दैवीय अधिकार (Divine Right):-

यह धारणा कि राजा को शासन करने का अधिकार सीधे ईश्वर से प्राप्त होता है और उसकी सत्ता को चुनौती देना ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध माना जाता है।

2. दैवीय उत्पत्ति सिद्धांत (Divine Origin Theory):-

यह सिद्धांत राज्य को ईश्वर की रचना मानता है तथा राज्य की उत्पत्ति को दैवी शक्ति का परिणाम बताता है।

3. शक्ति सिद्धांत (Force Theory):- इस सिद्धांत के अनुसार राज्य की उत्पत्ति बल, युद्ध और विजय के माध्यम से हुई तथा शक्तिशाली लोगों ने कमजोर लोगों पर शासन स्थापित किया।

4. प्राकृतिक अवस्था (State of Nature):-

राज्य की स्थापना से पूर्व की वह काल्पनिक अवस्था जिसमें मनुष्य किसी संगठित राजनीतिक सत्ता या कानून के अधीन नहीं था।

5. सामाजिक समझौता (Social Contract):- मनुष्यों के बीच हुआ वह समझौता जिसके आधार पर राज्य की स्थापना हुई और संगठित राजनीतिक जीवन का आरम्भ हुआ।

6. लेवियाथन (Leviathan):-

थॉमस हॉब्स द्वारा प्रयुक्त शब्द, जो एक सर्वशक्तिमान, सर्वोच्च और निरंकुश राज्य का प्रतीक है।

7. प्राकृतिक अधिकार (Natural Rights):-

वे अधिकार जो मनुष्य को जन्म से प्राप्त होते हैं और जिनमें जीवन, स्वतंत्रता तथा संपत्ति प्रमुख हैं।

8. सामान्य इच्छा (General Will):- रूसो द्वारा प्रतिपादित वह सामूहिक इच्छा जो सम्पूर्ण समाज के हित और कल्याण का प्रतिनिधित्व करती है।

9. लोकप्रिय संप्रभुता (Popular Sovereignty):-

यह सिद्धांत कि राज्य की वास्तविक और सर्वोच्च शक्ति जनता में निहित होती है।

10. रक्त संबंध (Kinship):-

परिवार, वंश और रिश्तेदारी पर आधारित संबंध, जिसने प्रारम्भिक समाज में संगठन और एकता की भावना को विकसित किया।

11. राजनीतिक चेतना (Political Consciousness):-

राजनीतिक अधिकारों, कर्तव्यों, शासन और सामाजिक संगठन के प्रति जागरूकता तथा समझ।

12. विकासवादी सिद्धांत (Evolutionary Theory):-

वह सिद्धांत जो राज्य को किसी एक घटना की उपज न मानकर दीर्घकालीन ऐतिहासिक और सामाजिक विकास का परिणाम मानता है।

13. जनजाति (Tribe):-

रक्त संबंधों, समान परंपराओं और साझा जीवन-पद्धति पर आधारित सामाजिक समूह, जो राज्य के विकास का एक महत्वपूर्ण चरण था।

14. राष्ट्र-राज्य (Nation-State):-

राज्य का आधुनिक स्वरूप जिसमें राष्ट्रीय पहचान, निश्चित भू-भाग, संगठित सरकार तथा संप्रभुता का समन्वय पाया जाता है |

► 4.8. स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions) :-

1. राज्य की उत्पत्ति के दैवीय सिद्धांत की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए। आधुनिक युग में इसकी प्रासंगिकता का परीक्षण कीजिए।

2. राज्य की उत्पत्ति के शक्ति सिद्धांत की व्याख्या एवं आलोचना कीजिए।

3. "शक्ति नहीं, इच्छा ही राज्य की उत्पत्ति का आधार है।" – ग्रीन। इस कथन की विवेचना कीजिए।

4. थॉमस हॉब्स के सामाजिक समझौते के सिद्धांत का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए। वह निरंकुश संप्रभुता का समर्थन क्यों करता है?

5. जॉन लॉक को आधुनिक लोकतंत्र और उदारवाद का मार्गदर्शक क्यों माना जाता है? उसके सामाजिक समझौते के सिद्धांत के संदर्भ में स्पष्ट कीजिए।

6. रूसो की सामान्य इच्छा (General Will) की अवधारणा का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

7. हॉब्स, लॉक और रूसो की प्राकृतिक अवस्था तथा सामाजिक समझौते संबंधी अवधारणाओं का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।

8. "सामाजिक समझौते का सिद्धांत एक बुरा इतिहास, बुरा कानून और बुरा दर्शन है।" टिप्पणी कीजिए।

9. राज्य की उत्पत्ति के सामाजिक समझौते के सिद्धांत की आलोचनात्मक समीक्षा कीजिए।

10. "राज्य न तो ईश्वर द्वारा निर्मित है और न ही केवल शारीरिक बल का परिणाम है।" इस कथन की विवेचना कीजिए।

11. "राज्य एक विकास है, निर्माण नहीं।" इस कथन की व्याख्या करते हुए राज्य के विकास में योगदान देने वाले प्रमुख कारकों का वर्णन कीजिए।

12. राज्य की उत्पत्ति के विकासवादी सिद्धांत की व्याख्या कीजिए तथा उसकी प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

13. "राज्य क्रमिक विकास का परिणाम है।" इस कथन की व्याख्या एवं पुष्टि कीजिए।

14. राज्य के ऐतिहासिक विकास में रक्त संबंध, धर्म तथा राजनीतिक चेतना की भूमिका का सोदाहरण वर्णन कीजिए।

15. राज्य की उत्पत्ति के संबंध में काल्पनिक (Speculative) तथा ऐतिहासिक (Historical) सिद्धांतों के मध्य अंतर स्पष्ट कीजिए।

16. प्राचीन कबीलाई राज्यों से आधुनिक राष्ट्र-राज्य तक के विकास के विभिन्न चरणों का विवेचन कीजिए।

17. आधुनिक राष्ट्र-राज्य के विकास की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।

18. "राज्य का आधार न शक्ति है और न ही समझौता, बल्कि मनुष्य की स्वाभाविक सहयोग की प्रवृत्ति है।" विवेचना कीजिए।

19. राज्य की उत्पत्ति के संबंध में विकासवादी सिद्धांत को सर्वाधिक मान्य सिद्धांत क्यों माना जाता है? स्पष्ट कीजिए।

► 4.9. अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answer check your progress) :-

1. दैवीय उत्पत्ति सिद्धांत के अनुसार राज्य की स्थापना ईश्वर द्वारा की गई मानी जाती है। राज्य को ईश्वर की देन माना जाता है।

2. दैवीय सिद्धांत में राजा को पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता है। उसकी सत्ता को दैवी शक्ति से प्राप्त माना जाता है।

3. शक्ति सिद्धांत का मूल आधार बल अथवा शक्ति है। यह राज्य की उत्पत्ति में शक्ति को प्रमुख मानता है।

4. शक्ति सिद्धांत राज्य की उत्पत्ति को बल, विजय तथा प्रभुत्व से जोड़ता है। इसके अनुसार शक्तिशाली लोगों ने कमजोर लोगों पर शासन स्थापित किया।

5. सामाजिक समझौते के सिद्धांत के प्रमुख प्रतिपादक थॉमस हॉब्स, जॉन लॉक तथा जीन जैक्स रूसो थे।

6. थॉमस हॉब्स की प्रसिद्ध पुस्तक 'लेवियाथन' (Leviathan) है। इसमें उसने सामाजिक समझौते के सिद्धांत का वर्णन किया है।

7. लॉक ने जीवन, स्वतंत्रता तथा संपत्ति को मनुष्य के तीन प्राकृतिक अधिकार माना है।

8. 'सामान्य इच्छा' (General Will) की अवधारणा जीन जैक्स रूसो ने प्रस्तुत की थी।

9. रूसो के अनुसार वास्तविक संप्रभु जनता होती है। संप्रभुता जनता की सामूहिक इच्छा में निहित रहती है।

10. प्राकृतिक अवस्था वह स्थिति है जब राज्य, सरकार और कानून का अस्तित्व नहीं था। यह सामाजिक समझौते के सिद्धांत की आधारभूत अवधारणा है।

11. सामाजिक अनुबंध वह समझौता है जिसके माध्यम से लोगों ने राज्य की स्थापना की तथा संगठित राजनीतिक जीवन को स्वीकार किया।

12. हॉब्स ने प्राकृतिक अवस्था को संघर्ष, भय और अराजकता की अवस्था माना है। उसने इसे "सबका सबके विरुद्ध युद्ध" की स्थिति बताया।

13. लॉक सीमित तथा उत्तरदायी सरकार का समर्थक था। वह जनसहमति पर आधारित शासन में विश्वास करता था।

14. रूसो की प्रसिद्ध पुस्तक 'द सोशल कॉन्ट्रैक्ट' (The Social Contract) है।

15. ऐतिहासिक अथवा विकासवादी सिद्धांत को राज्य की उत्पत्ति का सर्वाधिक वैज्ञानिक और प्रामाणिक सिद्धांत माना जाता है।

16. विकासवादी सिद्धांत को ऐतिहासिक सिद्धांत के नाम से भी जाना जाता है।

17. राज्य के विकास की सबसे छोटी सामाजिक इकाई परिवार मानी जाती है। परिवार से ही सामाजिक संगठन का विकास प्रारम्भ हुआ।

18. परिवार के बाद कुल (Clan) अथवा कबीला (Tribe) का विकास हुआ। अनेक परिवार मिलकर कुल का निर्माण करते थे।

19. रक्त संबंधों ने लोगों में एकता और सहयोग की भावना उत्पन्न की। इससे कुल, कबीले और जनजातियों का विकास हुआ।

20. धर्म ने सामाजिक एकता, अनुशासन तथा संगठन को मजबूत बनाया। इसने राज्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

21. राजनीतिक चेतना से अभिप्राय राजनीतिक अधिकारों, कर्तव्यों तथा शासन व्यवस्था के प्रति जागरूकता से है।

22. ग्राम समुदायों का विकास कृषि के विकास तथा स्थायी निवास के कारण हुआ।

23. एथेंस (Athens) नगर-राज्य का एक प्रमुख उदाहरण है। स्पार्टा भी एक प्रसिद्ध नगर-राज्य था।

24. साम्राज्य एक ऐसा विशाल राज्य होता है जिसमें अनेक क्षेत्र तथा जातियाँ एक शासक के अधीन होती हैं।

25. सामंती राज्य का मुख्य आधार भूमि स्वामित्व तथा सामंती व्यवस्था थी।

26. राष्ट्रवाद ने लोगों में राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रीय चेतना का विकास किया। इससे आधुनिक राष्ट्र-राज्यों का निर्माण संभव हुआ।

27. संप्रभुता आधुनिक राष्ट्र-राज्य की प्रमुख विशेषताओं में से एक है। इसके अतिरिक्त निश्चित भू-भाग, जनसंख्या और सरकार भी आवश्यक तत्व हैं।

28. पुनर्जागरण ने दैवीय अधिकार सिद्धांत को चुनौती दी। इसने तर्क, विवेक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ावा दिया।

29. धर्म सुधार आंदोलन ने चर्च की सर्वोच्चता तथा दैवीय अधिकार सिद्धांत को चुनौती दी। इससे लोकतांत्रिक विचारों को बल मिला।

30. "राज्य क्रमिक विकास का परिणाम है" यह विकासवादी अथवा ऐतिहासिक सिद्धांत का मूल विचार है। यह राज्य को दीर्घकालीन ऐतिहासिक विकास की उपज मानता है।

► 4.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References/ Suggested Readings) :-

1. The Social Contract - Jean-Jacques Rousseau

2. Leviathan - Thomas Hobbes

3. Two Treatises of Government - John Locke

4. The Origin of the Family, Private Property and the State - Friedrich Engels

5. The Modern State - R. M. MacIver

6. Political Science and Government - J. W. Garner

7. A History of Political Theory - George H. Sabine

8. Principles of Social and Political Theory - Ernest Barker

9. Political Theory - Andrew Heywood

10. Western Political Thought - Brian Nelson

11. राजनीतिक सिद्धांत की रूपरेखा - ओ. पी. गाबा

12. राजनीति विज्ञान के मूल सिद्धांत - डॉ. आशीर्वादम

13. पाश्चात्य राजनीतिक चिंतन - सुब्रत मुखर्जी एवं सुशीला रामास्वामी

14. राजनीतिक सिद्धांत - वी. डी. महाजन

15. राजनीति विज्ञान के सिद्धांत - ए. सी. कपूर

Unit-III

अध्याय : 5

राज्य के कार्य

SUBJECT : POLITICAL SCIENCE, SEMESTER-1	
COURSE CODE : C24POL101T	AUTHOR: DR. RAJIV VERMA
LESSON NO : 5	
राज्य के कार्य (Functions of the State)	

5.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

5.2. प्रस्तावना (Introduction)

5.3. अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main Points of the Text)

5.3.1. राज्य के कार्यों का वर्गीकरण : अनिवार्य एवं ऐच्छिक कार्य
(Classification of State Functions: Essential and Optional Functions)

5.3.2. 'लेसेज-फेयर' की अवधारणा और रात्रि प्रहरी राज्य का स्वरूप
(Concept of Laissez-faire and the Nature of a Night Watchman State)

5.3.3. आर्थिक समानता और उत्पादन के साधनों पर राज्य का नियंत्रण
(Economic Equality and State Control over Means of Production)

5.3.4. जनकल्याण और व्यक्तिगत स्वतंत्रता : राज्य की भूमिका और सीमाएँ
(Public Welfare and Individual Liberty: The Role and Limitations of the State)

5.3.5. लोक कल्याणकारी राज्य के कार्य (Functions of a Welfare State)

5.4. पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

5.4.1. नकारात्मक या सीमित राज्य का सिद्धान्त : व्यक्तिवाद (Negative or Limited State Theory: Individualism)

5.4.2. सकारात्मक या व्यापक राज्य का सिद्धान्त : समाजवाद (Positive or Comprehensive State Theory: Socialism)

5.4.3. वैश्वीकरण और 21वीं सदी में राज्य की बदलती नियामक भूमिका (Globalization and the Changing Regulatory Role of the State in the 21st century)

5.4.4. राज्य और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग (State and International Cooperation)

5.5. अपनी प्रगति जाँचें (Check Your Progress)

5.6. सारांश (Summary)

5.7. सूचक शब्द (Key Words)

5.8. स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

5.9. अपनी प्रगति की जाँच करने के लिए उत्तर (Answers to Check Your Progress)

5.10. संदर्भ ग्रन्थ / निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

► 5.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives):-

इस पाठ के अध्ययन के बाद पाठक निम्नलिखित बातों को समझ सकेंगे–

1. राज्य के कार्यों से सम्बन्धित विभिन्न राजनीतिक विचारधाराओं का ज्ञान प्राप्त करना।

2. राज्य के अनिवार्य (Essential) तथा ऐच्छिक (Optional) कार्यों के बीच अंतर स्पष्ट करना।

3. व्यक्तिवाद (Individualism) और अहस्तक्षेपवाद (Laissez-faire) के अनुसार राज्य की सीमित भूमिका का विश्लेषण करना।

4. समाजवादी दृष्टिकोण के अन्तर्गत राज्य की व्यापक आर्थिक एवं सामाजिक भूमिका को समझना।

5. लोक कल्याणकारी राज्य (Welfare State) की अवधारणा तथा उसके विभिन्न कार्यों का मूल्यांकन करना।

6. आधुनिक राष्ट्र-राज्यों के सामने लोक कल्याण और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बीच संतुलन बनाने की चुनौती को पहचानना |

7. वैश्वीकरण के दौर में राज्य के बदलते कार्यों और उसकी सीमाओं का आलोचनात्मक अध्ययन करना।

► 5.2. प्रस्तावना (Introduction) :-

राज्य की उत्पत्ति और उसके स्वरूप को समझने के बाद यह जानना आवश्यक है कि राज्य के कार्य क्या हैं और उसकी भूमिका कितनी होनी चाहिए। इस विषय पर विभिन्न राजनीतिक विचारधाराओं के अलग-अलग मत हैं। समय के साथ राज्य के कार्यों में भी परिवर्तन आया है। पहले राज्य का मुख्य कार्य सुरक्षा और कानून-व्यवस्था बनाए रखना था, जबकि आज वह शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और जनकल्याण जैसे क्षेत्रों में भी सक्रिय है।

सामान्यतः राज्य के कार्यों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जाता है– अनिवार्य कार्य एवं ऐच्छिक कार्य। व्यक्तिवादी विचारधारा राज्य की सीमित भूमिका का समर्थन करती है, जबकि समाजवादी और लोक कल्याणकारी विचारधाराएँ राज्य के व्यापक कार्यक्षेत्र को आवश्यक मानती हैं। इस अध्याय में राज्य के विभिन्न कार्यों, उनसे सम्बन्धित विचारधाराओं तथा बदलते वैश्विक परिदृश्य में उनकी प्रासंगिकता का अध्ययन किया जाएगा।

► 5.3. अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main Points of Text)

► 5.3.1. राज्य के कार्यों का वर्गीकरण : अनिवार्य एवं ऐच्छिक कार्य

(Classification of State Functions: Essential and Optional Functions) : - राज्य के कार्यों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जाता है– अनिवार्य कार्य (Essential Functions) तथा ऐच्छिक कार्य (Optional Functions)।

(अ). राज्य के अनिवार्य कार्य :-

ये वे कार्य होते हैं जिनके बिना राज्य का अस्तित्व और सामाजिक व्यवस्था बनाए रखना संभव नहीं होता। इसमें देश की सुरक्षा, कानून एवं व्यवस्था की स्थापना, न्याय प्रदान करना, नागरिकों के अधिकारों की रक्षा तथा अन्य राज्यों के साथ संबंध बनाए रखना जैसे कार्य शामिल हैं।

1. देश की बाहरी आक्रमणों से सुरक्षा –

राज्य का प्रमुख कार्य देश को बाहरी शत्रुओं और आक्रमणों से सुरक्षित रखना है। इसके लिए सेना तथा रक्षा व्यवस्था का संगठन किया जाता है।

2. शांति एवं कानून-व्यवस्था बनाए रखना –

राज्य समाज में शांति और सुरक्षा बनाए रखने का कार्य करता है। अपराधों को रोकने तथा नागरिकों की सुरक्षा के लिए पुलिस व्यवस्था स्थापित की जाती है।

3. न्याय का प्रबन्धन –

राज्य कानून बनाकर न्यायालयों की स्थापना करता है, जिससे सभी नागरिकों को न्याय मिलता है और सामाजिक व्यवस्था बनी रहती है ।

4. पारिवारिक संबंधों का नियमन –

राज्य विवाह, तलाक, उत्तराधिकार और गोद लेने से संबंधित कानून बनाता है। इससे पारिवारिक जीवन में स्थिरता और व्यवस्था बनी रहती है।

5. नागरिकों के अधिकारों एवं कर्तव्यों का निर्धारण -

राज्य नागरिकों के अधिकारों एवं कर्तव्यों को तय करके राज्य और व्यक्ति के संबंधों का स्पष्ट निर्धारण करता है |

(ख). ऐच्छिक कार्य :-

राज्य के द्वारा किए जाने वाले वे कार्य जिन्हें वह अपनी सुविधा और आवश्यकता के अनुसार सम्पन्न करता है, ऐच्छिक कार्य कहलाते हैं। ये इस प्रकार हैं–

1. सार्वभौमिक और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा व्यवस्था का विकास करना।

2. जनस्वास्थ्य संरक्षण हेतु चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अवसंरचना का विस्तार करना।

3. कला, साहित्य और सांस्कृतिक विरासत के संवर्धन को प्रोत्साहित करना।

4. परिवहन के साधनों की व्यवस्था करना और रेल, सड़क, पुल, एयरपोर्ट आदि का निर्माण करवाना।

5. नागरिकों के मनोरंजन हेतु पार्क, बगीचे आदि सार्वजनिक सुविधाओं का विकास करना।

6. खेल प्रतिभाओं के विकास तथा खेल संस्कृति को प्रोत्साहित करना।

► 5.3.2. 'लेसेज-फेयर' की अवधारणा और रात्रि प्रहरी राज्य का स्वरूप

(Concept of Laissez-faire and the Nature of a Night Watchman State):-

लेसेज-फेयर (Laissez-faire) एक फ्रांसीसी शब्द है, जिसका अर्थ है "हस्तक्षेप न करना"। यह 18वीं एवं 19वीं शताब्दी की व्यक्तिवादी और उदारवादी विचारधारा का प्रमुख सिद्धान्त था। इसके अनुसार राज्य को व्यक्ति के आर्थिक और सामाजिक जीवन में न्यूनतम हस्तक्षेप करना चाहिए तथा उसे अधिकतम स्वतंत्रता प्रदान करनी चाहिए। इस विचारधारा के प्रमुख समर्थक एडम स्मिथ, जे. एस. मिल तथा हरबर्ट स्पेंसर थे।

इस सिद्धान्त के अनुसार राज्य का कार्य बाहरी सुरक्षा, आंतरिक शांति, कानून-व्यवस्था तथा न्याय की स्थापना तक सीमित होना चाहिए। ऐसे राज्य को **रात्रि प्रहरी राज्य** (Night Watchman State) कहा जाता है, क्योंकि यह मुख्यतः नागरिकों के जीवन एवं संपत्ति की रक्षा करता है और शिक्षा, स्वास्थ्य तथा आर्थिक गतिविधियों में हस्तक्षेप नहीं करता। इसलिए व्यक्तिवादी विचारकों ने राज्य को "आवश्यक बुराई" (Necessary Evil) मानते हुए उसके सीमित कार्यक्षेत्र का समर्थन किया।

► 5.3.3. आर्थिक समानता और उत्पादन के साधनों पर राज्य का नियंत्रण

(Economic Equality and State Control over Means of Production) :-

समाजवादी विचारधारा व चिंतन के अनुसार आर्थिक समानता सामाजिक न्याय की अनिवार्य शर्त है। इस दृष्टिकोण में भूमि, उद्योग, बैंकिंग तथा परिवहन जैसे प्रमुख उत्पादन साधनों पर राज्य के नियंत्रण अथवा स्वामित्व का समर्थन किया जाता है, ताकि संपत्ति और संसाधनों का केंद्रीकरण रोका जा सके। राज्य नियोजित आर्थिक नीतियों के माध्यम से उत्पादन एवं वितरण को नियंत्रित कर आर्थिक विषमताओं को कम करने तथा समाज के सभी वर्गों के लिए समान अवसर सुनिश्चित करने का प्रयास करता है।

► 5.3.4. जनकल्याण और व्यक्तिगत स्वतंत्रता : राज्य की भूमिका और सीमाएँ (Public Welfare and Individual Liberty: The Role and Limitations of the State):-

आधुनिक राज्य से अपेक्षा की जाती है कि वह नागरिकों के जीवन को अधिक सुरक्षित, सम्मानजनक और सुविधाजनक बनाने के लिए आवश्यक कदम उठाए। इसी उद्देश्य से राज्य शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा तथा कमजोर वर्गों के संरक्षण से सम्बन्धित विभिन्न योजनाएँ संचालित करता है। किन्तु राज्य की भूमिका जितनी व्यापक होती है, उसके हस्तक्षेप की सम्भावना उतनी ही बढ़ती है। इसलिए यह जरूरी है कि जनकल्याण के नाम पर व्यक्तिगत अधिकारों व स्वतंत्रताओं का अनावश्यक हनन ना हो। एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में राज्य का दायित्व केवल कल्याणकारी नीतियाँ लागू

करना ही नहीं, बल्कि नागरिक स्वतंत्रता और राज्य शक्ति के मध्य संतुलन बनाए रखना भी है। इसी संतुलन में ही आधुनिक राज्य की सफलता निहित है।

► 5.3.5. लोक कल्याणकारी राज्य के कार्य (Functions of a Welfare State):-

लोक कल्याणकारी राज्य का ध्येय केवल कानून-व्यवस्था एवं सुरक्षा की स्थापना तक सीमित नहीं होता, बल्कि नागरिकों के सामाजिक, आर्थिक एवं नैतिक उत्थान भी करता है । इसके प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

- सार्वभौमिक एवं समावेशी शिक्षा व्यवस्था का विकास।
- जनस्वास्थ्य संरक्षण तथा चिकित्सा अवसंरचना का 'सुदृढ़ीकरण' |
- रोजगारोन्मुखी आर्थिक नीतियों का निर्माण एवं क्रियान्वयन |
- निर्बल , वंचित एवं हाशिये पर स्थित लोगों के हितों का संरक्षण।
- आवास, पेयजल एवं अन्य मूलभूत नागरिक सुविधाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
- बेरोजगारी, वृद्धावस्था तथा अन्य सामाजिक जोखिमों से सुरक्षा प्रदान करना।
- सामाजिक समानता, न्याय एवं समान अवसरों की सुनिश्चितता।

► 5.4. पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

► 5.4.1. नकारात्मक या सीमित राज्य का सिद्धान्त : व्यक्तिवाद (Negative or Limited State Theory : Individualism) :-

नकारात्मक उदारवाद या व्यक्तिवादी विचारधारा सीमित राज्य पर बल देती है। वे राज्य को एक आवश्यक बुराई मानते है। यह विचारधारा व्यक्ति की स्वतंत्रता, अधिकारों एवं पहल-शक्ति को सर्वोच्च महत्व देती है।

1. व्यक्ति सर्वोपरि है –

व्यक्तिवादी विचारधारा में व्यक्ति को राज्य से अधिक महत्व दिया जाता है। राज्य का अस्तित्व व्यक्ति के हितों को पूरा करने के लिए माना जाता है।

2. राज्य एक आवश्यक बुराई है –

राज्य को पूर्णतः समाप्त नहीं किया जा सकता, किन्तु उसकी शक्ति सीमित होनी चाहिए। उसका मुख्य कार्य शान्ति और सुरक्षा बनाए रखना है |

3. न्यूनतम राज्य हस्तक्षेप –

राज्य को नागरिकों के सामाजिक, आर्थिक और व्यक्तिगत जीवन में कम-से-कम दखल देना चाहिए। व्यक्तियों को अपने निर्णय स्वयं लेने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

4. निजी संपत्ति की मान्यता –

निजी संपत्ति को व्यक्ति का प्राकृतिक एवं वैध अधिकार माना जाता है। राज्य का दायित्व इसकी रक्षा करना है।

5. पुलिस अथवा रात्रि-प्रहरी राज्य की अवधारणा –

व्यक्तिवादी विचारधारा में राज्य को रात्रि-प्रहरी राज्य कहा जाता है। इसका मुख्य कार्य कानून-व्यवस्था बनाए रखना तथा नागरिकों के जीवन और संपत्ति की रक्षा करना है। यह सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में न्यूनतम हस्तक्षेप करता है।

प्रमुख विचारक –

- जॉन लॉक (John Locke)
- एडम स्मिथ (Adam Smith)
- जेरेमी बेंथम (Jeremy Bentham)
- हरबर्ट स्पेंसर (Herbert Spencer)
- एफ़.ए. हेयक (F.A. Hayek)
- रॉबर्ट नॉजिक (Robert Nozick)
- मिल्टन फ्रीडमैन (Milton Friedman)
- आयन रैंड (Ayn Rand) आदि।

► 5.4.2. सकारात्मक या व्यापक राज्य का सिद्धान्त : समाजवाद (Positive or Comprehensive State Theory : Socialism):-

समाजवादी विचारधारा राज्य की व्यापक एवं सकारात्मक भूमिका को बढ़ावा देती है। यह सामाजिक न्याय, आर्थिक समानता और जनकल्याण पर बल देती है। इसके प्रमुख लक्षण निम्नलिखित हैं–

1. राज्य की सकारात्मक भूमिका –

समाजवादी विचारधारा राज्य को केवल प्रहरी या रक्षक संस्था नहीं मानती। इसके अनुसार राज्य को जनता के कल्याण और विकास के रूप में कार्य करना चाहिए। समाज के विभिन्न क्षेत्रों में उसकी भूमिका रचनात्मक होनी चाहिए।

2. आर्थिक समानता पर बल –

समाजवादी विचारधारा आर्थिक असमानताओं को सामाजिक समस्याओं का प्रमुख कारण मानती है। इसका उद्देश्य धन और संसाधनों का न्यायसंगत वितरण सुनिश्चित करना है तथा आर्थिक समानता और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देना है।

3. लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा –

राज्य शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था करता है। इसका उद्देश्य नागरिकों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाना है।

4. शोषण का विरोध – समाजवाद आर्थिक और सामाजिक शोषण का विरोध करता है। यह श्रमिकों और कमजोर वर्गों के हितों की रक्षा पर बल देता है।

5. नियोजित आर्थिक विकास – समाजवाद योजनाबद्ध आर्थिक विकास का समर्थन करता है | इससे संसाधनों का संतुलित उपयोग संभव होता है।

► 5.4.3. वैश्वीकरण और 21वीं सदी में राज्य की बदलती नियामक भूमिका (Globalization and the Changing Regulatory Role of the State in the 21st Century) :-

वैश्वीकरण ने राज्य की पारंपरिक भूमिका बदल दी है। जो इस प्रकार है–

1. आर्थिक क्षेत्र में भूमिका का परिवर्तन –

वैश्वीकरण के कारण अर्थव्यवस्था ज्यादा खुली व प्रतिस्पर्धात्मक बनी है। राज्य का प्रत्यक्ष आर्थिक नियंत्रण पहले की तुलना में कम हुआ है। अब राज्य आर्थिक गतिविधियों के संचालन की बजाय उनके नियमन पर अधिक ध्यान देता है।

2. नियामक राज्य का उदय –

21वीं सदी में राज्य का स्वरूप नियामक हो गया है। अब राज्य प्रत्यक्ष संचालन की बजाय नियमों एवं नीतियों के माध्यम से व्यवस्था संचालित करता है। इसका प्रमुख उद्देश्य विभिन्न हितों के बीच संतुलन और जवाबदेही सुनिश्चित करना है।

3. उपभोक्ता एवं श्रमिक हितों का संरक्षण –

आधुनिक राज्य बाजार व्यवस्था पर आवश्यक नियंत्रण बनाए हुए है। उपभोक्ताओं और श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए कानूनी प्रावधान किए जाते हैं। यह अनुचित व्यापारिक प्रथाओं और शोषणकारी प्रवृत्तियों पर अंकुश लगाने का प्रयास करता है।

4. पर्यावरण संरक्षण की जिम्मेदारी –

राज्य पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के लिए नीतियाँ बनाता है। प्रदूषण नियंत्रण और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर बल दिया जाता है | सतत विकास को राष्ट्रीय विकास का महत्वपूर्ण आधार माना जाता है |

5. सूचना एवं प्रौद्योगिकी का महत्व –

राज्य तकनीकी विकास को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ई-गवर्नेंस के माध्यम से सेवाओं की उपलब्धता बढ़ती है।

► 5.4.4. राज्य और अंतरराष्ट्रीय सहयोग (State and International Cooperation) :- वर्तमान समय में अंतरराष्ट्रीय सहयोग राज्य की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता बन चुका है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, संचार और परिवहन के तीव्र विकास ने विश्व के देशों को परस्पर निकट ला दिया है। परिणामस्वरूप व्यापार, निवेश, ऊर्जा, रक्षा, शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान जैसे क्षेत्रों में राज्यों के बीच सहयोग निरंतर बढ़ रहा है। संयुक्त राष्ट्र संघ, G-20, BRICS, SCO

जैसे मंच विभिन्न देशों को साझा हितों और वैश्विक मुद्दों पर विचार-विमर्श का अवसर प्रदान करते हैं।

साथ ही जलवायु परिवर्तन, आतंकवाद, महामारियाँ, साइबर सुरक्षा तथा पर्यावरणीय संकट जैसी समस्याएँ राष्ट्रीय सीमाओं तक सीमित नहीं हैं। इन चुनौतियों से प्रभावी ढंग से निपटने के लिए राज्यों के बीच समन्वय, संवाद और सामूहिक प्रयास आवश्यक हैं। इसलिए आधुनिक राज्य केवल अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति तक सीमित नहीं रहता, बल्कि विश्व शांति, सतत विकास और वैश्विक स्थिरता की स्थापना में भी सक्रिय भूमिका निभाता है।

► 5.5. अपनी प्रगति जाँचें (Check Your Progress) :-

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में देने का प्रयास करें–

(i) राज्य को एक आवश्यक बुराई (A Necessary Evil) मानने वाली विचारधारा का नाम बताइए।

(ii) 'लेसेज-फेयर' (Laissez-faire) शब्द का शाब्दिक अर्थ क्या होता है?

(iii) “रात्रि-प्रहरी राज्य” (Night Watchman State) की अवधारणा क्या है?

(iv) 21वीं सदी में राज्य की भूमिका में क्या परिवर्तन आया है?

(v) व्यक्तिवादी और समाजवादी राज्य की अवधारणा में कोई एक अंतर लिखें।

(vi) नियामक राज्य (Regulatory State) का मुख्य कार्य क्या है?

(vii) उत्पादन के साधनों पर राज्य नियंत्रण का समर्थन करने वाली विचारधारा का नाम बताएँ।

(viii) राज्य का एक ऐच्छिक कार्य लिखें।

► 5.6. सारांश (Summary):-

राज्य के कार्यों का स्वरूप समय, परिस्थितियों तथा प्रचलित राजनीतिक विचारधाराओं के अनुसार परिवर्तित होता रहा है। सामान्यतः राज्य के कार्यों को अनिवार्य एवं ऐच्छिक वर्गों में विभाजित किया जाता है। राष्ट्रीय सुरक्षा, कानून-व्यवस्था तथा न्याय की स्थापना राज्य के मूलभूत एवं अनिवार्य दायित्व हैं, जबकि शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग तथा जनकल्याण से सम्बन्धित कार्य उसके विस्तृत उत्तरदायित्वों के अंतर्गत आते हैं।

राज्य के कार्यों के संबंध में विभिन्न राजनीतिक विचारकों ने अलग-अलग दृष्टिकोण प्रस्तुत किए हैं। व्यक्तिवादी राज्य को एक "आवश्यक बुराई" मानते हुए उसके सीमित कार्यक्षेत्र का समर्थन करते हैं तथा अहस्तक्षेप (Laissez-faire) की नीति पर बल देते हैं। इसके विपरीत समाजवादी विचारधारा राज्य को सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन का प्रमुख साधन मानती है तथा आर्थिक समानता, सामाजिक न्याय और उत्पादन के साधनों पर सार्वजनिक नियंत्रण की वकालत करती है। समाजवादी दृष्टिकोण में राज्य की भूमिका व्यापक और सक्रिय मानी जाती है।

21वीं सदी में वैश्वीकरण, उदारीकरण और निजीकरण के प्रभाव से राज्य की भूमिका में पुनः परिवर्तन आया है। आज राज्य प्रत्यक्ष उत्पादन और व्यापार के संचालन की अपेक्षा नियामक (Regulatory) एवं समन्वयकारी भूमिका अधिक निभाता है। साथ ही, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग, पर्यावरण संरक्षण, साइबर सुरक्षा और सतत विकास जैसे नए क्षेत्रों में भी उसकी जिम्मेदारियाँ बढ़ी हैं। इस प्रकार आधुनिक राज्य व्यक्तिगत स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय और आर्थिक विकास के मध्य संतुलन स्थापित करने का सतत प्रयास करता है।

► 5.7. सूचक शब्द (Key Words):-

लेसेज-फेयर, आवश्यक बुराई, रात्रि प्रहरी राज्य, सार्वजनिक स्वामित्व , सामाजिक सुरक्षा, अहस्तक्षेप का सिद्धान्त, पूँजीवाद, सकारात्मक स्वतंत्रता

1. लेसेज-फेयर – यह एक फ्रांसीसी शब्द है, जिसका अर्थ है "अकेला छोड़ दो" या आर्थिक मामलों में राज्य का न्यूनतम हस्तक्षेप।

2. आवश्यक बुराई – व्यक्तिवादियों के अनुसार राज्य एक बुराई है, क्योंकि यह स्वतंत्रता छीनता है, पर सुरक्षा के लिए आवश्यक है।

3. रात्रि प्रहरी राज्य – ऐसा राज्य जिसका कार्यक्षेत्र मुख्यतः कानून-व्यवस्था बनाए रखने, न्याय प्रदान करने तथा बाहरी सुरक्षा सुनिश्चित करने तक सीमित रहता है।

4. सार्वजनिक स्वामित्व – उत्पादन के साधनों पर राज्य या समाज का नियंत्रण।

5. सामाजिक सुरक्षा – बीमारी, बेरोजगारी, वृद्धावस्था अथवा अन्य संकटपूर्ण परिस्थितियों में राज्य द्वारा नागरिकों को प्रदान की जाने वाली आर्थिक एवं सामाजिक सहायता।

6. अहस्तक्षेप का सिद्धान्त – नागरिक एवं आर्थिक जीवन में राज्य के कम-से-कम हस्तक्षेप का सिद्धान्त।

7. पूँजीवाद – एक आर्थिक व्यवस्था जिसमें उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व होता है तथा बाजार की शक्तियाँ आर्थिक गतिविधियों का संचालन करती हैं।

8. सकारात्मक स्वतंत्रता – व्यक्ति के विकास हेतु अनुकूल अवसरों और परिस्थितियों की उपलब्धता।

► 5.8. स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions):-

1. राज्य किसे कहते हैं? राज्य के विभिन्न कार्यों का वर्णन कीजिए।

2. राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में समाजवादी दृष्टिकोण की विवेचना कीजिए।

3. राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में उदारवादी सिद्धान्त का मूल्यांकन कीजिए।

4. 21वीं सदी में राज्य की परिवर्तित भूमिका पर टिप्पणी कीजिए।

5. लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा से आप क्या समझते हैं? इसके प्रमुख कार्यों की सूची बनाइए।

6. "राज्य एक आवश्यक बुराई है।" व्यक्तिवादियों के इस कथन की आलोचनात्मक समीक्षा कीजिए।

7. राज्य के अनिवार्य एवं ऐच्छिक कार्यों के बीच सोदाहरण अन्तर स्पष्ट कीजिए।

8. सकारात्मक स्वतंत्रता की अवधारणा राज्य के कार्यों के विस्तार को किस प्रकार उचित ठहराती है?

9. राज्य के कार्यों के विषय सन्दर्भ में 'रात्रि प्रहरी राज्य' की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।

10. आधुनिक समय में राज्य के कार्यों की विवेचना कीजिए।

► 5.9. अपनी प्रगति की जाँच करने के लिए उत्तर (Answers to Check Your Progress):-

(i) व्यक्तिवाद या शास्त्रीय उदारवाद।

(ii) "लेसेज़-फेयर" (Laissez-faire) का शाब्दिक अर्थ है - "अकेला छोड़ दो" | आर्थिक क्षेत्र में व्यावसायिक गतिविधियों में राज्य का न्यूनतम हस्तक्षेप।

(iii) ऐसा राज्य जो केवल कानून-व्यवस्था, न्याय और सुरक्षा तक सीमित रहता है।

(iv) राज्य प्रत्यक्ष उत्पादन करने के बजाय नियामक (Regulatory) की भूमिका निभाने लगा है।

(v) व्यक्तिवादी राज्य न्यूनतम हस्तक्षेप का समर्थन करता है, जबकि समाजवादी राज्य व्यापक आर्थिक एवं सामाजिक नियंत्रण का समर्थन करता है।

(vi) विभिन्न क्षेत्रों के लिए नियम बनाना और उनके पालन को सुनिश्चित करना।

(vii) समाजवाद एवं साम्यवादी विचारधाराएँ।

(viii) शिक्षा प्रदान करना।

► 5.10. संदर्भ ग्रन्थ / निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings):-

1. राजनीतिक सिद्धांत की रूपरेखा – ओ. पी. गाबा

2. राजनीतिक शास्त्र के सिद्धान्त – जे. सी. जौहरी

3. आधुनिक राजनीतिक सिद्धान्त – डॉ. वी. एन. खन्ना

4. The Welfare State – David Garland

5. A Grammar of Politics – Harold J. Laski

6. Capitalism, Socialism and Democracy – Joseph Schumpeter

7. On Liberty – John Stuart Mill

8. The Modern State – R. M. MacIver

9. Global Politics – Andrew Heywood

10. राजनीति विज्ञान के मूल तत्व – एस. एल. वर्मा

11. Comparative Government and Politics- J.C. Johari

12. Sovereignty- Harold J. Laski

13. History of Political Theory- George H. Sabine

Unit-III

अध्याय - 6

राज्य और अन्य साहचर्य: समाज, सरकार एवं राष्ट्र

SUBJECT : POLITICAL SCIENCE, SEMESTER-1	
COURSE CODE : C24POL101T	AUTHOR: DR. RAJIV VERMA
LESSON NO : 6	
राज्य और अन्य साहचर्य: समाज, सरकार एवं राष्ट्र (State and Other Institutions: State and Society)	

6.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

6.2. प्रस्तावना (Introduction)

6.3. अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of Text)

6.3.1. राज्य और समाज : व्यापकता एवं सम्प्रभुता (State and Society : Comprehensiveness and Sovereignty)

6.3.2. राज्य और सरकार : मूर्त एवं अमूर्त का संबंध (State and Government : Relationship between the Abstract and the Concrete)

6.3.3. राज्य और राष्ट्र : कानूनी एवं भावनात्मक स्वरूप

(State and Nation : Legal vs Emotional Nature)

6.3.4. राष्ट्र-राज्य की आधुनिक अवधारणा

(Modern Concept of Modern State)

6.3.5. राज्य, समाज, सरकार और राष्ट्र की परस्पर निर्भरता (Mutual Interdependence of State, Society and Nation)

6.4. पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

6.4.1. समाज राज्य का जनक है : ऐतिहासिक दृष्टिकोण

(Society is the Originator of State : Historical Perspective)

6.4.2. सरकार : राज्य की इच्छा को अभिव्यक्त देने वाला माध्यम

(Government : The Medium to Express the Will of the State)

6.4.3. राष्ट्रीयता और सम्प्रभुता का मिलन (Union of Nationality and Sovereignty)

6.4.4. कार्यक्षेत्र और उद्देश्यों के आधार पर संस्थाओं का तुलनात्मक वर्गीकरण

(Comparative Classification of Institutions based on Scope and Objectives)

6.4.5. वैश्वीकरण के दौर में राज्य, समाज और राष्ट्र के बदलते समीकरण

(Changing Equations in the Era of Globalisation)

6.5. अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress)

6.6. सारांश (Summary)

6.7. मुख्य शब्द (Key Words)

6.8. स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

6.9. अपनी प्रगति की जाँच के लिए उत्तर (Answers to Check Your Progress)

6.10. संदर्भ ग्रन्थ / निर्देशित अध्ययन

(References / Suggested Readings)

► 6.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives) :-

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात् पाठक निम्नलिखित बिन्दुओं को समझने में सक्षम होंगे :–

• राज्य और समाज के बीच के घनिष्ठ संबंधों तथा उनके मूलभूत अंतरों को समझना।

• राज्य और सरकार के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन करना तथा सरकार की भूमिका को समझना।

• यह जानना कि सरकार राज्य की इच्छा, नीतियों और निर्णयों को किस प्रकार लागू करती है।

• राज्य और राष्ट्र की अवधारणाओं के बीच अंतर को स्पष्ट रूप से पहचानना।

• राष्ट्र-राज्य (Nation-State) की अवधारणा, स्वरूप एवं महत्व को समझना।

• समाज, राज्य, सरकार और राष्ट्र जैसी समान प्रतीत होने वाली अवधारणाओं के कारण उत्पन्न भ्रमों को दूर करना।

• ऐतिहासिक एवं कानूनी दृष्टिकोण से इन संस्थाओं की संरचना, अधिकार-क्षेत्र तथा कार्यों का मूल्यांकन करना।

• नागरिक जीवन में राज्य, समाज, सरकार और राष्ट्र की अलग-अलग भूमिकाओं एवं महत्व को समझते हुए राजनीतिक और सामाजिक संस्थाओं के प्रति एक परिपक्व एवं विवेकपूर्ण दृष्टिकोण विकसित करना।

► 6.2. प्रस्तावना (Introduction) :-

राजनीति विज्ञान में राज्य एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। अक्सर लोग राज्य, समाज, सरकार और राष्ट्र को एक ही समझ लेते हैं, जबकि वास्तव में इन सभी का अर्थ और कार्य अलग-अलग होते हैं। यही कारण है कि इन अवधारणाओं को सही ढंग से समझना आवश्यक है। राज्य एक राजनीतिक और कानूनी संस्था है, जिसे कानून बनाने और लागू करने का अधिकार प्राप्त होता है। इसके विपरीत समाज व्यक्तियों के आपसी संबंधों का व्यापक समूह है, जिसका अस्तित्व राज्य से पहले भी था।

सरकार राज्य का वह अंग है जो राज्य की नीतियों और निर्णयों को व्यवहार में लागू करती है। सरकार समय-समय पर बदल सकती है, लेकिन राज्य बना रहता है। इसी प्रकार राष्ट्र लोगों के बीच पाई जाने वाली साझा संस्कृति, इतिहास, भाषा और भावनात्मक एकता की भावना को व्यक्त

करता है। जब किसी राष्ट्र को राजनीतिक स्वतंत्रता और सम्प्रभुता प्राप्त हो जाती है, तब वह राष्ट्र-राज्य कहलाता है। इस अध्याय में राज्य, समाज, सरकार और राष्ट्र के बीच संबंधों तथा उनके प्रमुख अंतरों का अध्ययन किया जाएगा।

► 6.3. अध्याय के मुख्य बिंदु (Main Points of Text) :-

► 6.3.1. राज्य और समाज : व्यापकता एवं सम्प्रभुता (State and Society : Comprehensiveness and Sovereignty) :-

राज्य और समाज मानव जीवन की दो अत्यंत महत्वपूर्ण संस्थाएँ हैं, जिनके बीच घनिष्ठ संबंध होने के बावजूद दोनों की प्रकृति और कार्यक्षेत्र में महत्वपूर्ण अंतर पाया जाता है। समाज मानव संबंधों की सबसे व्यापक व्यवस्था है, जिसमें परिवार, धर्म, शिक्षा, संस्कृति, अर्थव्यवस्था, परम्पराएँ तथा विभिन्न सामाजिक संस्थाएँ सम्मिलित होती हैं। समाज का अस्तित्व राज्य से भी पहले का माना जाता है तथा यह व्यक्ति के जीवन के लगभग प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करता है। प्रसिद्ध राजनीतिक विचारक मैकाइवर ने समाज को **"सामाजिक संबंधों का जाल"** कहा है।

व्यापकता की दृष्टि से समाज राज्य से कहीं अधिक विस्तृत है, क्योंकि मानव जीवन की सभी सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियाँ समाज के अंतर्गत आती हैं, जबकि राज्य का क्षेत्र मुख्यतः

राजनीतिक गतिविधियों तक सीमित रहता है। इसी कारण राज्य को समाज का एक अंग माना जाता है, न कि समाज को राज्य का। सम्प्रभुता के आधार पर राज्य समाज से भिन्न है। राज्य एक राजनीतिक और कानूनी संस्था है जिसके पास सर्वोच्च वैधानिक शक्ति होती है, जिसे सम्प्रभुता कहा जाता है। राज्य कानून बनाने, उन्हें लागू करने तथा उल्लंघन करने वालों को दण्डित करने का अधिकार रखता है।

राज्य के चार आवश्यक तत्त्व– जनसंख्या, निश्चित भू-भाग, सरकार और सम्प्रभुता – माने जाते हैं। इसके विपरीत समाज के पास कोई वैधानिक या दण्डात्मक शक्ति नहीं होती। समाज व्यक्तियों को नैतिक मूल्यों, रीति-रिवाजों, परम्पराओं तथा जनमत के माध्यम से प्रभावित करता है। इस प्रकार समाज व्यापक तो है, परन्तु सम्प्रभु नहीं; जबकि राज्य सम्प्रभु तो है, परन्तु समाज जितना व्यापक नहीं। दोनों संस्थाएँ मानव जीवन के संगठन और विकास में परस्पर पूरक भूमिका निभाती हैं।

► 6.3.2. राज्य और सरकार : मूर्त एवं अमूर्त का संबंध (State and Government : Relationship between the Abstract and the Concrete) :- राजनीतिक सिद्धान्त में राज्य और सरकार को एक-दूसरे से पृथक किन्तु परस्पर संबंध अवधारणाओं के रूप में देखा जाता है। राज्य (State) एक अमूर्त (Abstract) तथा स्थायी संस्था है, जिसका निर्माण

जनसंख्या, निश्चित भू-भाग, सरकार और सम्प्रभुता जैसे तत्त्वों से होता है। जबकि सरकार राज्य का मूर्त (Concrete) एवं क्रियाशील स्वरूप है, जिसके माध्यम से राज्य अपनी इच्छा, नीतियों और कानूनों को व्यवहार में लागू करता है। **गार्नर के अनुसार, सरकार वह साधन है जिसके द्वारा राज्य की संप्रभु इच्छा अभिव्यक्त होती है ।**

सरकार परिवर्तनशील होती है तथा चुनावों अथवा अन्य राजनीतिक प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप बदल सकती है, किन्तु राज्य का अस्तित्व सामान्यतः बना रहता है। अतः राज्य को शक्ति का वैधानिक स्रोत तथा सरकार को उस शक्ति के प्रयोग का व्यावहारिक माध्यम माना जाता है।

► 6.3.3. राज्य और राष्ट्र : कानूनी बनाम भावनात्मक स्वरूप (State and Nation : Legal Vs Emotional Nature) :-

राज्य और राष्ट्र को अक्सर एक ही माना जाता है, जबकि दोनों की प्रकृति अलग-अलग होती है। राज्य एक राजनीतिक एवं कानूनी संस्था है, जो जनसंख्या, निश्चित भू-भाग, सरकार और सम्प्रभुता – इन चार तत्त्वों से मिलकर बनता है। राज्य का अस्तित्व कानून, प्रशासन और राजनीतिक शक्ति पर आधारित होता है। इसलिए राज्य को एक कानूनी (Legal) इकाई माना जाता है, जो अपने क्षेत्र में सर्वोच्च अधिकार रखती है।

इसके विपरीत, राष्ट्र एक भावनात्मक और सांस्कृतिक अवधारणा है। यह लोगों की साझा भाषा, संस्कृति, इतिहास, परम्पराओं और राष्ट्रीय चेतना

पर आधारित होती है। राष्ट्र का सम्बन्ध लोगों की सामूहिक पहचान व भावनाओं से होता है, न कि सिर्फ राजनीतिक शक्ति से। इसलिए ही राष्ट्र को एक भावनात्मक (Emotional) समुदाय कहा जाता है।

► 6.3.4. राष्ट्र-राज्य की आधुनिक अवधारणा (Modern Concept of Nation-State) :-

• राष्ट्र-राज्य उस राजनीतिक व्यवस्था को कहा जाता है जहाँ राष्ट्र की सांस्कृतिक एकता और राज्य की सम्प्रभु सत्ता का मेल दिखाई देता है।

• आधुनिक राष्ट्र-राज्य की नींव 1648 की वेस्टफेलिया संधि से जुड़ी मानी जाती है, जिसने सम्प्रभु राज्यों के सिद्धान्त को स्थापित किया।

• 1789 की फ्रांसीसी क्रांति ने राष्ट्रवाद, नागरिकता और जन-सम्प्रभुता के विचारों को लोकप्रिय बनाया, जिससे राष्ट्र-राज्य की अवधारणा को नया आधार मिला।

• राज्य नागरिकों को राजनीतिक संगठन, कानून, प्रशासन तथा सुरक्षा प्रदान करता है, जबकि राष्ट्र भावनात्मक एकता का आधार बनता है।

• अर्नेस्ट रेनाँ (1882) के अनुसार राष्ट्र ऐसे लोगों का समुदाय है जो साझा इतिहास और एक साथ रहने की भावना से जुड़े होते हैं।

• बेनेडिक्ट एंडरसन (1983) ने राष्ट्र को "कल्पित समुदाय" (Imagined Community) कहा, क्योंकि राष्ट्र के सभी लोग एक-दूसरे को नहीं जानते, फिर भी वे स्वयं को एक ही समुदाय का सदस्य मानते हैं।

• भारत, फ्रांस, जापान और इटली आधुनिक राष्ट्र-राज्यों के प्रमुख उदाहरण हैं।

• वैश्वीकरण के बढ़ते प्रभाव के बावजूद, राष्ट्र-राज्य आज भी अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की सबसे महत्वपूर्ण इकाई बना हुआ है।

► 6.3.5. राज्य, समाज, सरकार और राष्ट्र की परस्पर निर्भरता (Mutual Interdependence of State, Society and Nation) :-

राज्य, समाज, सरकार और राष्ट्र अलग-अलग अवधारणाएँ हैं | अकसर इन्हें लोग एक ही समझने की भूल कर बैठते हैं। ये एक-दूसरे से गहराई से जुड़ी हुई संस्थाएँ हैं। समाज राज्य का आधार होता है क्योंकि राज्य का निर्माण समाज में रहने वाले लोगों से होता है। सरकार राज्य की नीतियों और कानूनों को लागू करती है, जबकि राष्ट्र लोगों में एकता, निष्ठा और राष्ट्रीय भावना का विकास करता है। इसलिए किसी एक संस्था की कमजोरी अन्य संस्थाओं को भी प्रभावित कर सकती है।

आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था में इन चारों की भूमिका एक-दूसरे की पूरक मानी जाती है। समाज राज्य को आधार प्रदान करता है, राज्य समाज में शांति और व्यवस्था बनाए रखता है, सरकार प्रशासन का संचालन करती है तथा राष्ट्र नागरिकों को एक सूत्र में बाँधता है। इस प्रकार राज्य, समाज, सरकार

और राष्ट्र मिलकर राजनीतिक स्थिरता, सामाजिक एकता और राष्ट्रीय विकास को सुनिश्चित करते हैं।

► 6.4. पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text) :-

► 6.4.1. समाज राज्य का जनक है : ऐतिहासिक दृष्टिकोण (Society is the Originator of State : Historical Perspective) :-

निम्नलिखित कारणों के आधार पर समाज को राज्य का जनक माना जाता है–

1. समाज राज्य से प्राचीन संस्था है –

समाज का अस्तित्व राज्य से पहले का माना जाता है। मानव ने सबसे पहले सामाजिक जीवन अपनाया। इसके बाद अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए राज्य जैसी राजनीतिक संस्था का निर्माण किया।

2. राज्य का विकास सामाजिक आवश्यकताओं से हुआ –

समय के साथ जनसंख्या में वृद्धि हुई और सामाजिक संबंध अधिक जटिल होते गए। लोगों की सुरक्षा, शांति और न्याय देने व विवादों के समाधान के लिए एक संगठित व्यवस्था की आवश्यकता महसूस हुई। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए राज्य का विकास हुआ, जिसने समाज में कानून और व्यवस्था स्थापित करने का कार्य किया।

3. विचारकों का दृष्टिकोण –

अरस्तू ने राज्य को प्राकृतिक संस्था माना और बताया कि इसका विकास परिवार तथा ग्राम से हुआ है, जबकि मैकाइवर ने समाज को राज्य से अधिक प्राचीन और व्यापक संस्था माना।

4. ऐतिहासिक विकास और महत्व –

परिवार, कुल, जनजाति और समुदाय के क्रमिक विकास से राज्य का निर्माण हुआ। इसलिए राज्य को समाज का संगठित एवं राजनीतिक स्वरूप माना जाता है तथा समाज को राज्य का जनक माना जाता है।

► 6.4.2. सरकार : राज्य की इच्छा को अभिव्यक्ति देने वाला माध्यम (Government : The Medium to Express the Will of the State) :-

सरकार वह माध्यम है जिसके द्वारा राज्य अपनी इच्छा, नीतियों और उद्देश्यों को व्यवहार में व्यक्त करता है। राज्य स्वयं एक अमूर्त संस्था है, इसलिए वह प्रत्यक्ष रूप से कार्य नहीं कर सकता। सरकार कानूनों का निर्माण, प्रशासन का संचालन तथा नीतियों का क्रियान्वयन करके राज्य की इच्छा को मूर्त रूप प्रदान करती है। न्याय, सुरक्षा, कर-संग्रह, जनकल्याण आदि कार्य भी सरकार के माध्यम से ही सम्पन्न होते हैं। गार्नर (Garner) के अनुसार सरकार वह यंत्र है जिसके द्वारा राज्य अपनी सम्प्रभु शक्ति का प्रयोग करता है।

इस प्रकार सरकार राज्य और नागरिकों के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में काम करती है तथा राज्य को व्यावहारिक स्वरूप देने का काम करती है।

► 6.4.3. राष्ट्रीयता (Nationality) और सम्प्रभुता का मिलन (Union of Nationality and Sovereignty) :-

राष्ट्रीयता और सम्प्रभुता का मिलन आधुनिक राष्ट्र-राज्य की आधारशिला माना जाता है। राष्ट्रीयता लोगों में साझा इतिहास, संस्कृति, भाषा, परम्पराओं तथा राष्ट्रीय चेतना के आधार पर एकता की भावना विकसित करती है। दूसरी ओर, सम्प्रभुता राज्य की सर्वोच्च और स्वतंत्र राजनीतिक शक्ति को व्यक्त करती है। जब किसी राष्ट्र को स्वतंत्र एवं सम्प्रभु राजनीतिक सत्ता प्राप्त हो जाती है, तब वह राष्ट्र-राज्य का रूप धारण कर लेता है।

1789 की फ्रांसीसी क्रांति ने राष्ट्रीयता और जन-सम्प्रभुता के विचारों को व्यापक रूप में प्रोत्साहित किया, जिससे आधुनिक राष्ट्र-राज्यों का विकास हुआ। इस प्रकार राष्ट्रीयता और सम्प्रभुता मिलकर किसी राज्य की एकता, स्थिरता और स्वतंत्र पहचान को मजबूत बनाती हैं।

► 6.4.4. कार्यक्षेत्र और उद्देश्यों के आधार पर संस्थाओं का तुलनात्मक वर्गीकरण (Comparative Classification of Institutions based on Scope and Objectives) :-

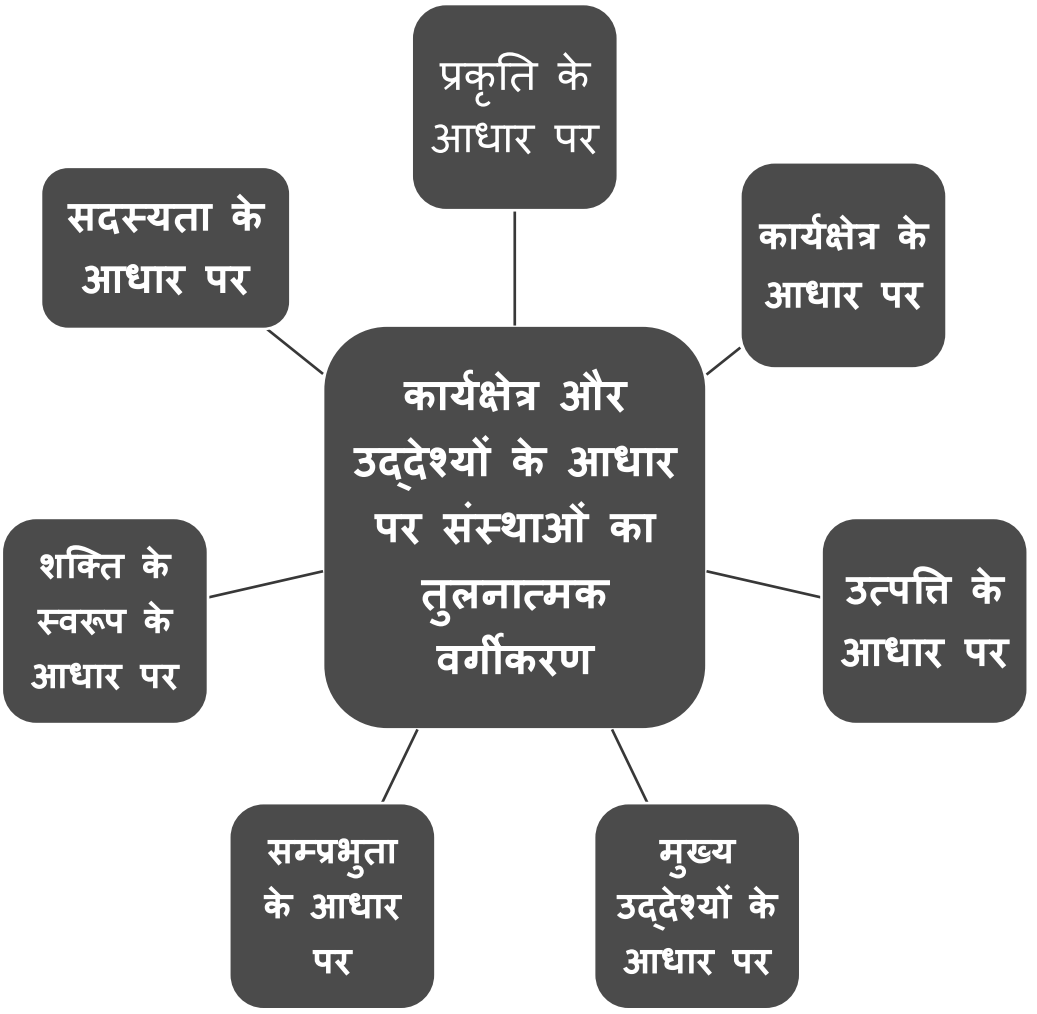

1. प्रकृति के आधार पर :-

समाज एक सामाजिक संस्था है, जिसका निर्माण व्यक्तियों के पारस्परिक संबंधों से होता है। राज्य एक राजनीतिक और कानूनी संस्था है, जो कानून और शासन व्यवस्था से जुड़ी होती है। सरकार राज्य का कार्यकारी अंग है, जो राज्य की नीतियों और कानूनों को लागू करती है। इसके विपरीत राष्ट्र एक सांस्कृतिक

और भावनात्मक समुदाय है, जो लोगों की साझा पहचान और राष्ट्रीय चेतना पर आधारित होता है।

2. उत्पत्ति के आधार पर :-

समाज का अस्तित्व राज्य से पहले माना जाता है। मानव ने पहले सामाजिक जीवन विकसित किया और बाद में राज्य की स्थापना की। राज्य का विकास समाज की आवश्यकताओं से हुआ। सरकार का जन्म राज्य के साथ हुआ क्योंकि राज्य के कार्यों को संचालित करने के लिए सरकार की आवश्यकता होती है। वहीं राष्ट्र का विकास साझा इतिहास, संस्कृति, भाषा और परम्पराओं के आधार पर होता है।

3. कार्यक्षेत्र के आधार पर :-

समाज का कार्यक्षेत्र सबसे व्यापक होता है क्योंकि इसमें मानव जीवन की सभी सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियाँ शामिल होती हैं। राज्य का कार्यक्षेत्र मुख्यतः राजनीतिक और कानूनी मामलों तक सीमित रहता है। सरकार का कार्यक्षेत्र प्रशासनिक होता है तथा वह राज्य के दैनिक कार्यों का संचालन करती है। राष्ट्र का कार्यक्षेत्र सांस्कृतिक और भावनात्मक एकता से संबंधित होता है।

4. मुख्य उद्देश्यों के आधार पर :-

समाज का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक जीवन को व्यवस्थित करना तथा व्यक्तियों के बीच सहयोग और संबंधों को बनाए रखना है। राज्य का उद्देश्य शांति, सुरक्षा, न्याय तथा कानून-व्यवस्था स्थापित करना होता है। सरकार का मुख्य कार्य राज्य की नीतियों और योजनाओं को लागू करना तथा प्रशासन चलाना है। राष्ट्र का उद्देश्य लोगों में राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय चेतना और सामूहिक पहचान की भावना विकसित करना होता है।

5. आधार के अनुसार :-

समाज सामाजिक संबंधों पर आधारित होता है। राज्य का आधार सम्प्रभुता होती है, जिसके कारण उसे सर्वोच्च राजनीतिक शक्ति प्राप्त होती है। सरकार वैधानिक अधिकारों के आधार पर कार्य करती है। राष्ट्र का आधार राष्ट्रीय चेतना, देशभक्ति और सामूहिक भावना होती है।

6. सदस्यता के आधार पर :-

समाज की सदस्यता व्यापक होती है और व्यक्ति एक साथ अनेक सामाजिक समूहों का सदस्य हो सकता है। राज्य की सदस्यता नागरिकता पर आधारित होती है। सरकार में केवल सीमित व्यक्ति ही शामिल होते हैं, जैसे मंत्री, अधिकारी और प्रशासनिक कर्मचारी। राष्ट्र की सदस्यता राष्ट्रीय भावना और सामूहिक पहचान पर आधारित होती है।

7. शक्ति के स्वरूप के आधार पर :-

समाज के पास नैतिक और सामाजिक शक्ति होती है, जो जनमत, परम्पराओं और सामाजिक मान्यताओं के माध्यम से प्रभाव डालती है। राज्य के पास सर्वोच्च वैधानिक शक्ति होती है, जिसके बल पर वह कानून बनाता और लागू करता है। सरकार प्रशासनिक शक्ति का प्रयोग करती है। राष्ट्र के पास कानूनी शक्ति नहीं होती, लेकिन उसका नैतिक और भावनात्मक प्रभाव अत्यंत शक्तिशाली होता है।

8. सम्प्रभुता के आधार पर :-

समाज सम्प्रभु नहीं होता। राज्य ही एकमात्र ऐसी संस्था है जिसके पास सम्प्रभुता होती है। सरकार स्वयं सम्प्रभु नहीं होती, बल्कि राज्य की सम्प्रभु शक्ति का प्रयोग करती है। राष्ट्र भी अपने आप में सम्प्रभु नहीं होता, जब तक कि उसे राजनीतिक रूप से राज्य का स्वरूप प्राप्त न हो जाए।

9. स्थायित्व के आधार पर :-

समाज अपेक्षाकृत स्थायी संस्था है और लंबे समय तक बना रहता है। राज्य भी सामान्यतः स्थायी होता है। सरकार अस्थायी होती है और चुनावों या अन्य राजनीतिक प्रक्रियाओं के कारण बदल सकती है। राष्ट्र भी अपेक्षाकृत स्थायी होता है क्योंकि वह लोगों की साझा ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पहचान पर आधारित रहता है।

10. उदाहरण के आधार पर :-

समाज के उदाहरण परिवार, समुदाय, जाति, धर्म तथा विभिन्न सामाजिक संगठन हैं। राज्य के उदाहरण भारत, अमेरिका, जापान और फ्रांस हैं। सरकार के उदाहरण भारत सरकार, राज्य सरकारें तथा स्थानीय प्रशासनिक संस्थाएँ हैं। राष्ट्र के उदाहरण भारतीय राष्ट्र, जापानी राष्ट्र और फ्रांसीसी राष्ट्र हैं।

इस प्रकार समाज, राज्य, सरकार और राष्ट्र परस्पर जुड़े होने के बावजूद अपनी प्रकृति, उद्देश्य, कार्यक्षेत्र और शक्ति के आधार पर एक-दूसरे से भिन्न संस्थाएँ हैं।

► 6.4.5. वैश्वीकरण के दौर में राज्य, समाज और राष्ट्र के बदलते समीकरण (Changing Equations in the Era of Globalization):- वैश्वीकरण ने राज्य, समाज और राष्ट्र के पारंपरिक संबंधों को काफी हद तक प्रभावित किया है। आज संचार, इंटरनेट, व्यापार तथा तकनीकी विकास के कारण देशों के बीच की दूरी कम हो गई है तथा लोगों के बीच संपर्क बढ़ा है। इसका प्रभाव राज्य की नीतियों, समाज की जीवनशैली और राष्ट्र की सांस्कृतिक पहचान पर भी दिखाई देता है। एक ओर वैश्वीकरण ने आर्थिक अवसरों और सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा दिया है, तो दूसरी ओर राष्ट्रीय हितों, सांस्कृतिक मूल्यों और सम्प्रभुता की रक्षा की चुनौतियाँ भी उत्पन्न हुई हैं। इसलिए वर्तमान समय

में राज्य, समाज और राष्ट्र के संबंध पहले की अपेक्षा अधिक घनिष्ठ और जटिल हो गए हैं।

► 6.5. अपनी प्रगति जाँचिए (Check Your Progress) :-

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षिप्त रूप में देने का प्रयास कीजिए :–

(i) वेस्टफेलिया की संधि कब हुई थी?

(ii) "Imagined Community" की अवधारणा किसने दी?

(iii) अरस्तू ने मनुष्य को क्या कहा था?

(iv) "सरकार राज्य का एजेंट या व्यावहारिक यंत्र है।" यह कथन किस राजनीतिक सत्य को दर्शाता है ?

(v) राज्य और समाज में दो अंतर बताइए।

(vi) क्या एक राज्य के भीतर एक से ज्यादा राष्ट्र या राष्ट्रीयताएँ हो सकती हैं?

(vii) राष्ट्र क्या है?

(viii) आज के वर्तमान युग में राष्ट्र, राज्य, समाज एवं सरकार की भूमिका में क्या बदलाव आया है?

► 6.6. सारांश (Summary) :-

इस अध्याय में राज्य, समाज, सरकार और राष्ट्र जैसी महत्वपूर्ण अवधारणाओं का अध्ययन किया गया। सबसे पहले राज्य और समाज के संबंध को समझा

गया। समाज को राज्य से ज्यादा प्राचीन और व्यापक संस्था माना जाता है, क्योंकि मानव ने सामाजिक जीवन का विकास राज्य के अस्तित्व से पहले किया था। समाज मानव जीवन के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक पक्षों को समाहित करता है, जबकि राज्य मुख्य रूप से कानून, व्यवस्था और सुरक्षा से संबंधित होता है। राज्य के पास सम्प्रभु शक्ति होती है, जबकि समाज मुख्यतः परम्पराओं, रीति-रिवाजों और नैतिक मूल्यों के आधार पर संचालित होता है।

इसी प्रकार, राज्य और सरकार के बीच भी महत्वपूर्ण अंतर पाया जाता है। राज्य एक स्थायी और कानूनी संस्था है, जबकि सरकार उसका कार्यकारी रूप है। सरकार राज्य की नीतियों, कानूनों और निर्णयों को लागू करने का कार्य करती है। सरकार समय-समय पर बदल सकती है, लेकिन राज्य का अस्तित्व बना रहता है। इसलिए सरकार को राज्य की इच्छा को अभिव्यक्त देने वाला माध्यम माना जाता है।

राज्य और राष्ट्र के अंतर को भी स्पष्ट किया गया है। राज्य एक राजनीतिक एवं कानूनी संस्था है, जबकि राष्ट्र साझा इतिहास, संस्कृति, भाषा और राष्ट्रीय चेतना पर आधारित भावनात्मक समुदाय है। राष्ट्र के लिए सम्प्रभुता आवश्यक नहीं होती, लेकिन राज्य के लिए यह एक अनिवार्य तत्व है। जब किसी राष्ट्र को राजनीतिक स्वतंत्रता और सम्प्रभु सत्ता प्राप्त हो जाती है, तब वह राष्ट्र-राज्य का रूप धारण कर लेता है। आधुनिक विश्व-व्यवस्था में

राष्ट्र-राज्य को सबसे महत्वपूर्ण राजनीतिक इकाई माना जाता है। इस प्रकार राज्य, समाज, सरकार और राष्ट्र अलग-अलग अवधारणाएँ होने के बावजूद एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं और आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था को संचालित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन संस्थाओं की परस्पर क्रियाओं से किसी देश की राजनीतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय संरचना का निर्माण होता है।

► 6.7. सूचक शब्द (Key Words) :-

अमूर्त संस्था, मूर्त संस्था, राष्ट्रीयता, बाध्यकारी शक्ति, राष्ट्र-राज्य, वैधता, सांस्कृतिक एकता, अंत:विषय संबंध, राष्ट्रवाद, शासन।

1. अमूर्त संस्था (Abstract Institution) – ऐसी संस्था जिसका अस्तित्व वैचारिक और कानूनी रूप में होता है, लेकिन जिसे प्रत्यक्ष रूप से देखा या छुआ नहीं जा सकता। राज्य इसका प्रमुख उदाहरण है।

2. मूर्त संस्था (Concrete Form) – ऐसा स्वरूप जो प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है और व्यवहार में कार्य करता है। सरकार राज्य का मूर्त एवं कार्यशील रूप मानी जाती है।

3. राष्ट्रीयता (Nationality) – साझा इतिहास, भाषा, संस्कृति, परम्पराओं तथा सामूहिक पहचान पर आधारित वह भावना, जो लोगों को एक राष्ट्र के रूप में जोडती है ।

4. बाध्यकारी शक्ति (Coercive Power) :– कानूनों का पालन करवाने और उल्लंघन करने वालों पर दंड देने की राज्य की शक्ति।

5. राष्ट्र-राज्य (Nation-State) :– वह राज्य जहाँ राष्ट्र और राज्य की सीमाएँ लगभग एक समान हों।

6. वैधता (Legitimacy) :– सरकार की शक्ति को जनता द्वारा दी गई स्वीकृति।

7. सांस्कृतिक एकता (Cultural Unity) :– साझी भाषा, संस्कृति और परम्पराओं से उत्पन्न एकता।

8. अंतःविषय संबंध (Interdisciplinary Relation) :– विभिन्न विषयों या क्षेत्रों, जैसे राजनीति, समाज और संस्कृति के बीच पाए जाने वाले पारस्परिक संबंध और प्रभाव।

9. राष्ट्रवाद (Nationalism) :– राष्ट्र के प्रति निष्ठा और समर्पण की भावना।

10. शासन (Governance) :– राज्य के प्रशासन, नीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन तथा सार्वजनिक मामलों के प्रबंधन की प्रक्रिया |

► 6.8. स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions) :–

1. "समाज राज्य से पहले आता है और उसका क्षेत्र राज्य से अधिक व्यापक है।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।

2. वैश्वीकरण और बहुसांस्कृतिक समाजों के उभरने से आधुनिक 'राष्ट्र-राज्य' के सामने क्या चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं?

3. राष्ट्र-राज्य से क्या अभिप्राय है? आधुनिक राष्ट्र-राज्यों के ऐतिहासिक विकास की व्याख्या कीजिए।

4. राज्य की परिभाषा दीजिए। राज्य एवं समाज में अन्तर का वर्णन करें।

5. राज्य, समाज, सरकार और राष्ट्र की परस्पर निर्भरता का विश्लेषण कीजिए।

6. "राज्य एक कानूनी संस्था है, जबकि राष्ट्र एक भावनात्मक समुदाय है।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।

7. "सरकारें बदलती रहती हैं, लेकिन राज्य बना रहता है।" इस कथन का परीक्षण कीजिए।

8. वैश्वीकरण के दौर में राज्य, समाज और राष्ट्र के बदलते सम्बन्धों का विश्लेषण कीजिए। 9. कार्यक्षेत्र और उद्देश्यों के आधार पर राज्य, समाज, सरकार और राष्ट्र का तुलनात्मक वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए।

10. राज्य संघों का एक संघ है | क्या आप इस कथन से सहमत हैं?

11. राष्ट्र एवं राज्य में अन्तर स्पष्ट कीजिए। इन दोनों में परस्पर क्या सम्बन्ध है? बताइए।

12. क्या कोई जनसमूह निश्चित भू-भाग के बिना 'राष्ट्र' कहला सकता है? इतिहास के उदाहरणों के साथ चर्चा कीजिए।

13. राज्य और सरकार के बीच अन्तर को स्पष्ट करते हुए बताइए कि दोनों एक-दूसरे के पूरक कैसे हैं?

► 6.9. अपनी प्रगति की जाँच करने के लिए उत्तर (Answers to Check Your Progress) :-

(i) वेस्टफेलिया की संधि 1648 ई. में हुई थी।

(ii) बेनेडिक्ट एंडरसन ने।

(iii) "राजनीतिक प्राणी" (Political Animal) |

(iv) यह कथन राज्य और सरकार के बीच संबंध को दर्शाता है कि सरकार राज्य की इच्छा को क्रियान्वित करने वाला साधन है ।

(v). 1. समाज राज्य से अधिक व्यापक है।

2. राज्य के पास सम्प्रभुता होती है, जबकि समाज के पास सम्प्रभुता नहीं |

(vi) हाँ, एक राज्य के भीतर एक से अधिक राष्ट्र या राष्ट्रीयताएँ हो सकती हैं। ऐसे राज्य को बहुराष्ट्रीय राज्य (Multinational State) कहा जाता है, जैसे भारत और यूनाइटेड किंगडम।

(vii) राष्ट्र ऐसे लोगों का समुदाय है जो साझा इतिहास, संस्कृति, भाषा और राष्ट्रीय चेतना से जुड़े होते हैं।

(viii) आज के समय में राष्ट्र, राज्य, समाज और सरकार की भूमिका पहले की अपेक्षा अधिक व्यापक और सक्रिय हो गई है। वैश्वीकरण, तकनीकी विकास और बढ़ती जन-अपेक्षाओं के कारण इन संस्थाओं के कार्यक्षेत्र तथा परस्पर निर्भरता में वृद्धि हुई है।

► 6.10. संदर्भ ग्रन्थ / निर्दिष्ट पुस्तकें (References / Suggested Readings) :-

1. राजनीति विज्ञान के मूल सिद्धान्त – डॉ. आशिर्वादम

2. राजनीति शास्त्र के सिद्धान्त – जे. सी. जोहरी

3. राजनीतिक सिद्धान्त की रूपरेखा – ओ. पी. गाबा

4. The Modern State – R. M. MacIver

5. A Grammar of Politics – Harold J. Laski

6. Nations and Nationalism – Ernest Gellner

7. The State in Political Theory – S. P. Verma

8. Political Ideologies: An Introduction – Andrew Heywood

9. राजनीति विज्ञान का परिचय – डॉ. बी. एल. फड़िया

10. The Concept of the State – Quentin Skinner

11. Principles of Political Science – ए. सी. कपूर

12. Political Theory – राजीव भार्गव एवं अशोक आचार्य

Unit-IV

अध्याय : 7

संप्रभुता - अर्थ, प्रकार और मुख्य विशेषताएँ

SUBJECT : POLITICAL SCIENCE, SEMESTER-1	
COURSE CODE : C24POL101T	AUTHOR: DR. RAJIV VERMA
LESSON NO : 7	
संप्रभुता - अर्थ, प्रकार और मुख्य विशेषताएँ (Sovereignty: Meaning, Types and Main Characteristics)	

7.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

7.2. प्रस्तावना (Introduction)

7.3. अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main Points of Text)

7.3.1. संप्रभुता का अर्थ एवं व्युत्पत्ति
(Meaning and Etymology of Sovereignty)

7.3.2. संप्रभुता की प्रमुख परिभाषाएँ (Definitions of Sovereignty)

7.3.3. संप्रभुता के विभिन्न प्रकार (Various Types of Sovereignty)

7.3.4. संप्रभुता के दो मुख्य पक्ष : आंतरिक एवं बाहरी
(Two Aspects of Sovereignty : Internal and External)

7.3.5. संप्रभुता की मुख्य विशेषताएँ या लक्षण
(Main Characteristics of Sovereignty)

7.4. पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

7.4.1. ऑस्टिन का संप्रभुता का कानूनी सिद्धांत
(Austin's Legal Theory of Sovereignty)

7.4.2. नाममात्र एवं वास्तविक तथा कानूनी एवं राजनीतिक संप्रभुता

(Titular Vs Real and Legal Vs Political Sovereignty)

7.4.3. लोकप्रिय संप्रभुता और रूसो का योगदान

(Popular Sovereignty and Rousseau's Contribution)

7.4.4. संप्रभुता के लक्षण : पूर्णता, सर्वव्यापकता, स्थायित्व और अविभाज्यता

(Characteristics of Sovereignty: Absoluteness, Universality, Permanence and Indivisibility)

7.4.5. बहुलवाद और वैश्वीकरण के दौर में संप्रभुता की चुनौतियाँ

(Challenges to Sovereignty in the Era of Pluralism and Globalisation)

7.5. अपनी प्रगति जांचें (Check Your Progress)

7.6. सारांश (Summary)

7.7. सूचक शब्द (Key Words)

7.8. स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

7.9. अपनी प्रगति की जाँच करने के लिए उत्तर

(Answers to Check Your Progress)

7.10. संदर्भ ग्रन्थ / निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

► 7.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives):-

इस पाठ के अध्ययन के बाद विद्यार्थी निम्नलिखित बिन्दुओं को समझ सकेंगे–

• संप्रभुता (Sovereignty) की अवधारणा तथा राजनीति विज्ञान में उसके महत्व को समझ सकेंगे।

• संप्रभुता के ऐतिहासिक विकास और जीन बोंदा (Jean Bodin) के योगदान का अध्ययन कर सकेंगे।

• विभिन्न राजनीतिक विचारकों द्वारा दी गई संप्रभुता की परिभाषाओं का विश्लेषण कर सकेंगे|

• संप्रभुता के विभिन्न प्रकारों जैसे नाममात्र एवं वास्तविक, कानूनी एवं राजनीतिक संप्रभुता के बीच अंतर स्पष्ट कर सकेंगे।

• संप्रभुता की प्रमुख विशेषताओं, जैसे स्थायित्व, सर्वोच्चता, अविभाज्यता और अदेयता को समझ सकेंगे।

• आंतरिक और बाह्य संप्रभुता के स्वरूप तथा उनके महत्त्व का अध्ययन कर सकेंगे।

• आधुनिक वैश्वीकरण के दौर में संप्रभुता के बदलते स्वरूप और उसके समक्ष उपस्थित चुनौतियों का मूल्यांकन कर सकेंगे।

• राज्य की संरचना और कार्यप्रणाली में संप्रभुता की भूमिका को समझ सकेंगे।

► 7.2. प्रस्तावना (Introduction) :-

राजनीति विज्ञान में संप्रभुता (Sovereignty) को राज्य का सबसे महत्वपूर्ण तत्त्व माना जाता है। यही वह विशेषता है जो राज्य को अन्य सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक संस्थाओं से अलग और सर्वोच्च बनाती है। किसी भी राज्य की वास्तविक पहचान उसकी संप्रभुता से ही निर्धारित होती है, क्योंकि इसके बिना राज्य स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने और उन्हें लागू करने में सक्षम नहीं होता। इसी कारण अनेक राजनीतिक विचारकों ने संप्रभुता को राज्य की आत्मा तथा उसकी सर्वोच्च सत्ता का प्रतीक माना है।

आधुनिक अर्थ में संप्रभुता के सिद्धान्त का व्यवस्थित प्रतिपादन 16वीं शताब्दी में जीन बोंदा (Jean Bodin) ने किया। बाद में थॉमस हॉब्स (Thomas Hobbes) और जॉन ऑस्टिन (John Austin) ने इस अवधारणा को और विकसित किया। संप्रभुता के दो प्रमुख पक्ष माने जाते हैं– आंतरिक संप्रभुता, जो राज्य अपने क्षेत्र के भीतर सर्वोच्च सत्ता को व्यक्त करती है, तथा बाह्य संप्रभुता, जो अन्य राज्यों के नियंत्रण से उसकी स्वतंत्रता को दर्शाती है। वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में अंतरराष्ट्रीय संगठनों, बहुराष्ट्रीय कंपनियों और वैश्विक संस्थाओं के बढ़ते प्रभाव के कारण संप्रभुता की पारम्परिक अवधारणा नए प्रश्नों और चुनौतियों का सामना कर रही है। इसलिए समकालीन राजनीति को समझने के लिए संप्रभुता का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक माना जाता है।

► 7.3. अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main Points of Text) :-

► 7.3.1. संप्रभुता का अर्थ एवं व्युत्पत्ति (Meaning and Etymology of Sovereignty) :-

संप्रभुता राज्य का सबसे महत्वपूर्ण और अनिवार्य तत्त्व माना जाता है। यह वह सर्वोच्च शक्ति है जिसके आधार पर राज्य अपने क्षेत्र के भीतर शासन, कानून निर्माण तथा प्रशासन का संचालन करता है। संप्रभुता के कारण ही राज्य अन्य सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं से अपनी भिन्न पहचान प्राप्त करता है। यदि किसी राजनीतिक संगठन के पास सम्प्रभु शक्ति नहीं है, तो उसे पूर्ण राज्य नहीं माना जा सकता। इसलिए अनेक राजनीतिक विचारकों ने संप्रभुता को राज्य की आत्मा तथा उसकी सर्वोच्च सत्ता का प्रतीक माना है।

'संप्रभुता' शब्द अंग्रेजी भाषा के "Sovereignty" शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है। इसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द Superanus जो कि दो शब्दों "Super" तथा "Anus" से मिलकर बना है , जिनका सामान्य अर्थ 'सर्वोच्च' एवं 'शक्ति' है। इस प्रकार संप्रभुता का शाब्दिक अर्थ सर्वोच्च शक्ति है। सामान्य रूप से संप्रभुता का आशय ऐसी सर्वोच्च और अंतिम सत्ता से है जो किसी अन्य शक्ति के अधीन नहीं होती। राज्य अपने क्षेत्र में कानून बनाना, उन्हें लागू करने तथा नागरिकों से उनका पालन करवाने का अधिकार इसी शक्ति के आधार पर प्राप्त करता है। राजनीतिक विज्ञान में संप्रभुता को राज्य की स्वतंत्रता, अधिकार और सर्वोच्चता का आधार माना जाता है।

► **7.3.2. संप्रभुता की प्रमुख परिभाषाएँ (Definitions of Sovereignty) :-**

संप्रभुता राजनीति शास्त्र की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा व्यापक रूप से प्रसिद्धि प्राप्त, चर्चित अवधारणा है। विभिन्न राजनीतिक विचारकों ने अपने-अपने दृष्टिकोण के आधार पर इसकी अलग-अलग परिभाषाएँ दी हैं, किन्तु सभी का मूल उद्देश्य राज्य की सर्वोच्च, स्वतंत्र एवं अंतिम शक्ति को स्पष्ट करना है। वास्तव में संप्रभुता ही वह तत्त्व है जो राज्य को आंतरिक रूप से सर्वोच्च तथा बाह्य रूप से स्वतंत्र बनाता है। प्रमुख विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं–

1. **जीन बोंदा (Jean Bodin)** के अनुसार , **"प्रभुसत्ता नागरिकों और प्रजाजनों के ऊपर राज्य की वह सर्वोच्च शक्ति है, जिस पर कानून का कोई अंकुश न हो ।"**
2. **विलोबी (Willoughby)** के अनुसार , **"प्रभुसत्ता राज्य की सर्वोपरि इच्छा होती है।"**

3. **ग्रोशियस (Grotius)** के अनुसार ,**"प्रभुसत्ता उसके व्यक्ति में निहित सर्वोच्च राजनीतिक शक्ति है, जिसके कार्य अन्य किसी पर आश्रित न हों और जिसकी आज्ञा का उल्लंघन न किया जा सकता हो ।"**

4. **जॉन विलियम बर्गेस (John William Burgess)** के विचारानुसार ,

"संप्रभुता व्यक्तियों, प्रजाजनों और प्रजाजनों के सभी संघों के ऊपर (राज्य की) मौलिक, निरंकुश एवं असीमित शक्ति है।"

5. **पोलक (Pollock)** के अनुसार **, "प्रभुसत्ता वह शक्ति है जो न तो अस्थायी है, न किसी दूसरे द्वारा दी गई है, वह किसी ऐसे विशिष्ट नियमों द्वारा बँधी हुई होती है, जिन्हें वह स्वयं न बदल सके और न ही वह पृथ्वी पर अन्य शक्ति के प्रति उत्तरदायी है ।"**

6. **हॉब्स (Hobbes)** ने अपनी पुस्तक 'लेवियाथन' में बताया है **, "प्रजा राजा के साथ समझौता करके अपनी स्वतंत्रता और अधिकार उसको समर्पित कर देती है।"**

7. ड्यूगिट (Duguit) के अनुसार, **"प्रभुसत्ता राज्य को आदेश देने की शक्ति होती है। राज्य व्यक्ति के रूप में संगठित राष्ट्र की यह इच्छा होती है, यह वह अधिकार है जिसके आधार पर राज्य के निश्चित क्षेत्र के सभी व्यक्तियों को असीमित आदेश दिए जा सकते हैं ।"**

► 7.3.3. संप्रभुता के विभिन्न प्रकार (Various Types of Sovereignty) :-

राजनीतिक सिद्धान्त में संप्रभुता एक समान रूप में नहीं पाई जाती, बल्कि उसके अनेक स्वरूप और प्रकार बताए हैं। विभिन्न विद्वानों ने राज्य की शक्ति, उसके प्रयोग तथा उसके स्रोत के आधार पर संप्रभुता का वर्गीकरण किया है। इन प्रकारों के अध्ययन से संप्रभुता की वास्तविक प्रकृति को समझने में सहायता मिलती है। प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं–

1. नाममात्र तथा वास्तविक संप्रभुता (Nominal and Real Sovereignty):-

नाममात्र संप्रभुता उस व्यक्ति या संस्था में निहित होती है जिसके नाम पर शासन चलाया जाता है, किन्तु वास्तविक शक्ति उसके पास नहीं होती। दूसरी ओर, वास्तविक संप्रभुता उस व्यक्ति या संस्था के पास होती है जो वास्तव में शासन संबंधी निर्णय लेती है।

उदाहरण : ब्रिटेन में राजा/रानी नाममात्र संप्रभु है, जबकि वास्तविक शक्ति संसद और मंत्रिमण्डल के पास होती है। भारत में राष्ट्रपति संवैधानिक प्रमुख है, परन्तु वास्तविक कार्यपालिका प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद होती है।

2. वैधानिक तथा राजनीतिक संप्रभुता (Legal and Political Sovereignty):-

वैधानिक संप्रभुता उस संस्था में निहित होती है जिसे कानून बनाने और बदलने का अधिकार प्राप्त होता है। राजनीतिक संप्रभुता उस शक्ति को कहते हैं जो वैधानिक संप्रभुता को प्रभावित या नियंत्रित करती है।

उदाहरण : भारत में संसद वैधानिक संप्रभुता का प्रतीक है, जबकि जनता, जनमत, राजनीतिक दल तथा दबाव समूह राजनीतिक संप्रभुता के स्रोत माने जाते हैं।

3. लोकप्रिय अथवा सार्वजनिक संप्रभुता (Popular Sovereignty) :-

लोकप्रिय संप्रभुता का अर्थ है कि राज्य की अंतिम शक्ति जनता में निहित होती है। लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था इसी सिद्धान्त पर आधारित है कि सरकार जनता की इच्छा के अनुसार कार्य करे। **रूसो** ने अपनी प्रसिद्ध कृति

Social Contract में जनसत्ता को सर्वोच्च माना | आधुनिक लोकतन्त्रों में चुनाव, जनमत और प्रतिनिधि संस्थाएँ इसी सिद्धान्त की अभिव्यक्ति हैं।

4. विधि-सम्मत तथा यथार्थ संप्रभुता (De Jure and De Facto Sovereignty) :-

विधि-सम्मत (De Jure) संप्रभुता उस सत्ता को कहते हैं जिसे कानून और संविधान की मान्यता प्राप्त हो। यथार्थ (De Facto) संप्रभुता उस शक्ति को कहते हैं जो व्यवहार में शासन करती है, भले ही उसे कानूनी मान्यता प्राप्त न हो।

उदाहरण : किसी सैन्य तख्तापलट के बाद सत्ता पर कब्जा करने वाली सरकार प्रारम्भ में यथार्थ संप्रभुता हो सकती है, किन्तु बाद में मान्यता मिलने पर वह विधि-सम्मत संप्रभुता प्राप्त कर लेती है।

5. एकलवादी संप्रभुता (Monistic Sovereignty) :-

एकलवादी दृष्टिकोण के अनुसार संप्रभुता अविभाज्य, सर्वोच्च और असीमित होती है तथा उसका निवास केवल राज्य में होता है। इस मत के समर्थक **जीन बोंदा, हॉब्स और ऑस्टिन** थे | इनके अनुसार राज्य से ऊपर कोई शक्ति नहीं हो सकती और सभी व्यक्ति तथा संस्थाएँ राज्य के अधीन होती हैं।

उदाहरण: निरंकुश राजतंत्रों में संप्रभुता का केंद्रीकरण एकलवादी दृष्टिकोण को दर्शाता है।

6. बहुलवादी संप्रभुता (Pluralistic Sovereignty) :-

बहुलवादी विचारक राज्य को समाज की अनेक संस्थाओं में से केवल एक संस्था मानते हैं। उनके अनुसार संप्रभुता केवल राज्य में निहित नहीं होती, बल्कि परिवार, चर्च, ट्रेड यूनियन, सहकारी संस्थाएँ तथा अन्य सामाजिक संगठन भी शक्ति के महत्वपूर्ण केन्द्र होते हैं। **लास्की**, **मैकाइवर** तथा **जी. डी. एच. कोल** बहुलवादी विचारधारा के प्रमुख समर्थक हैं।

उदाहरण : आधुनिक लोकतांत्रिक समाजों में मीडिया, न्यायपालिका, नागरिक संगठन और दबाव समूह शासन को प्रभावित करते हैं, जो बहुलवादी दृष्टिकोण को दर्शाता है ।

► 7.3.4. संप्रभुता के दो मुख्य पक्ष : आंतरिक एवं बाह्य (Two Aspects of Sovereignty : Internal and External) :-

संप्रभुता के दो प्रमुख पक्ष माने जाते हैं– आंतरिक संप्रभुता और बाह्य संप्रभुता। आंतरिक संप्रभुता राज्य की सीमाओं के भीतर उसकी सर्वोच्च सत्ता को दर्शाती है, जबकि बाह्य संप्रभुता अन्य राज्यों के संबंध में उसकी स्वतंत्रता को व्यक्त करती है। दोनों मिलकर राज्य की पूर्ण संप्रभुता का निर्माण करते हैं।

(क) आंतरिक संप्रभुता (Internal Sovereignty) :- आंतरिक संप्रभुता से तात्पर्य राज्य की उस सर्वोच्च शक्ति से है जिसके आधार पर वह अपने क्षेत्र में रहने वाले सभी व्यक्तियों, समुदायों तथा संस्थाओं पर अधिकार रखता है। राज्य के कानूनों और आदेशों का पालन करना प्रत्येक नागरिक के लिए

आवश्यक होता है। यदि कोई व्यक्ति या संस्था कानून का उल्लंघन करती है, तो राज्य उसे दण्डित कर सकता है। **बर्गेस** के अनुसार संप्रभुता सभी व्यक्तियों और संघों पर राज्य की मौलिक तथा सर्वोच्च शक्ति है।

(ख) बाह्य संप्रभुता (External Sovereignty) :-

बाह्य संप्रभुता का अर्थ है कि राज्य किसी बाहरी शक्ति के अधीन नहीं होता और अपने अंतरराष्ट्रीय मामलों का संचालन स्वतंत्र रूप से करता है। वह अन्य राज्यों के साथ संधियाँ कर सकता है, कूटनीतिक संबंध स्थापित कर सकता है तथा अपनी विदेश नीति स्वयं निर्धारित कर सकता है। लास्की के अनुसार, एक संप्रभु राज्य अन्य राज्यों के संबंध में स्वतंत्र होता है और किसी बाहरी शक्ति के दबाव में कार्य करने के लिए बाध्य नहीं होता।

► 7.3.5. संप्रभुता की मुख्य विशेषताएँ या लक्षण (Main Characteristics of Sovereignty):-

संप्रभुता राज्य का सबसे महत्वपूर्ण तत्त्व माना जाता है। इसी के आधार पर राज्य अपने क्षेत्र में सर्वोच्च सत्ता का प्रयोग करता है तथा अन्य सभी संस्थाओं से अलग पहचान प्राप्त करता है। राजनीतिक विचारकों ने संप्रभुता की कई विशेषताओं का उल्लेख किया है, जिनसे इनके वास्तविक स्वरूप को समझा जा सकता है। इसकी प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. सर्वव्यापकता (All-Comprehensiveness) :– संप्रभुता राज्य की सीमाओं के भीतर रहने वाले सभी व्यक्तियों, संस्थाओं और संगठनों पर समान रूप से लागू होती है। कोई भी व्यक्ति या समूह राज्य के अधिकार क्षेत्र से बाहर होने

का दावा नहीं कर सकता। इसी कारण राज्य के कानून सभी पर समान रूप से लागू होते हैं।

2. निरपेक्षता (Absoluteness) :–

संप्रभुता राज्य की सर्वोच्च शक्ति है, जिसके ऊपर कोई अन्य वैधानिक शक्ति नहीं होती। राज्य अपने क्षेत्र में अंतिम निर्णय लेने का अधिकार रखता है तथा उसकी इच्छा ही कानून का आधार बनती है। इसी कारण इसे सर्वोच्च सत्ता कहा जाता है।

3. मौलिकता (Originality) :–

संप्रभुता किसी अन्य संस्था या व्यक्ति द्वारा प्रदान नहीं की जाती, बल्कि यह राज्य में स्वाभाविक रूप से निहित होती है। राज्य अपनी शक्ति किसी बाहरी स्रोत से प्राप्त नहीं करता। यही कारण है कि संप्रभुता को राज्य की मौलिक शक्ति माना जाता है।

4. स्थायित्व (Permanence) :–

सरकारें बदल सकती हैं, शासक बदल सकते हैं, लेकिन संप्रभुता बनी रहती है। जब तक राज्य का अस्तित्व रहता है, तब तक उसकी संप्रभुता भी बनी रहती है। इसलिए इसे राज्य का स्थायी गुण माना जाता है।

5. अविभाज्यता (Indivisibility) :–

संप्रभुता को विभाजित नहीं किया जा सकता। एक राज्य में अंतिम और सर्वोच्च सत्ता केवल एक ही होती है। यदि संप्रभुता को बाँट दिया जाए, तो राज्य की एकता और सर्वोच्चता प्रभावित हो सकती है।

6. अपृथक्करणीयता (Inalienability) :–

संप्रभुता को राज्य से अलग नहीं किया जा सकता। जिस प्रकार राज्य के बिना संप्रभुता की कल्पना नहीं की जा सकती, उसी प्रकार संप्रभुता के बिना राज्य का अस्तित्व भी संभव नहीं है। दोनों परस्पर एक-दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हैं।

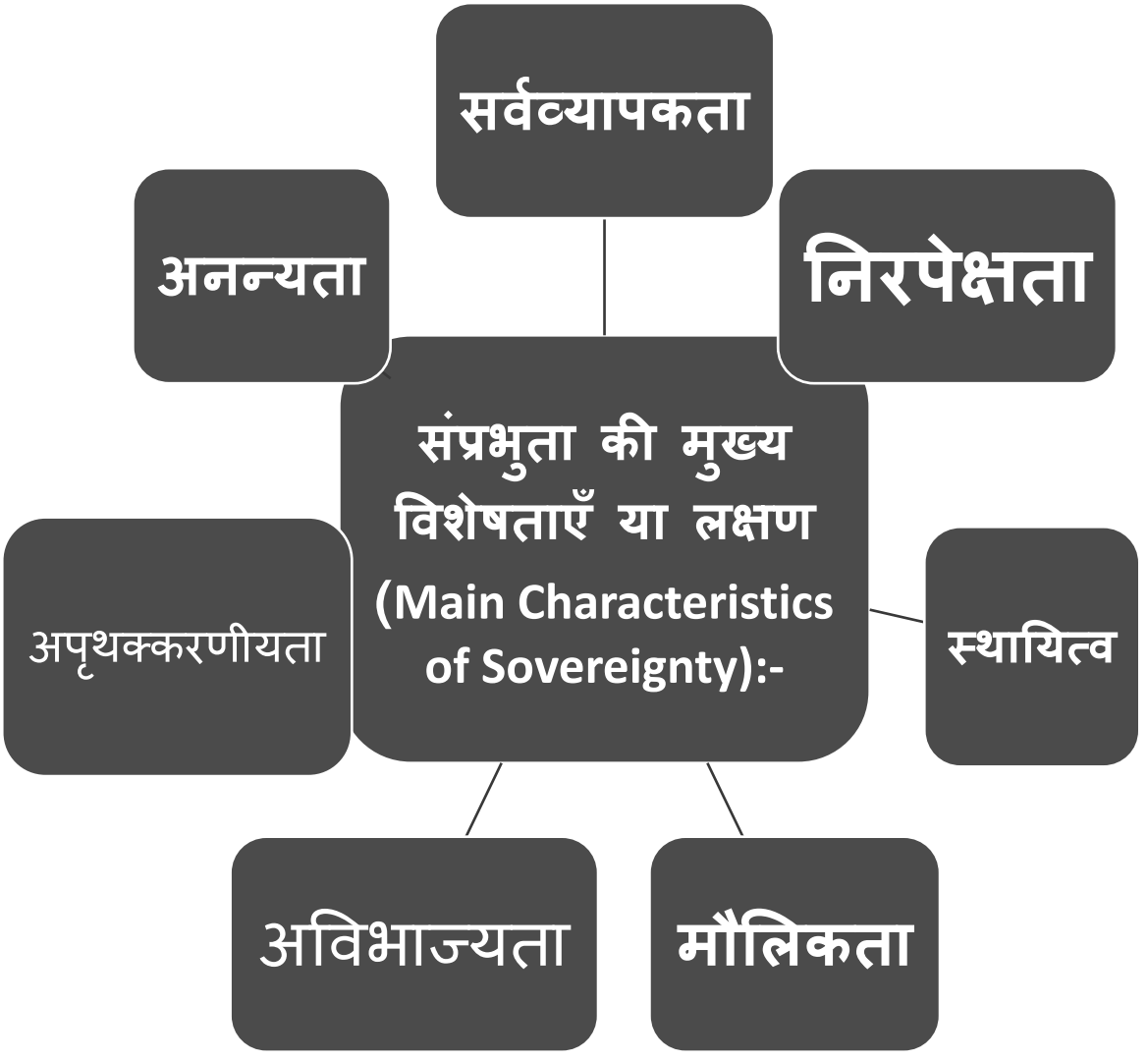

7. अनन्यता (Exclusiveness) :–

एक राज्य में केवल एक ही सर्वोच्च सत्ता हो सकती है। यदि एक ही क्षेत्र में दो सर्वोच्च शक्तियाँ हों, तो शासन व्यवस्था में संघर्ष और अस्थिरता उत्पन्न हो जाएगी। इसलिए संप्रभुता का स्वरूप अनन्य माना जाता है।

8. अविनाशिता (Imperishability) :–

संप्रभुता आसानी से समाप्त नहीं होती। शासन परिवर्तन, राजनीतिक संकट या अस्थायी कठिनाइयों से इसकी मूल प्रकृति प्रभावित नहीं होती। राज्य के अस्तित्व के साथ ही संप्रभुता भी बनी रहती है।

► 7.4. पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text):-

► 7.4.1. ऑस्टिन का संप्रभुता का कानूनी सिद्धान्त (Austin's Legal Theory of Sovereignty) :-

संप्रभुता के वैधानिक सिद्धान्त का प्रतिपादन अंग्रेज़ विधिवेत्ता जॉन ऑस्टिन (John Austin) ने किया। उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक **'Lectures on Jurisprudence'** में सम्प्रभुता की व्याख्या करते हुए बताया है कि प्रत्येक राज्य में एक ऐसी सर्वोच्च सत्ता होती है, जिसकी आज्ञा का अधिकांश लोग पालन करते हैं और जो स्वयं किसी अन्य सत्ता के अधीन नहीं होती। ऑस्टिन के अनुसार कानून संप्रभु का आदेश होता है और उसका पालन करवाने के लिए दण्ड की व्यवस्था भी रहती है। इसलिए राज्य की वास्तविक शक्ति संप्रभु में निहित होती है।

ऑस्टिन के शब्दों में, **"यदि किसी समाज का अधिकांश भाग किसी निश्चित श्रेष्ठ सत्ता की आज्ञा का नियमित रूप से पालन करता है तथा वह सत्ता स्वयं किसी अन्य सत्ता के अधीन न हो, तो वही उस समाज का संप्रभु है।"**

ऑस्टिन के सिद्धान्त की प्रमुख विशेषताएँ :–

1. निश्चित संप्रभु :– ऑस्टिन के अनुसार प्रत्येक राज्य में कोई न कोई निश्चित व्यक्ति, संस्था अथवा निकाय ऐसा होता है जिसमें संप्रभुता निहित रहती है। संप्रभु की पहचान स्पष्ट रूप से की जा सकती है।

2. सर्वोच्च एवं असीमित शक्ति :–

संप्रभु राज्य की सर्वोच्च सत्ता का धारक होता है। उसके ऊपर कोई अन्य वैधानिक शक्ति नियंत्रण नहीं होती तथा उसकी शक्ति पर कानूनी नियंत्रण नहीं माना जाता।

3. राज्य का आवश्यक तत्त्व :–

संप्रभुता राज्य का आवश्यक तत्त्व है। इसके बिना राज्य केवल व्यक्तियों का समूह रह जायेगा, एक संगठित राजनीतिक संस्था नहीं |

4. कानून संप्रभु का आदेश है :–

ऑस्टिन का मानना था कि कानून वही है जो संप्रभु द्वारा आदेश के रूप में जारी किया जाए और जिसका उल्लंघन करने पर दण्ड दिया जा सके।

5. संप्रभुता अविभाज्य है :– संप्रभुता को विभाजित नहीं किया जा सकता। राज्य में

अंतिम व सर्वोच्च सत्ता केवल एक ही हो सकती है।

6. स्वभावतः आज्ञापालन :– संप्रभुता तभी प्रभावी मानी जाती है जब जनता सामान्य रूप से उसके आदेशों का पालन करती हो। जनता का यह नियमित आज्ञापालन ही उसकी सत्ता का आधार है।



ऑस्टिन के सिद्धान्त की आलोचना :–

1. आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में संप्रभुता किसी एक व्यक्ति या संस्था में न होकर विभिन्न संस्थाओं में विभाजित दिखाई देती है।

2. यह सिद्धान्त जनता की सर्वोच्चता या **लोक संप्रभुता (Popular Sovereignty)** को पर्याप्त महत्व नहीं देता।

3. लास्की के अनुसार राज्य की शक्ति पूर्णतः असीमित नहीं होती, क्योंकि उस पर नैतिकता, जनमत तथा सामाजिक शक्तियों का प्रभाव पड़ता है।

4. सर हेनरी मैन ने कानून को केवल संप्रभु का आदेश मानने का विरोध किया और रीति-रिवाजों को भी कानून का महत्वपूर्ण स्रोत माना।

5. लास्की और मैकाइवर जैसे बहुलवादी विचारकों ने राज्य को समाज की एकमात्र सर्वोच्च शक्ति मानने का विरोध किया।

► 7.4.2. नाममात्र एवं वास्तविक तथा कानूनी एवं राजनीतिक संप्रभुता (Titular vs Real and Legal vs Political Sovereignty) :-

संप्रभुता के विभिन्न रूपों को समझने के लिए नाममात्र एवं वास्तविक तथा कानूनी एवं राजनीतिक संप्रभुता का अध्ययन महत्वपूर्ण माना जाता है। **नाममात्र संप्रभुता** उस व्यक्ति या संस्था में निहित होती है जिसके नाम पर शासन चलाया जाता है, लेकिन जिसके पास वास्तविक शक्ति नहीं होती। इसके विपरीत **वास्तविक संप्रभुता** उस व्यक्ति या संस्था के पास होती है जो वास्तव में शासन का संचालन करती है और महत्वपूर्ण निर्णय लेती है।

उदाहरण के लिए, भारत में राष्ट्रपति नाममात्र संप्रभु हैं, जबकि प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद वास्तविक संप्रभुता का प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार ब्रिटेन में राजा/रानी नाममात्र संप्रभु हैं, जबकि वास्तविक शक्ति मंत्रिमंडल और संसद के हाथों में होती है।

इसी प्रकार **कानूनी संप्रभुता** वह सत्ता है जिसे संविधान और कानून के द्वारा सर्वोच्च अधिकार मिलते है तथा जो कानून निर्माण, संशोधित करने एवं उसे समाप्त करने की शक्ति रखती है। भारत में संसद इसका प्रमुख उदाहरण है। दूसरी ओर **राजनीतिक संप्रभुता** का संबंध उन शक्तियों से है जो व्यवहार में कानूनी संप्रभुता को प्रभावित करती हैं। लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में जनता, जनमत, राजनीतिक दल एवं दबाव समूह राजनीतिक संप्रभुता के प्रमुख स्रोत माने जाते हैं। उदाहरण के लिए, संसद कानूनी रूप से सर्वोच्च विधि-निर्माता संस्था है, लेकिन चुनावों और जनमत के कारण उसे जनता की इच्छाओं और अपेक्षाओं का ध्यान रखना पड़ता है |

► 7.4.3. लोकप्रिय संप्रभुता और रूसो का योगदान (Popular Sovereignty and Rousseau's Contribution):-

लोकप्रिय संप्रभुता का अर्थ है कि राज्य की वास्तविक और अंतिम सत्ता जनता में निहित होती है। इस विचार को सबसे स्पष्ट रूप से जीन जैक्स रूसो ने अपनी प्रसिद्ध कृति "The Social Contract" (1762) में प्रस्तुत किया। रूसो का मानना था कि जनता ही संप्रभु है और सरकार केवल जनता की इच्छाओं को लागू करने का साधन है। उन्होंने **"सामान्य इच्छा"**

(General Will) की अवधारणा दी, जिसके अनुसार राज्य की नीतियाँ और कानून जनता के सामूहिक हित को व्यक्त करने चाहिए | रूसो के विचारों ने लोकतंत्र, जनसत्ता और राजनीतिक समानता की धारणा को मजबूत किया तथा 1789 की फ्रांसीसी क्रांति सहित अनेक लोकतांत्रिक आंदोलनों को वैचारिक प्रेरणा प्रदान की। इस कारण रूसो को लोकप्रिय संप्रभुता का प्रमुख प्रवक्ता माना जाता है।

इस प्रकार रूसो का लोकप्रिय संप्रभुता सिद्धान्त आधुनिक लोकतांत्रिक राज्य का वैचारिक नींव माना जाता है, क्योंकि इसके अनुसार संप्रभुता का अंतिम और वैध स्रोत जनता होती है।

► 7.4.4. संप्रभुता के लक्षण : पूर्णता, सर्वव्यापकता, स्थायित्व और अविभाज्यता (Characteristics of Sovereignty: Absoluteness, Universality, Permanence and Indivisibility) :-

संप्रभुता के प्रमुख लक्षण हैं– पूर्णता, सर्वव्यापकता, स्थायित्व और अविभाज्यता।

• **पूर्णता (Absoluteness) :–** संप्रभुता राज्य की सर्वोच्च शक्ति होती है, अपने क्षेत्र में राज्य ही अंतिम निर्णय लेने का अधिकार रखता है। विधि का निर्माण करना, उसे लागू करना तथा व्यवस्था को बनाए रखना उसी का कार्य है। ऑस्टिन ने संप्रभुता को ऐसी शक्ति माना जो किसी अन्य वैधानिक सत्ता के अधीन नहीं होती।

• **सर्वव्यापकता (Universality) :–**

राज्य की संप्रभुता उसके क्षेत्र में रहने वाले सभी लोगों व संस्थाओं पर लागू होती है। कोई भी व्यक्ति सामान्यतः राज्य के कानूनों से ऊपर नहीं माना जाता। राज्य के नियम सभी नागरिकों पर समान रूप से लागू होते हैं। यही कारण है कि राज्य की सत्ता पूरे क्षेत्र (Area) में प्रभावी रहती है।

• **स्थायित्व (Permanence) :–** सरकारें बदलती रहती हैं, लेकिन संप्रभुता बनी रहती है। चुनावों के बाद नई सरकार बन जाती है, लेकिन फिर भी राज्य की सर्वोच्च सत्ता समाप्त नहीं होती। जब तक राज्य मौजूद है, उसकी संप्रभुता भी बनी रहती है। इसलिए संप्रभुता को राज्य का स्थायी गुण कहा जाता है।

• **अविभाज्यता (Indivisibility) :–**

अविभाज्यता का अर्थ है कि संप्रभुता को विभाजित नहीं किया जा सकता। **जीन बोदाँ** और **जॉन ऑस्टिन** के अनुसार किसी राज्य में अंतिम और सर्वोच्च सत्ता केवल एक ही हो सकती है। इसलिए संप्रभुता को राज्य की एकात्मक एवं अखण्ड शक्ति माना जाता है।

► **7.4.5. बहुलवाद और वैश्वीकरण के दौर में संप्रभुता की चुनौतियाँ (Challenges to Sovereignty in the Era of Pluralism and Globalization) :-** बहुलवाद और वैश्वीकरण के दौर में संप्रभुता की प्रमुख चुनौतियाँ निम्नलिखित हैं–

1. बहुलवाद की चुनौती :–

लास्की, मैकाइवर और जी. डी. एच. कोल जैसे बहुलवादी विचारकों ने राज्य की असीमित संप्रभुता का विरोध किया। उनके अनुसार समाज में केवल राज्य ही महत्वपूर्ण संस्था नहीं है। परिवार, धार्मिक संगठन, श्रमिक संघ तथा अन्य सामाजिक संस्थाएँ भी लोगों के जीवन को प्रभावित करती हैं। इसलिए सारी शक्ति केवल राज्य में निहित नहीं मानी जा सकती।

2. अंतरराष्ट्रीय संगठनों का बढ़ता प्रभाव :–

आज संयुक्त राष्ट्र (U.N.O.), WTO, IMF और विश्व बैंक जैसी संस्थाएँ विश्व राजनीति और अर्थव्यवस्था को प्रभावित करती हैं। राज्यों को कई अंतरराष्ट्रीय समझौतों और नियमों का पालन करना पड़ता है। इससे उनकी पूर्ण स्वतंत्रता पर कुछ सीमाएँ दिखाई देती हैं।

3. बहुराष्ट्रीय कंपनियों का प्रभाव :–

Google, Apple, Microsoft, Amazon आदि कंपनियाँ केवल व्यावसायिक संस्थाएँ नहीं रह गई हैं, बल्कि वैश्विक अर्थव्यवस्था पर भी प्रभाव डालती हैं। कई सरकारों को अपनी नीतियाँ बनाते समय इनके हितों और प्रभाव का भी ध्यान रखना पड़ता है।

4. मानवाधिकार और अंतरराष्ट्रीय कानून :–

आज के समय मानवाधिकार केवल एक देश का आंतरिक विषय नहीं माना जाता। यदि कहीं गंभीर उल्लंघन होता है, तो अंतरराष्ट्रीय समुदाय उस

पर प्रतिक्रिया देता है। इससे पारंपरिक संप्रभुता की अवधारणा पहले की तुलना में अधिक सीमित दिखाई देती है।

5) तकनीकी क्रांति और डिजिटल संप्रभुता :–

आधुनिक तकनीक और इंटरनेट ने शासन की पारंपरिक सीमाओं को प्रभावित किया है। आज सूचनाएँ और डेटा बहुत तेजी से एक देश से दूसरे देश तक पहुँच जाते हैं। इसी कारण डिजिटल क्षेत्र पर नियंत्रण और सुरक्षा राज्यों के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती बन गई है।

► 7.5. अपनी प्रगति जाँचें (Check Your Progress) :–

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए –

(i) 'संप्रभुता' (Sovereignty) शब्द की व्युत्पत्ति किन लैटिन शब्दों से हुई है?

(ii) संप्रभुता के सिद्धान्त का जनक किस राजनीतिक विचारक को माना जाता है?

(iii) संप्रभुता के कानूनी सिद्धान्त का प्रतिपादन किसने किया?

(iv) संप्रभुता की कोई दो विशेषताएँ लिखिए।

(v) लास्की किस विचारधारा के प्रमुख समर्थक थे?

(vi) संप्रभुता के दो पक्ष कौन-से हैं? नाम बताएँ |

(vii) वैश्वीकरण ने संप्रभुता के सामने कौन-सी नई चुनौती उत्पन्न की है?

(viii) आंतरिक संप्रभुता से क्या आशय है?

► 7.6. सारांश (Summary) :–

इस पाठ में संप्रभुता की अवधारणा, उसके स्वरूप, प्रकारों तथा महत्व का विस्तृत अध्ययन किया गया है। संप्रभुता राज्य का एक अहम तत्व है, जिसके कारण राज्य अपने क्षेत्र में सर्वोच्च सत्ता का प्रयोग करता है और अन्य राज्यों के संबंध में स्वतंत्र माना जाता है। जीन बोदाँ को आधुनिक संप्रभुता सिद्धान्त का प्रथम प्रतिपादक माना जाता है, जबकि जॉन ऑस्टिन ने इसके कानूनी स्वरूप को स्पष्ट किया। विभिन्न विचारकों द्वारा दी गई परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि संप्रभुता राज्य की सर्वोच्च, अंतिम तथा बाध्यकारी शक्ति है, जो उसकी विशिष्ट पहचान का आधार बनती है।

पाठ में संप्रभुता के विभिन्न प्रकारों तथा उसके प्रमुख लक्षणों की भी चर्चा की गई है। नाममात्र और वास्तविक, कानूनी और राजनीतिक तथा लोकप्रिय संप्रभुता के बीच अन्तर को समझाया गया है। रूसो ने लोकप्रिय संप्रभुता के सिद्धान्त के माध्यम से जनता को सत्ता का वास्तविक स्रोत माना और "सामान्य इच्छा" की अवधारणा प्रस्तुत की। इसके अतिरिक्त पूर्णता, सर्वव्यापकता, स्थायित्व, मौलिकता तथा अविभाज्यता जैसी विशेषताओं का वर्णन किया गया, जो संप्रभुता को राज्य का सबसे महत्वपूर्ण गुण सिद्ध करती है। आंतरिक और बाह्य संप्रभुता के माध्यम से राज्य की सर्वोच्चता तथा स्वतंत्रता को भी स्पष्ट किया गया है।

अन्त में इस पाठ में ऑस्टिन के वैधानिक अथवा एकलवादी संप्रभुता सिद्धान्त, उसके विरुद्ध प्रस्तुत बहुलवादी दृष्टिकोण तथा समकालीन

विश्व व्यवस्था में संप्रभुता के बदलते स्वरूप का विश्लेषण किया गया है। लास्की, मैकाइवर, फिगिस और जी. डी. एच. कोल जैसे बहुलवादी विचारकों ने यह प्रतिपादित किया कि समाज में शक्ति का वितरण विभिन्न सामाजिक संस्थाओं के मध्य होता है और राज्य को उसका एकमात्र केन्द्र नहीं माना जा सकता। दूसरी ओर वैश्वीकरण, अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं की बढ़ती भूमिका, मानवाधिकारों की सार्वभौमिक मान्यता, बहुराष्ट्रीय निगमों के विस्तार तथा डिजिटल क्रांति ने पारंपरिक संप्रभुता की निरपेक्षता को चुनौती दी है। तथापि बदलती परिस्थितियों के बावजूद संप्रभुता राज्य की वैधानिक पहचान, राजनीतिक वैधता तथा स्वतंत्र अस्तित्व का मूल आधार बनी हुई है।

► 7.7. सूचक शब्द (Key Words) :-

सुपरएनस, संप्रभुता, आंतरिक संप्रभुता, बाह्य संप्रभुता, अविभाज्यता, अदेयता या अपृथक्करणीयता , एकलवाद, बहुलवाद, जनमत, सामान्य इच्छा।

1. सुपरएनस (Superanus): – यह एक लैटिन शब्द है, जिसका अर्थ सर्वोच्च शक्ति है।

2. आंतरिक संप्रभुता (Internal Sovereignty): – राज्य की सीमाओं के भीतर उसकी सर्वोच्च सत्ता।

3. बाह्य संप्रभुता (External Sovereignty): – विदेशी नियंत्रण से राज्य की स्वतंत्रता।

4. अविभाज्यता (Indivisibility): – संप्रभुता को विभाजित नहीं किया जा सकता।

5. अदेयता / अपरित्यकरणीयता (Inalienability): – संप्रभुता को राज्य से पृथक अथवा अलग नहीं किया जा सकता।

6. एकलवाद (Monism): – वह सिद्धान्त जो संप्रभुता को एक, सर्वोच्च और अविभाज्य शक्ति मानता है।

7. बहुलवाद (Pluralism): – वह विचारधारा जो मानती है कि शक्ति केवल राज्य में नहीं, बल्कि अन्य सामाजिक संस्थाओं में भी विद्यमान होती है।

8. जनमत (Public Opinion): – किसी सार्वजनिक विषय पर जनता के विचारों और दृष्टिकोणों की सामूहिक अभिव्यक्ति।

9. सामान्य इच्छा (General Will): – रूसो द्वारा प्रतिपादित जनता की सामूहिक और सार्वजनिक हित पर आधारित इच्छा।

► 7.8. स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions) :-

1. प्रभुसत्ता की परिभाषा दीजिए तथा इसकी विभिन्न विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

2. ऑस्टिन द्वारा प्रतिपादित प्रभुसत्ता के सिद्धान्त का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

3. संप्रभुता से आपका क्या अभिप्राय है? इसके विभिन्न स्वरूपों का वर्णन करें।

4. अन्तर स्पष्ट कीजिए–

(क) कानूनी और राजनीतिक प्रभुसत्ता

(ख) नाममात्र एवं वास्तविक प्रभुसत्ता

(ग) विधि-सम्मत एवं यथार्थ प्रभुसत्ता

(घ) एकलवादी एवं बहुलवादी प्रभुसत्ता

5. प्रभुसत्ता से आपका क्या अभिप्राय है? इसके मुख्य तत्त्वों का वर्णन कीजिए।

6. "संप्रभुता को विभक्त करने का अर्थ इसको नष्ट करना है।" इस कथन की तर्क सहित विवेचना कीजिए।

7. बहुलवादी विचारकों ने ऑस्टिन के संप्रभुता सिद्धान्त का किन आधारों पर विरोध किया है? विवेचना कीजिए।

8. वैश्वीकरण, अन्तरराष्ट्रीय संगठनों तथा मानवाधिकारों के बढ़ते प्रभाव के संदर्भ में राज्य की संप्रभुता के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों का विश्लेषण कीजिए।

9. संप्रभुता के आंतरिक और बाह्य पक्षों के बीच अंतर को उपर्युक्त उदाहरणों सहित स्पष्ट कीजिए।

10. रूसो के राजनीतिक विचारों के विशेष संदर्भ में लोकप्रिय संप्रभुता (Popular Sovereignty) की अवधारणा की व्याख्या कीजिए। इसकी विशेषताएँ लिखें।

11. राज्य में संप्रभुता कहाँ निवास करती है?

12. संप्रभुता की प्रमुख विशेषताओं (पूर्णता, स्थायित्व, अविभाज्यता आदि) का विस्तार से वर्णन कीजिए।

► 7.9. अपनी प्रगति की जाँच करने के लिए उत्तर (Answer Check Your Progress) :-

(i) 'संप्रभुता' शब्द लैटिन भाषा के 'Superanus' शब्द जो कि 'Super' तथा 'Anus' शब्दों से मिलकर बना है, जिसका अर्थ सर्वोच्च सत्ता है।

(ii) जीन बोंदा (Jean Bodin)।

(iii) जॉन ऑस्टिन (John Austin) ने।

(iv) 1. सर्वव्यापकता – राज्य के सभी नागरिकों और संस्थाओं पर संप्रभुता लागू होती है।

2. स्थायित्व – सरकार बदलने पर भी संप्रभुता बनी रहती है।

(v) बहुलवाद |

(vi) 1. आंतरिक संप्रभुता (Internal Sovereignty)

2. बाहरी संप्रभुता (External Sovereignty) |

(vii) वैश्वीकरण के कारण राज्यों को अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं और वैश्विक बाजारों के प्रभाव का सामना करना पड़ता है |

(viii) राज्य की सीमाओं के भीतर उसकी सर्वोच्च सत्ता को आंतरिक संप्रभुता कहते है ।

► 7.10. सन्दर्भ ग्रन्थ / निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings) :-

1. राजनीति शास्त्र के सिद्धांत – जे. सी. जोहरी।

2. राजनीति सिद्धांत की रूपरेखा – ओ. पी. गाबा।

3. Lectures on Jurisprudence – John Austin

4. Six Books of the Commonwealth (Les Six Livres de la République) – Jean Bodin

5. Sovereignty: An Inquiry into the Political Good – Bertrand de Jouvenel

6. Political Theory – एस. पी. वर्मा

7. राजनीति विज्ञान के मूल तत्त्व – डॉ. आशीर्वादम

8. Political Theory: An Introduction – Andrew Heywood

9. आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत – डॉ. वी. एल. फड़िया

10. The Problem of Sovereignty in Government – Harold J. Laski

11. The Social Contract – Jean Jacques Rousseau (जीन जैक्स रूसो)

Unit-IV

अध्याय - 8

संप्रभुता के एकलवादी और बहुलवादी सिद्धांत

SUBJECT : POLITICAL SCIENCE, SEMESTER-1	
COURSE CODE : C24POL101T	AUTHOR: DR. RAJIV VERMA
LESSON NO : 8	
संप्रभुता के एकलवादी और बहुलवादी सिद्धांत (Theories of Sovereignty: Monistic and Pluralist Theories)	

8.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

8.2. प्रस्तावना (Introduction)

8.3. अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main Points of Text)

8.3.1. संप्रभुता का एकलवादी सिद्धांत : ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
(Monistic Theory of Sovereignty : Historical Background)

8.3.2. जॉन ऑस्टिन का संप्रभुता का कानूनी सिद्धांत
(John Austin's Legal Theory of Sovereignty)

8.3.3. ऑस्टिन के एकलवाद की प्रमुख आलोचनाएँ (Major Criticisms of Austin's Monism)

8.3.4. संप्रभुता का बहुलवादी सिद्धांत : अर्थ एवं उदय के कारण
(Pluralist Theory of Sovereignty : Meaning and Causes of Rise)

8.3.5. बहुलवाद के प्रमुख सिद्धांत और मान्यताएँ
(Core Principles and Assumptions of Pluralism)

8.4. पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

8.4.1. "संप्रभु का आदेश ही कानून है" : ऑस्टिन

("Law is the Command of the Sovereign" : Austin)

8.4.2. हेनरी मेन का ऐतिहासिक दृष्टिकोण (Henry Maine's Historical Perspective)

8.4.3. लास्की और बार्कर के राजनीतिक विचार (Political Thought of Laski and Barker)

8.4.4. एकलवाद बनाम बहुलवाद : सत्ता के केंद्रीकरण और विकेंद्रीकरण का विवाद (Monism Vs Pluralism : Dispute over Centralization and Decentralization of Power)

8.4.5. आधुनिक लोकतांत्रिक कल्याणकारी राज्यों में दोनों सिद्धांतों का समन्वय

(Synthesis of Both Theories in Modern Democratic Welfare States)

8.5. अपनी प्रगति जाँचें (Check Your Progress)

8.6. सारांश (Summary)

8.7. सूचक शब्द (Key Words)

8.8. स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

8.9. अपनी प्रगति की जाँच करने के लिए उत्तर
(Answers to Check Your Progress)

8.10. संदर्भ ग्रंथ / निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

► 8.1. अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives) :-

इस पाठ का अध्ययन करने के बाद विद्यार्थी निम्नलिखित बिंदुओं को समझ सकेंगे :–

• संप्रभुता के दो प्रमुख दृष्टिकोणों – एकलवाद (Monism) और बहुलवाद (Pluralism) की मूल अवधारणाओं को समझ सकेंगे।

• एकलवादी सिद्धांत के प्रमुख प्रतिपादक जॉन ऑस्टिन के विचारों तथा उसके कानूनी आधार का अध्ययन कर सकेंगे।

• ऑस्टिन द्वारा प्रतिपादित संप्रभुता के प्रमुख लक्षणों, जैसे सर्वोच्चता, अविभाज्यता और निरंकुशता, को समझ सकेंगे।

• बहुलवादी सिद्धांत के उद्भव के कारणों तथा उसके ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भों से परिचित हो सकेंगे।

• लास्की, बार्कर, ड्यूगिट तथा अन्य बहुलवादी विचारकों के प्रमुख तर्कों का विश्लेषण कर सकेंगे।

• एकलवाद और बहुलवाद के बीच पाए जाने वाले वाले मूलभूत अंतरों को स्पष्ट रूप से पहचान सकेंगे।

• आधुनिक लोकतांत्रिक, संघीय तथा विकेन्द्रीकृत शासन व्यवस्थाओं में इन दोनों सिद्धांतों की प्रासंगिकता का मूल्यांकन कर सकेंगे।

• समकालीन राजनीतिक व्यवस्था में राज्य, समाज तथा विभिन्न संस्थाओं के पारस्परिक संबंधों को इन सिद्धांतों के संदर्भ में समझ सकेंगे।

► 8.2. प्रस्तावना (Introduction) :-

पिछली इकाई में हमने संप्रभुता की अवधारणा, उसके प्रकारों तथा प्रमुख विशेषताओं का अध्ययन किया था । संप्रभुता को राज्य की सर्वोच्च शक्ति माना जाता है, लेकिन राजनीति विज्ञान में लम्बे समय से यह प्रश्न चर्चा का विषय रहा है कि वास्तव में संप्रभुता का निवास कहाँ है और उसका स्वरूप क्या होना चाहिए। इसी प्रश्न के उत्तर में दो प्रमुख और परस्पर विरोधी विचारधाराएँ विकसित हुईं–**एकलवाद (Monism)** और **बहुलवाद (Pluralism)।**

एकलवादी दृष्टिकोण के अनुसार संप्रभुता केवल राज्य में निहित होती है और वही समाज की सर्वोच्च सत्ता है। इस विचारधारा के समर्थकों का मानना है कि संप्रभुता पूर्ण, स्थायी, अविभाज्य तथा असीमित होती है; इसलिए इसे किसी अन्य संस्था के साथ साझा नहीं किया जा सकता। इस दृष्टिकोण को कानूनी संप्रभुता का सिद्धांत भी कहा जाता है, जिसका सबसे प्रभावशाली प्रतिपादन अंग्रेज विधिवेत्ता **जॉन ऑस्टिन** ने किया।

इसके विपरीत, उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में बहुलवादी विचारधारा का विकास हुआ, जिसने राज्य की निरंकुश और असीमित संप्रभुता को चुनौती दी। बहुलवादी विचारकों का मत था कि समाज केवल राज्य से नहीं बना है, बल्कि उसमें अनेक धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक तथा व्यावसायिक संस्थाएँ भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये संस्थाएँ भी व्यक्तियों के जीवन को प्रभावित करती हैं और सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने में योगदान देती हैं। इसलिए संप्रभुता को केवल राज्य की शक्ति मानना वास्तविकता के अनुरूप नहीं है। लास्की, बार्कर, ड्यूगिट और मैकाइवर जैसे विचारकों ने इस दृष्टिकोण का समर्थन किया। इस पाठ में एकलवादी और बहुलवादी सिद्धांतों के प्रमुख तर्कों, उनकी आलोचनाओं तथा दोनों के बीच पाए जाने वाले वैचारिक मतभेदों का विस्तार से अध्ययन किया जाएगा।

► 8.3. अध्ययन के मुख्य बिंदु (Main Points of Text)

► 8.3.1. संप्रभुता का एकलवादी सिद्धांत : ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Monistic Theory of Sovereignty : Historical Background):-

संप्रभुता के एकलवादी सिद्धांत का विकास यूरोप में शक्तिशाली राष्ट्र-राज्यों के उदय के साथ हुआ। मध्यकाल में राजनीतिक सत्ता चर्च, पोप, सामंतों तथा राजाओं के बीच विभाजित थी | जिसके कारण शासन-व्यवस्था में एकता का अभाव था। ऐसी परिस्थितियों में एक ऐसी सर्वोच्च सत्ता की

आवश्यकता महसूस की गई जो राज्य में शांति, व्यवस्था और राजनीतिक एकता स्थापित कर सके। इसी आवश्यकता ने एकलवादी सिद्धांत को जन्म दिया। इस सिद्धांत के अनुसार राज्य ही समाज की सर्वोच्च सत्ता है और उसके ऊपर कोई अन्य सत्ता/शक्ति नहीं होती।

इस विचार को सबसे पहले व्यवस्थित रूप से जीन बोदां (Jean Bodin) ने अपनी पुस्तक Six Books Concerning the Republic (1576) में प्रस्तुत किया। बाद में थॉमस हॉब्स (Thomas Hobbes) ने Leviathan (1651) में राज्य की सर्वोच्च और अविभाज्य सत्ता का समर्थन किया। इन विचारों को आगे बढ़ाते हुए जॉन ऑस्टिन (John Austin) ने **Lectures on Jurisprudence** (1832) में संप्रभुता का कानूनी रूप स्पष्ट किया। ऑस्टिन के अनुसार प्रत्येक राज्य में एक निश्चित, सर्वोच्च और स्वतंत्र सत्ता होती है, जिसकी आज्ञा का अधिकांश लोग पालन करते हैं। इस प्रकार बोदां, हॉब्स और ऑस्टिन के विचारों के आधार पर एकलवादी सिद्धांत विकसित हुआ, जिसने राज्य को संप्रभुता का एकमात्र और अंतिम स्रोत माना।

► 8.3.2. जॉन ऑस्टिन का संप्रभुता का कानूनी सिद्धांत (John Austin's Legal Theory of Sovereignty) :-

जॉन ऑस्टिन उन्नीसवीं शताब्दी के प्रसिद्ध अंग्रेज विधिवेत्ता थे। उन्होंने अपनी पुस्तक Lectures on Jurisprudence (1832) में संप्रभुता का

कानूनी सिद्धांत का प्रतिपादन किया। ऑस्टिन के अनुसार प्रत्येक राज्य में एक ऐसी सर्वोच्च सत्ता होती है जिसकी आज्ञा का अधिकांश लोग नियमित रूप से पालन करते हैं और जो स्वयं किसी अन्य सत्ता के आदेश का पालन नहीं करती। ऐसी सर्वोच्च सत्ता को ही संप्रभु कहते हैं। उनके अनुसार कानून संप्रभु का आदेश होता है, क्योंकि पालन न करने पर दंड दिया जा सकता है। इसलिए राज्य में कानून और संप्रभुता का घनिष्ठ संबंध होता है।

ऑस्टिन का मानना था कि संप्रभुता एक निश्चित व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह में निहित होती है। यह शक्ति सर्वोच्च, अविभाज्य, स्थायी तथा कानूनी रूप से असीमित होती है। राज्य की समस्त वैधानिक शक्ति का स्रोत वही संप्रभु होता है और उसकी इच्छा ही कानून का आधार बनती है। ऑस्टिन के विचारों ने संप्रभुता के कानूनी पक्ष को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया और लंबे समय तक राजनीतिक तथा विधि चिंतन को प्रभावित किया। इसी कारण उनके सिद्धांत को संप्रभुता का वैधानिक अथवा एकलवादी सिद्धांत कहा जाता है |

► 8.3.3. ऑस्टिन के एकलवाद की प्रमुख आलोचनाएँ (Major Criticisms of Austin's Monism) :-

ऑस्टिन के एकलवादी सिद्धांत ने संप्रभुता के कानूनी पक्ष को स्पष्ट करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया था | लेकिन समय के साथ ही अनेक विद्वानों ने इसकी सीमाओं की ओर ध्यान आकर्षित किया। मुख्य रूप से

लोकतांत्रिक व्यवस्था, बहुलवादी विचारधारा (Pluralistic Ideology) तथा आधुनिक राज्य की जटिल संरचना के संदर्भ में इस सिद्धांत की कई आलोचनाएँ की गई हैं, जो इस प्रकार हैं :–

1. संप्रभु हमेशा निश्चित नहीं होता :–

ऑस्टिन ने संप्रभु को एक निश्चित सत्ता माना, पर व्यवहार में ऐसा संभव नहीं है। आधुनिक लोकतंत्रों में शक्ति कई संस्थाओं के बीच विभाजित रहती है। इस कारण वास्तविक संप्रभु की पहचान करना कठिन हो जाता है।

2. लोक-संप्रभुता की उपेक्षा :–

ऑस्टिन ने संप्रभुता को एक निश्चित शासक या संस्था से जोड़ा, जबकि लोकतांत्रिक व्यवस्था में जनता को सत्ता का वास्तविक स्रोत माना जाता है। जनता की इच्छा और जनमत शासन को प्रभावित करते हैं। इसलिए यह सिद्धांत लोकतांत्रिक वास्तविकताओं को पूरी तरह व्यक्त नहीं कर पाता।

3. संप्रभुता पूर्णतः निरंकुश नहीं होती :–

व्यवहार में कोई भी राज्य पूरी तरह असीमित शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकता। उसे संविधान, सामाजिक परंपराओं, नैतिक मूल्यों तथा जनमत का सम्मान करना पड़ता है। इस कारण संप्रभुता को पूर्णतः निरंकुश मानना व्यावहारिक नहीं माना जाता।

4. सभी कानून केवल आदेश नहीं होते :–

ऑस्टिन ने कानून को संप्रभु का आदेश माना, लेकिन अनेक कानून समाज की परंपराओं एवं प्रथाओं से विकसित हुए है | कई कानूनी नियम लंबे समय से प्रचलित सामाजिक मान्यताओं पर आधारित होते हैं। इसलिए कानून का स्रोत केवल राज्य की आज्ञा नहीं माना जा सकता।

5. बहुलवादी विचारकों द्वारा आलोचना :–

लास्की, मैकाइवर, बार्कर और ड्यूगिट जैसे विचारकों ने राज्य को शक्ति का एकमात्र केंद्र मानने का विरोध किया। उनके अनुसार समाज में अनेक संस्थाएँ स्वतंत्र रूप से कार्य करती हैं और लोगों के जीवन को प्रभावित करती हैं। इसलिए संप्रभुता को केवल राज्य में केन्द्रित मानना उचित नहीं है।

6. निरंकुश शासन को बढ़ावा देने की आशंका :–

यदि राज्य को असीमित और सर्वोच्च शक्ति का स्वामी मान लिया जाए, तो सत्ता के दुरुपयोग की संभावना बढ़ जाती है। ऐसी स्थिति में नागरिक अधिकारों और स्वतंत्रताओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसी कारण लोकतांत्रिक विचारक इस धारणा को सावधानी से देखने की सलाह देते हैं।

► 8.3.4. संप्रभुता का बहुलवादी सिद्धांत : अर्थ एवं उदय के कारण

(Pluralist Theory of Sovereignty : Meaning and Causes of Rise) :-

बहुलवादी सिद्धांत संप्रभुता के एकलवादी दृष्टिकोण के विरोध में विकसित हुआ। इस सिद्धांत के अनुसार राज्य समाज की एकमात्र सर्वोच्च संस्था नहीं है, बल्कि समाज में परिवार, धर्म, श्रमिक संघ, सहकारी संस्थाएँ, व्यावसायिक संगठन तथा अन्य सामाजिक समूह भी महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। बहुलवाद के अनुसार राज्य अनेक सामाजिक संगठनों में से केवल एक संगठन है। व्यक्ति का जीवन केवल राज्य तक सीमित नहीं होता, बल्कि यह अनेक समुदायों और संस्थाओं से जुड़ा रहता है। इसलिए संप्रभुता को असीमित और संपूर्ण सर्वोच्च शक्ति का स्वामी नहीं माना जा सकता। बहुलवादी विचारक मानते हैं कि समाज की विभिन्न संस्थाओं का अपना स्वतंत्र महत्व और अधिकार होता है।

बहुलवादी सिद्धांत के उदय के कारण (Causes of Rise of the Pluralist Theory):- बहुलवादी सिद्धांत के उदय के प्रमुख कारण निम्नलिखित प्रकार से हैं–

1. ऑस्टिन के एकलवादी सिद्धांत की प्रतिक्रिया :–

बहुलवादी सिद्धांत का विकास मुख्य रूप से ऑस्टिन के एकलवादी दृष्टिकोण के विरोध में हुआ। ऑस्टिन ने राज्य को संप्रभुता का एकमात्र स्रोत माना तथा उसकी शक्ति को सर्वोच्च बताया। बहुलवादी विचारकों का मत था कि व्यवहार में समाज केवल राज्य से संचालित नहीं होता। इसी कारण उन्होंने राज्य की असीमित संप्रभुता की धारणा को चुनौती दी।

2. सामाजिक संस्थाओं का बढ़ता प्रभाव :–

समय के साथ परिवार, चर्च, श्रमिक संघ, सहकारी समितियाँ और अन्य सामाजिक संगठनों का महत्व बढ़ने लगा। ये संस्थाएँ लोगों की अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति करती थीं और उनके जीवन को प्रभावित करती थीं। इससे यह धारणा मजबूत हुई कि समाज में केवल राज्य ही नहीं, बल्कि अन्य प्रभावशाली संस्थाएँ भी मौजूद हैं।

3. लोकतांत्रिक विचारों का विकास :–

लोकतंत्र के प्रसार के साथ स्वतंत्रता, समानता और जनसहभागिता जैसे मूल्यों को महत्व मिलने लगा। जनता ने शासन में अपनी भागीदारी और अधिकारों की मांग की। इस परिवर्तन ने राज्य की निरंकुश शक्ति पर प्रश्नचिह्न लगाया और बहुलवादी विचारों को प्रोत्साहन दिया।

4. औद्योगिक क्रांति का प्रभाव :–

औद्योगिक क्रांति के बाद समाज की आर्थिक और सामाजिक संरचना में व्यापक परिवर्तन आए। श्रमिक संगठनों, व्यापारिक संघों और विभिन्न पेशेवर समूहों का विकास हुआ। उन्होंने अपने हितों की रक्षा के लिए संगठित प्रयास किए। इससे समाज में शक्ति के नए केन्द्र उभरे और राज्य की सर्वोच्चता को चुनौती मिली।

5. अंतरराष्ट्रीय सहयोग का विस्तार :–

अंतरराष्ट्रीय संगठनों, संधियों और वैश्विक कानूनों का प्रभाव धीरे-धीरे बढ़ने लगा। राज्यों को अपने मामलों में अंतरराष्ट्रीय नियमों और समझौतों का पालन

करना पड़ा। इससे यह स्पष्ट हुआ कि आधुनिक युग में राज्य पूरी तरह स्वतंत्र और असीमित शक्ति का स्वामी नहीं रह गया है।

► 8.3.5. बहुलवाद के प्रमुख सिद्धांत और मान्यताएँ (Core Principles and Assumptions of Pluralism) :-

एकलवादी सिद्धांत के विपरीत बहुलवाद राज्य को समाज की एकमात्र सर्वोच्च शक्ति नहीं मानता। बहुलवादी विचारकों ने समाज में विभिन्न संस्थाओं की भूमिका को स्वीकार करते हुए कुछ प्रमुख सिद्धांत और मान्यताएँ प्रस्तुत की हैं।

1. बहुलवाद के अनुसार राज्य समाज की एक महत्वपूर्ण संस्था है, लेकिन वह सब कुछ नहीं है। समाज में अन्य संस्थाओं और संगठनों का भी अपना अलग महत्व और योगदान होता है।

2. बहुलवादी विचार राज्य को असीमित और निरंकुश अधिकार देने के पक्ष में नहीं हैं, क्योंकि इससे सत्ता के दुरुपयोग की संभावना बढ़ जाती है।

3. बहुलवाद के अनुसार समाज राज्य से अधिक व्यापक है, क्योंकि समाज में राजनीतिक संस्थाओं के अलावा अनेक अन्य संगठन भी शामिल होते हैं।

4. बहुलवाद शक्ति के केंद्रीकरण का विरोध करता है और विभिन्न संस्थाओं के बीच शक्ति के वितरण का समर्थन करता है।

5. बहुलवाद लोकतांत्रिक व्यवस्था का समर्थन करता है, जिसमें राज्य की संप्रभुता जनता की भागीदारी से संचालित होती है।

6. बहुलवाद के अनुसार समाज की विभिन्न संस्थाएँ मिलकर कार्य करती हैं, इसलिए संप्रभुता को केवल राज्य तक सीमित नहीं किया जा सकता।

7. राज्य की शक्ति पर जनमत, परंपराओं और सामाजिक मूल्यों का प्रभाव बना रहता है।

8. बहुलवाद राज्य की निरंकुश और असीमित संप्रभुता को स्वीकार नहीं करता।

► 8.4. पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text) :-

► 8.4.1. "संप्रभु का आदेश ही कानून है" : ऑस्टिन ("Law is the Command of the Sovereign" : Austin) :-

जॉन ऑस्टिन विधिशास्त्र के प्रमुख विचारक थे। उनके अनुसार "कानून संप्रभु का आदेश है" (Law is the Command of the Sovereign)। उनके अनुसार राज्य में एक सर्वोच्च सत्ता होती है, जिसकी आज्ञा का पालन अधिकांश लोग करते हैं और जो स्वयं किसी अन्य सत्ता की आज्ञा का पालन नहीं करती।

1. संप्रभु सर्वोच्च सत्ता है :–

ऑस्टिन के अनुसार प्रत्येक राज्य में एक ऐसी सर्वोच्च शक्ति होती है जो अंतिम निर्णय लेने का अधिकार रखती है। राज्य के अधिकांश लोग उसकी आज्ञा का पालन करते हैं, जबकि वह स्वयं किसी अन्य व्यक्ति या संस्था के नियंत्रण में नहीं होती। इसी सर्वोच्च शक्ति को संप्रभु कहा जाता है। ऑस्टिन

का मानना था कि कानून का निर्माण और संचालन संप्रभु इच्छा पर निर्भर करता है।

2. कानून एक आदेश है :–

ऑस्टिन के अनुसार कानून केवल सलाह, अनुरोध या नैतिक उपदेश नहीं है, बल्कि संप्रभु द्वारा दिया गया एक बाध्यकारी आदेश है। नागरिकों के लिए इसका पालन करना आवश्यक होता है। यदि कोई नियम संप्रभु की आज्ञा के रूप में लागू नहीं किया गया है, तो वह वास्तविक कानून नहीं माना जा सकता।

3. आज्ञा, कर्तव्य और दण्ड कानून के आधार हैं :–

ऑस्टिन ने कहा है कि प्रत्येक कानून में तीन बातें आवश्यक होती हैं। पहली, संप्रभु का आदेश; दूसरी, नागरिकों का उस आदेश का पालन करने का कर्तव्य; और तीसरी, आदेश का उल्लंघन करने पर दण्ड की व्यवस्था। यदि किसी नियम के पीछे दण्ड की शक्ति नहीं है, तो उसकी बाध्यता भी कमज़ोर हो जाती है।

4. कानून का स्रोत राज्य है :–

ऑस्टिन का मत था कि कानून का वास्तविक स्रोत राज्य की सर्वोच्च सत्ता है। किसी नियम को कानून का दर्जा तभी प्राप्त होता है जब उसे राज्य की स्वीकृति और संरक्षण प्राप्त हो। उन्होंने परम्पराओं, रीति-रिवाजों और नैतिक नियमों को कानून का मूल स्रोत नहीं माना। उनके अनुसार राज्य की मान्यता के बिना कोई भी नियम पूर्ण कानूनी स्वरूप प्राप्त नहीं कर सकता।

5. कानून और नैतिकता में अंतर है :–

ऑस्टिन ने कानून और नैतिकता को दो अलग-अलग अवधारणाएँ माना। उनके अनुसार किसी नियम का नैतिक रूप से उचित होना उसे स्वतः कानून नहीं बनाता। कानून का आधार राज्य की स्वीकृति और दण्ड की शक्ति है, जबकि नैतिक नियम व्यक्ति के विवेक, सामाजिक मान्यताओं तथा आदर्शों पर आधारित होते हैं। इसलिए ऑस्टिन कानून की वैधता को नैतिकता से नहीं, बल्कि संप्रभु की आज्ञा से जोडा |

► **8.4.2. हेनरी मेन का ऐतिहासिक दृष्टिकोण (Henry Maine's Historical Perspective) :-** हेनरी मेन ने ऑस्टिन के इस मत को स्वीकार नहीं किया कि कानून केवल संप्रभु की आज्ञा से बनता है। उनका मत था कि कानून का जन्म समाज की प्रथाओं, परम्पराओं और व्यवहारों से होता है। इतिहास में ऐसे अनेक समाज मिलते हैं जहाँ कोई निश्चित सम्प्रभु नहीं था, फिर भी लोग नियमों का पालन करते थे | इससे स्पष्ट होता है कि कानून का आधार केवल राज्य की शक्ति नहीं है | मेन के अनुसार राज्य से पहले समाज अस्तित्व में था और समाज की मान्यताएँ ही आगे चलकर कानून का रूप धारण करती हैं । इसलिए कानून को समझने के लिए उसके ऐतिहासिक विकास को समझना आवश्यक है।

► **8.4.3. लास्की और बार्कर के राजनीतिक विचार (Political Thoughts of Laski and Barker) :-**

लास्की और बार्कर ने ऑस्टिन के राज्य की सर्वोच्चता संबंधी विचार का विरोध किया। उनके अनुसार समाज केवल राज्य से नहीं बना होता, बल्कि परिवार, धार्मिक संस्थाएँ, श्रमिक संघ, व्यावसायिक संगठन तथा अन्य सामाजिक समूह भी उसके महत्वपूर्ण अंग हैं। ये संस्थाएँ व्यक्ति के जीवन को दिशा देने और उसके हितों की रक्षा करने का कार्य करती हैं। इसलिए राज्य को समाज की एकमात्र सर्वोच्च संस्था नहीं माना जा सकता।

उनका मत था कि राज्य भी अन्य सामाजिक संघों की भाँति एक संस्था है, यद्यपि उसका कार्यक्षेत्र अधिक व्यापक होता है | लास्की ने राज्य की निरंकुश सत्ता का विरोध करते हुए शक्ति के विकेन्द्रीकरण पर बल दिया, जबकि बार्कर ने विभिन्न संस्थाओं के सहयोग और समन्वय को आवश्यक माना। दोनों विचारकों का मानना था कि समाज में शक्ति का वितरण विभिन्न संस्थाओं के बीच होना चाहिए। इस प्रकार उन्होंने बहुलवादी दृष्टिकोण का समर्थन करते हुए राज्य की असीमित सर्वोच्चता को अस्वीकार किया |

► **8.4.4. एकलवाद बनाम बहुलवाद : सत्ता के केंद्रीकरण और विकेन्द्रीकरण का विवाद (Monism vs Pluralism : Dispute over Centralization and Decentralization of Power) :-** एकलवाद और बहुलवाद राजनीतिक सिद्धांत की दो महत्वपूर्ण धाराएँ हैं। दोनों राज्य की स्थिति, शक्ति के स्वरूप तथा समाज में विभिन्न संस्थाओं की भूमिका के संबंध में अलग-अलग विचार प्रस्तुत करती हैं।

1. राज्य की सर्वोच्चता का प्रश्न :–

एकलवाद के अनुसार राज्य समाज की सर्वोच्च संस्था है और उसके ऊपर कोई अन्य शक्ति नहीं होती। राज्य की इच्छा ही अंतिम मानी जाती है। इसके विपरीत बहुलवाद राज्य को महत्वपूर्ण संस्था तो मानता है, लेकिन उसे समाज की एकमात्र सर्वोच्च संस्था नहीं मानता। बहुलवाद के अनुसार समाज में कई संस्थाएँ समान रूप से महत्वपूर्ण होती हैं।

2. सत्ता का केंद्रीकरण और विकेन्द्रीकरण :–

एकलवाद सत्ता के केंद्रीकरण में विश्वास करता है। उसके अनुसार शासन की समस्त शक्तियाँ राज्य के हाथों में होनी चाहिए ताकि प्रशासन में एकता और स्थिरता बनी रहे। दूसरी ओर, बहुलवाद सत्ता के विकेन्द्रीकरण का समर्थन करता है और मानता है कि शक्ति विभिन्न संस्थाओं और संगठनों में विभाजित होनी चाहिए।

3. सामाजिक संस्थाओं की भूमिका:–

एकलवाद में परिवार, चर्च, श्रमिक संघ तथा अन्य सामाजिक संस्थाओं को राज्य के



अधीन माना जाता है। जबकि बहुलवाद के अनुसार ये संस्थाएँ समाज के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं और उनका स्वतंत्र अस्तित्व बना रहना चाहिए। राज्य का इन संस्थाओं पर पूर्ण नियंत्रण नहीं रह सकता।

4. व्यक्ति की स्वतंत्रता :–

एकलवाद के समर्थक मानते हैं कि राज्य की शक्ति मजबूत होने से समाज में व्यवस्था बनी रहती है। लेकिन बहुलवादियों का विचार है कि यदि सारी शक्ति केवल राज्य के पास हो, तो व्यक्ति की स्वतंत्रता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए वे विभिन्न संस्थाओं को अधिकार देने और शक्ति के वितरण पर बल देते हैं, जिससे कि नागरिकों की स्वतंत्रता सुरक्षित रह सके।

5. कानून और अधिकारों का स्रोत :–

एकलवाद के अनुसार कानून और अधिकारों का प्रमुख स्रोत राज्य है। राज्य जिन नियमों को मान्यता देता है, वही कानून का रूप ग्रहण करते हैं। दूसरी ओर, बहुलवाद का मत है कि समाज की परम्पराएँ, रीति-रिवाज, सामाजिक संस्थाएँ और विभिन्न संगठन भी कानून तथा अधिकारों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। इसलिए इनका महत्व भी स्वीकार किया जाना चाहिए।

6. प्रमुख विचारकों के मत :–

एकलवाद का समर्थन करने वाले प्रमुख विचारकों में हॉब्स और ऑस्टिन का नाम लिया जाता है। इन विचारकों ने राज्य की सर्वोच्च सत्ता मानते हुए उसकी शक्ति पर विशेष बल दिया। इसके विपरीत लास्की, बार्कर और गियरके जैसे विचारकों ने बहुलवादी दृष्टिकोण अपनाया | उनके अनुसार समाज में समूहों

और अन्य संस्थाओं की भी महत्वपूर्ण स्थान है, जिसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

7. शासन की प्रकृति :–

एकलवाद के अनुसार प्रभावी शासन के लिए सत्ता का अंतिम नियंत्रण राज्य के हाथों में होना आवश्यक है। इस दृष्टिकोण में प्रशासनिक एकता, नीति निर्माण में स्पष्टता तथा आदेशों के समान क्रियान्वयन पर विशेष बल दिया जाता है। इसके विपरीत बहुलवाद यह मानता है कि शासन केवल राज्य की गतिविधियों तक सीमित नहीं है, बल्कि समाज की विभिन्न संस्थाओं, संगठनों तथा समूहों की सहभागिता से शासन अधिक उत्तरदायी, प्रतिनिधिक और लोकतांत्रिक बनता है। इसलिए बहुलवाद निर्णय प्रक्रिया में व्यापक भागीदारी का समर्थन करता है।

8. विवाद का मूल आधार :–

एकलवाद और बहुलवाद के मूल विवाद संप्रभुता तथा सत्ता की अंतिम स्थिति को लेकर है। एकलवाद राज्य को सर्वोच्च, अविभाज्य और अंतिम सत्ता का धारक मानता है, जिसके ऊपर कोई अन्य संस्था अधिकार नहीं रखती। इसके विपरीत बहुलवाद इस धारणा को चुनौती देते हुए कहता है कि समाज में अनेक संस्थाएँ प्रभाव और अधिकार रखती हैं। इसलिए सत्ता को केवल राज्य में केन्द्रित करना उचित नहीं है। बहुलवादी विचारकों के अनुसार सामाजिक संतुलन, स्वतंत्रता और लोकतांत्रिक विकास के लिए शक्ति का विभिन्न संस्थाओं के मध्य वितरण आवश्यक है।

► **8.4.5. आधुनिक लोकतांत्रिक कल्याणकारी राज्यों में दोनों सिद्धांतों का समन्वय (Synthesis of Both Theories in Modern Democratic Welfare States) :-** आधुनिक लोकतांत्रिक कल्याणकारी राज्यों में न तो एकलवाद को पूर्ण रूप से स्वीकार किया गया है और न ही बहुलवाद को पूरी तरह अपनाया गया है। वर्तमान समय में राज्य की सर्वोच्चता को भी मान्यता दी जाती है और विभिन्न सामाजिक संस्थाओं के महत्व को भी स्वीकार किया जाता है। इसी कारण इन दोनों सिद्धांतों का व्यावहारिक समन्वय देखने को मिलता है।

1. राज्य की सर्वोच्चता की स्वीकृति :–

आधुनिक लोकतांत्रिक राज्यों में ऐसे विषय होते हैं जिनका संबंध पूरे राष्ट्र से होता है, जैसे राष्ट्रीय सुरक्षा, न्याय, विदेश नीति तथा कानून-व्यवस्था। इन मामलों में अंतिम निर्णय लेने का अधिकार राज्य के पास ही रहता है। यदि इन विषयों पर विभिन्न संस्थाओं को स्वतंत्र निर्णय लेने का अधिकार दे दिया जाए तो राष्ट्रीय एकता और प्रशासनिक व्यवस्था प्रभावित हो सकती है। इसलिए आधुनिक राज्य इन क्षेत्रों में अपनी सर्वोच्चता बनाए रखते हैं, जो एकलवादी विचारधारा के प्रभाव को दर्शाता है।

2. सामाजिक संस्थाओं का प्रभाव :–

आधुनिक कल्याणकारी राज्य यह स्वीकार करता है कि समाज का निर्माण केवल राज्य से नहीं होता। परिवार, श्रमिक संघ, सहकारी समितियाँ, धार्मिक

संगठन, शैक्षिक संस्थाएँ तथा गैर-सरकारी संगठन भी समाज के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये संस्थाएँ लोगों की आवश्यकताओं को समझती हैं और उनके हितों की रक्षा करती हैं। इसलिए राज्य इनके अस्तित्व, अधिकारों और कार्यों को मान्यता प्रदान करता है। यह बहुलवादी विचारधारा की प्रमुख विशेषता है।

3. सत्ता का संतुलित वितरण :– आधुनिक लोकतंत्र में सत्ता केवल केंद्र सरकार तक सीमित नहीं रहती। राज्य सरकारों तथा स्थानीय निकायों को भी अनेक अधिकार प्रदान किए जाते हैं। इससे प्रशासन अधिक प्रभावी और उत्तरदायी बनता है। साथ ही जनता की समस्याओं का समाधान स्थानीय स्तर पर संभव हो पाता है।

4. जनसहभागिता पर बल :–

लोकतांत्रिक कल्याणकारी राज्य में जनता को शासन प्रक्रिया का महत्वपूर्ण भाग माना जाता है। चुनाव, राजनीतिक दल और विभिन्न संगठन शासन को प्रभावित करते हैं। इससे शासन अधिक उत्तरदायी बनता है।

5. कल्याणकारी कार्यों में सहयोग :– जन कल्याण से जुड़े कार्यों में राज्य अकेले कार्य नहीं करता। शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में अनेक सामाजिक संस्थाएँ भी योगदान देती हैं। राज्य और समाज के बीच सहयोग की भावना विकसित होती है, जिससे योजनाओं का लाभ अधिक लोगों तक पहुँच पाता है।

► 8.5. अपनी प्रगति जाँचें (Check Your Progress) :-

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षिप्त रूप में दीजिए :–

1. ऑस्टिन के अनुसार कानून के मुख्य तत्व कौन से हैं?

2. बहुलवाद किसका समर्थन करता है?

3. एकलवाद किसका समर्थन करता है?

4. ऑस्टिन के संप्रभुता के सिद्धांत को प्रस्तुत कीजिए।

5. बहुलवाद के कोई दो मौलिक सिद्धांत लिखें।

6. ऑस्टिन के संप्रभुता के सिद्धांत की कोई दो आलोचनाएँ कीजिए।

7. जॉन ऑस्टिन ने अपनी संप्रभुता की व्याख्या किस प्रसिद्ध पुस्तक में प्रस्तुत की है?

8. ऑस्टिन के अनुसार कानून (Law) की सरलतम परिभाषा क्या है?

9. हेनरी मेन ने ऑस्टिन के सिद्धांत की आलोचना किस प्रकार की?

10. एकलवाद और बहुलवाद में संप्रभुता की दृष्टि से क्या अन्तर है?

11. संप्रभुता की अविभाज्यता से क्या अभिप्राय है?

12. "कानून संप्रभु का आदेश है" – व्याख्या कीजिए।

13. Lectures on Jurisprudence नामक पुस्तक किस विद्वान की है?

14. संप्रभुता के एकलवादी सिद्धांत के कोई दो लक्षण बताइए।

15. संप्रभुता के बहुलवादी सिद्धांत की दो विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

► 8.6. सारांश (Summary) :–

संप्रभुता के एकलवादी और बहुलवादी सिद्धांत राज्य की प्रकृति तथा शक्ति को समझाने के दो प्रमुख दृष्टिकोण हैं। एकलवादी सिद्धांत का सर्वाधिक व्यवस्थित प्रतिपादन जॉन ऑस्टिन ने किया। उनके अनुसार प्रत्येक स्वतंत्र राजनीतिक समाज में एक ऐसी सर्वोच्च सत्ता विद्यमान होती है जिसकी आज्ञा का पालन अधिकांश लोग करते हैं और जो स्वयं किसी अन्य सत्ता के अधीन नहीं होती। ऑस्टिन ने संप्रभुता को सर्वोच्च, अविभाज्य तथा असीमित शक्ति माना। उनके मत में कानून का वास्तविक स्रोत संप्रभु की आज्ञा है और राज्य की व्यवस्था इसी सर्वोच्च सत्ता पर आधारित रहती है। इस प्रकार एकलवादी सिद्धांत राज्य को समाज की सबसे महत्वपूर्ण और अंतिम शक्ति के रूप में स्थापित करता है। इस सिद्धांत का मुख्य उद्देश्य राज्य की सर्वोच्चता और राजनीतिक एकता को स्पष्ट करना था।

ऑस्टिन के विचारों के बाद में अनेक विद्वानों ने आलोचना की। सर हेनरी मेन ने ऐतिहासिक दृष्टिकोण के आधार पर यह तर्क दिया कि कानून का विकास केवल शासक की आज्ञाओं से नहीं हुआ है, बल्कि सामाजिक परम्पराओं, रीति-रिवाजों और ऐतिहासिक अनुभवों ने भी उसमें महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसी पृष्ठभूमि में बहुलवादी विचारधारा का विकास हुआ। लास्की, बार्कर, ड्यूगिट

तथा कोल जैसे विचारकों ने यह प्रतिपादित किया कि समाज केवल राज्य से नहीं बना है, बल्कि अनेक सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं से मिलकर निर्मित होता है। इसलिए राज्य को समाज की एकमात्र सर्वोच्च संस्था मानना उचित नहीं है। बहुलवादियों के अनुसार इन संस्थाओं का अपना स्वतंत्र अस्तित्व और महत्व होता है। उन्होंने व्यक्ति और समाज के जीवन में विभिन्न संगठनों की भूमिका पर विशेष बल दिया।

एकलवाद और बहुलवाद के बीच मुख्य विवाद सत्ता के केंद्रीकरण तथा विकेंद्रीकरण का है। जहाँ एकलवाद राज्य की सर्वोच्चता और शक्ति के केंद्रीकरण का समर्थन करता है, वहीं बहुलवाद विभिन्न संस्थाओं के बीच शक्ति के वितरण तथा उनकी स्वायत्तता पर बल देता है। आधुनिक लोकतांत्रिक राज्यों में इन दोनों दृष्टिकोणों का व्यावहारिक समन्वय दिखाई देता है। राज्य राष्ट्रीय सुरक्षा, न्याय तथा कानून-व्यवस्था जैसे क्षेत्रों में अपनी सर्वोच्च स्थिति बनाए रखता है, जबकि नागरिक संस्थाओं और विभिन्न सामाजिक संगठनों को भी पर्याप्त अधिकार और स्वतंत्रता प्रदान की जाती है। इस प्रकार आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था न तो पूर्णतः एकलवादी है और न ही पूर्णतः बहुलवादी, बल्कि दोनों के उपयोगी तत्वों का संतुलित समन्वय प्रस्तुत करती है। यही कारण है कि समकालीन लोकतांत्रिक प्रणालियों में दोनों सिद्धांतों की उपयोगिता स्वीकार की जाती है।

► 8.7. सूचक शब्द (Key Words) :-

एकलवाद, बहुलवाद, संप्रभुता, स्वायत्तता, सत्ता का विकेंद्रीकरण, सम्प्रभु का आदेश, संघ, सर्वोच्चता, ऐतिहासिक न्यायशास्त्र, सामाजिक संगठन।

1. एकलवाद (Monism): – राज्य में निहित सर्वोच्च अधिसत्ता एवं अंतिम संप्रभुता का सिद्धांत।

2. बहुलवाद (Pluralism): – वह विचारधारा जो राज्य के साथ अन्य सामाजिक संस्थाओं के महत्व को भी स्वीकार करती है।

3. संप्रभुता (Sovereignty): – राज्य की सर्वोच्च तथा अंतिम सत्ता।

4. स्वायत्तता (Autonomy): – अपने मामलों में स्वयं निर्णय लेने की स्वतंत्रता।

5. सत्ता का विकेंद्रीकरण (Decentralization of Power): – शक्तियों का विभिन्न स्तरों तथा संस्थाओं में बँटवारा ।

6. संप्रभु का आदेश (Command of Sovereign): – ऑस्टिन के अनुसार संप्रभु की आज्ञा ही कानून है।

7. संघ (Association): – किसी उद्देश्य से संगठित व्यक्तियों का समूह।

8. सर्वोच्चता (Supremacy): – अन्य सभी शक्तियों पर प्रभुत्व की स्थिति।

9. ऐतिहासिक न्यायशास्त्र (Historical Jurisprudence): – कानून को इतिहास, परंपराओं और सामाजिक प्रथाओं की उपज मानने वाला दृष्टिकोण।

10. सामाजिक संगठन (Social Organization): – समाज में व्यक्तियों, समूहों तथा संस्थाओं के बीच स्थापित संबंधों की व्यवस्थित व्यवस्था को सामाजिक संगठन कहा जाता है।

► 8.8. स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions):-

1. ऑस्टिन के प्रभुसत्ता के सिद्धांत की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।

2. संप्रभुता के एकलवादी सिद्धांत की विवेचना कीजिए तथा इसके उदय के कारणों का वर्णन कीजिए।

3. "कानून संप्रभु का आदेश है।" इस कथन की व्याख्या करते हुए ऑस्टिन की आलोचनाओं का उल्लेख कीजिए।

4. संप्रभुता के एकलवादी और बहुलवादी सिद्धांतों के मध्य अंतर स्पष्ट कीजिए।

5. आधुनिक लोकतांत्रिक कल्याणकारी राज्यों में एकलवाद और बहुलवाद के समन्वय का परीक्षण कीजिए।

6. "राज्य समाज के अनेक संघों में से केवल एक संघ है।" लास्की और बार्कर के विचारों के आलोक में इस कथन की समीक्षा कीजिए।

7. बहुलवाद के प्रमुख सिद्धांतों और मान्यताओं का विस्तार से विवेचन कीजिए।

8. संप्रभुता के एकलवादी सिद्धांत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का वर्णन करते हुए इसकी प्रमुख विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।

9. हेनरी मेन ने अपने ऐतिहासिक दृष्टिकोण के आधार पर ऑस्टिन के एकलवाद को किस प्रकार चुनौती दी? स्पष्ट कीजिए।

10. वैश्वीकरण और लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था के संदर्भ में एकलवाद तथा बहुलवाद की प्रासंगिकता का मूल्यांकन कीजिए।

11. क्या बहुलवाद संप्रभुता की पूरी तरह नष्ट कर देता है या केवल उसके विकेंद्रीकरण की बात करता है? अपने तर्क सहित स्पष्ट कीजिए।

12. संप्रभुता के बहुलवादी सिद्धांत की मुख्य विशेषताओं का वर्णन करें।

13. संप्रभुता के अद्वैतवादी सिद्धांत की विद्वानों द्वारा किन आधारों पर आलोचना की गई है? क्या आप इन विचारों से सहमत हैं?

14. बहुलवादियों ने किन-किन आधारों पर प्रभुसत्ता के एकलवादी सिद्धांत की आलोचना की है?

15. ऑस्टिन के वैधानिक संप्रभुता सिद्धांत (Legal Theory of Sovereignty) का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

► 8.9 अपनी प्रगति की जाँच करने के लिए उत्तर (Check Your Progress) :-

1. ऑस्टिन के अनुसार, कानून के मुख्य तत्व आदेश, कर्तव्य तथा दण्ड हैं। तीन तत्वों के आधार पर ही कानून की बाध्यकारी शक्ति स्थापित होती है।

2. बहुलवाद सत्ता के विकेन्द्रीकरण तथा विभिन्न सामाजिक संस्थाओं की स्वायत्तता का समर्थन करता है। यह राज्य की निरंकुश सर्वोच्चता को स्वीकार नहीं करता।

3. एकलवाद राज्य की सर्वोच्च, अविभाज्य और असीमित संप्रभुता का समर्थन करता है। इसके अनुसार राज्य ही सत्ता का अंतिम स्रोत है।

4. ऑस्टिन के अनुसार, राज्य में एक ऐसी सर्वोच्च सत्ता होती है जिसकी आज्ञाओं का सामान्यतः पालन किया जाता है और जो स्वयं किसी अन्य सत्ता के अधीन नहीं होती।

5. (i) राज्य समाज का एकमात्र महत्वपूर्ण संघ नहीं है।

(ii) समाज की विभिन्न संस्थाओं का अपना स्वतंत्र महत्व होता है।

6. (i) प्रत्येक राज्य में संप्रभु सत्ता को निश्चित रूप से पहचानना संभव नहीं है ।

(ii) कानून का स्रोत केवल संप्रभु की आज्ञा नहीं होती।

7. 'Lectures on Jurisprudence' पुस्तक में।

8. ऑस्टिन के अनुसार, "संप्रभु का आदेश ही कानून है |"

9. हेनरी मेन ने कहा कि कानून का विकास केवल आदेशों से नहीं, बल्कि प्रथाओं और परम्पराओं से भी होता है |

10. एकलवाद संप्रभुता को राज्य में केंद्रित मानता है, जबकि बहुलवाद विभिन्न सामाजिक संस्थाओं के महत्व को स्वीकार करता है।

11. इसका अर्थ है कि संप्रभुता को भागों में विभाजित नहीं किया जा सकता।

12. ऑस्टिन के अनुसार कानून वही है जिसे संप्रभु सत्ता आदेश के रूप में लागू करती है।

13. जॉन ऑस्टिन द्वारा।

14. (i) संप्रभुता सर्वोच्च होती है।

(ii) संप्रभुता अविभाज्य होती है।

15. (i) यह सामाजिक संस्थाओं के महत्व को स्वीकार करता है।

(ii) यह शक्ति के विकेंद्रीकरण पर बल देता है।

► 8.10. संदर्भ ग्रन्थ / निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings) :-

1. राजनीति शास्त्र के सिद्धांत – जे. सी. जौहरी

2. राजनीतिक सिद्धांत की रूपरेखा – ओ. पी. गाबा

3. आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत – एस. पी. वर्मा

4. Lectures on Jurisprudence – John Austin

5. Studies in the Problem of Sovereignty – Harold J. Laski

6. A Grammar of Politics – Harold J. Laski

7. Church, State and Study – Ernest Barker

8. The Pragmatic Revolt in Politics – W. Y. Elliott

9. राजनीति विज्ञान के मूल सिद्धांत – डॉ. वी. एल. फाड़िया

10. Political Theory: An Introduction – Andrew Heywood

11. Political Theory and the Modern State – David Held

12. Principles of Political Science – R. N. Gilchrist

NOTES

NOTES

NOTES